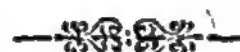
छात्रहितकारी पुस्तक-माला संख्या १९

फल, उनके गुण तथा उपयोग



फलों की उपयोगिता, उनके गुण तथा सात्विक, संयत और पूर्ण स्वस्थ जीवन बिताने के लिए अपने विषय की, अत्यन्त गवेषणा-पूर्ण पुस्तक।

लेखक—

श्री केशवकुमार ठाकुर

प्रकाशक—

छात्रहितकारी पुस्तक-माला,

दारागंज, प्रयाग।

संस्करण } सन् १९३३ ई० { स.

आर्य-समाज के स्तम्भ, गुरुकुल वृन्दावन के प्राण
अनुपम त्यागी, प्रसिद्ध वक्ता और फलाहार
के जबर्दस्त समर्थक

महात्मा नारायण स्वामी

के कर-कमलों

में

श्रद्धापूर्वक समर्पित

— केशवकुमार ठाकुर



महात्मा नारायण स्वामीजी ।

भूमिका

छात्र-हितकारी पुस्तक-माला के संचालक महोदय से, जिस समय इस पुस्तक के लिखने की आज्ञा मिली थी, वह समय मेरे लिए शान्त-जीवन का था, हाल में ही मैंने गार्हस्थ्य विषय पर एक पुस्तक लिख कर समाप्त की थी, इसलिए कुछ विश्राम करके, इस पुस्तक के लिखने का विचार किया।

पुस्तक की सहायता के लिये, मैं पुस्तकालयों, बड़ी-बड़ी दूकानों में भटकने लगा, किन्तु कहीं कुछ न मिला। कई एक डाक्टरों और वैद्यों से बातें कीं, कुछ आयुर्वेदिक ग्रन्थों और डाक्टरी की पुस्तकों के सम्बन्ध में, बातें मालूम हुईं, परन्तु साथ ही यह भी मालूम हुआ कि अँगरेज़ी में भी, इसके सम्बन्ध में कोई एक पुस्तक पूर्ण नहीं है। कुछ बातें और विशेषकर फलों के गुण डाक्टरी की पुस्तकों में मिलेंगे, जिनसे एक डाक्टर ही लाभ उठा सकता है। मैं स्वयं कोई डाक्टर नहीं था, बड़ी कठिनाई जान पड़ने लगी। माला के व्यवस्थापक श्री गणेश पाण्डेय तो बड़े उद्यमशील व्यक्ति हैं, उन्होंने इसके लिए अनेक मुझे मार्ग बताए और उन्होंने स्वयं संग्रह करके मुझे कुछ पुस्तकें दीं। हिन्दी तथा अन्य किसी प्रान्तिक भाषा में इसके सम्बन्ध में मौलिक कोई ग्रंथ था ही नहीं। मुझे अँगरेजी और संस्कृत की कुछ पुस्तकें मिलीं। अँगरेज़ी और बँगला में कुछ लेख भी ऐसे मिले, जिनको मैंने उपयोगी समझा।

इसपर भी हमारे पाण्डेय जी को संतोष न हुआ। पुस्तक के सम्बन्ध में, कितनी और कौन-कौन सी बातें, कहाँ और कैसे

मालूम होसकती हैं, इसके लिए, उन्होंने रात-रातभर सोचना और भिन्न-भिन्न लोगों से पता लगाना आरम्भ कर दिया। उनके खोजे हुए पतों पर दौड़ना मेरा काम था। फिर क्या था, फलों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने तथा उसके लिए सहायक ग्रन्थों के खोजने के लिए, आज यदि मुझे वनस्पति-शास्त्र के अनुभवी किसी अमेरिकन प्रोफ़ेसर के पास जाना पड़ा है, तो कल एग्रीकेलचर कालेज के प्रिन्सपल से मिलना निश्चित है! और परसों के लिए पाण्डेयजी ने कुछ बुकस्टाल्स के पते मेरे लिए ढूँढ़कर रख छोड़े!!

श्रीयुत पाण्डेयजी के इस उदार परिश्रम के लिए मैं आभारी हूँ, किन्तु इस दौड़-धूप से जो लाभ होना चाहिए था, न हुआ। पुस्तक के कुछ अंशों को पूर्ण करने के लिए, कहीं कुछ आधार न मिला। इसका कुछ और भी कारण है और वह यह कि इस प्रकार की पुस्तक लिखने के लिए वर्षों के खोज की आवश्यकता होती है। इस नाते से यह पुस्तक जल्दी लिखी गई। इस प्रकार की पुस्तकों में साहित्यक रचना नहीं होती, केवल खोज और अनुसन्धान की बातें होती हैं। पुस्तक लेखक इस प्रकार की बातों में, अधिकतर क्या भूलें करते हैं, उसपर प्रकाश डालते हुए एक अनुभवी अँग्रेज़ ने जो मुझसे बातें की, उनका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने बताया कि जो नियम और उपनियम, किसी बात के लिए योरप में निश्चित् किये गये हैं, वे केवल योरप के लिए होते हैं, किन्तु उन्हीं बातों पर लिखने के लिए भारतवर्ष के हिन्दी या बँगला के लेखक, उन्हीं नियमों का उल्लेख करके पुस्तकों के पन्ने भर देते हैं, ऐसा करने से प्रायः बड़ी भूलें हो जाती हैं। किसी एक वृक्षको लगाने के लिए योरप में कुछ बातें निश्चित की गईं, उनको हमने मालूम किया और उन्हीं के आधार पर इस देश में, उस पौदे को लगाया।

ो-चार दिनों में वह पौदा सूख गया! कारण स्पष्ट है। वे
ियम जिस मिट्टी, वायु, जल और मौसिम के आधार पर निश्चित
िये गए थे, वह तो यहाँ सब के सब उलटे हैं, फिर वे नियम
ैसे चल सकते हैं! न तो वह यहाँ पर मिट्टी है, न वह जल है
ौर न वह वायु है, फिर वह नियम क्या कर सकता है? बात
ह है कि सारी बातें अनुभव और परीक्षा पर निर्भर हैं!

इसी आधार पर, फलों के गुणों के सम्बन्ध में, बड़ी कठि-
ाई उठानी पड़ी है। वैद्यक, यूनानी और डाक्टरी के भिन्नभिन्न
तों को लेकर, एक-एक फल पर पर्याप्त रूप से लिखा गया है।
ससे कहीं-कहीं पर, एक ही फल पर मत वैषम्य हो गया है,
स विषमता को दूर करने के लिए मेरे पास कोई साधन न था।

साधारणतया पाठक इस विषय से अनभिज्ञ होते हैं, उनको किसी प्रकार की असावधानी न हो, इसके लिए खूब प्रयत्न किया गया है, फिर भी जो त्रुटियाँ हैं, उनके सम्बन्ध में अपने अनुभवी पाठकों, उदार लेखकों और समालोचकों से आशा है कि वे उनके सम्बन्ध में लेखक और प्रकाशक को अपरिचित न रहने देंगे और उनके परिचित कराने पर, पुस्तक के दूसरे संस्करण में उनकी पूर्ति भी कर दी जायगी!

पुस्तक के विषय के प्रेमी पाठकों से निवेदन है कि वे इस को प्रारम्भ से लेकर अन्त तक, एक बार ध्यानपूर्वक अवश्य पढ़ जाँय। इसके बाद भी, यदि उनके मनोभावों पर, आहार और स्वास्थ्य के सम्बन्ध में, सात्विक जीवन का कोई प्रभाव न पड़े तो उन्हें समझ लेना चाहिये कि पुस्तक के विषय के भावों को ठीक-ठीक प्रदर्शन करने में लेखक असमर्थ रहा।

विनीत—

केशवकुमार ठाकुर

कृतज्ञता-ज्ञापन

पुस्तक लिखने में, अपने अनुभव और विचारों के साथ-साथ, जिन पुस्तकों से सहायता ली है अथवा जिनके देखने की आवश्यकता पड़ी है, उनकी तालिका नीचे दी जाती है। जिन महानुभावों ने पुस्तकें देकर अथवा, अपने अनुभव बताकर सहायता की है, उनकी उदारता के लिए, हृदय से आभार!

पुस्तकों के नाम

१—मि० ए० ई० पावल की आहार-विषक पुस्तक
२—द्रव्य-गुण (बँगला पुस्तक)
३—Guide to health (महात्मा गाँधी की पुस्तक)
४—The new science of healing में फलों के सम्बन्ध में मि० लुई कुहनी के विचार
५—Fruit diet (एक डाक्टर की लिखी हुई अँगरेज़ी पुस्तक)
६—शालिग्राम निघंटु (प्रस्तुत विषय पर संस्कृत का सबसे बड़ा ग्रंथ)
७—मुस्तानुलमुफ़रिदात (प्रस्तुत विषय पर यूनानी की पुस्तक)
८—श्री शंकरदास जी शास्त्री पदे का 'आर्यभिषक्'
९—फलों के सम्बन्ध में अँगरेज़ी और बँगला के कुछ लेख

—लेखक

विषय-सूची

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

फल, उनके गुण तथा उपयोग



पहला अध्याय



जीवन-शक्ति

रेलगाड़ी को छोटे और बड़े-सभी जानते हैं, यदि उसके सम्बन्ध में प्रश्न किया जाय कि रेलगाड़ी की शक्ति क्या है? तो प्रायः सभी लोग संदिग्ध हो उठेंगे! वे सोचने लगेंगे, रेलगाड़ी की शक्ति क्या हो सकती है। यदि इस प्रश्न के स्थान पर पूछा जाय कि रेलगाड़ी क्या खाती है तो सभी लोग कह उठेंगे कि कोयला और पानी। अब प्रश्न यह है कि यदि उसको कोयला और पानी न दिया जाय तो? सभी लोग कहेंगे, तो वह फिर चल न सकेगी। इस प्रकार, रेलगाड़ी की शक्ति क्या है, इस प्रश्न का उत्तर निकला, उसका भोजन कोयला और पानी। यदि उसका भोजन उसको न दिया जाय तो रेलगाड़ी में न तो शक्ति है और न उसमें कोई पुरुषार्थ है! उसका भोजन ही उसकी शक्ति है—उसकी खुराक ही उसका पुरुषार्थ है! ठीक यही अवस्था हमारे जीवन की है।

हममें से प्रत्येक व्यक्ति भोजन करता है, छोटे और बड़े—सभी को अपनी अवस्था के अनुकूल भोजन की आवश्यकता होती है। जिस दिन बालक पैदा होता है, पैदा होने के साथ ही

उसको भूख की व्यथा होती है। जो कुछ वह खाता है, उसी से उसमें चैतन्य शक्ति उत्पन्न होती है। इस बात से यह स्पष्ट होता है कि हमारी जीवन-शक्ति हमारा भोजन है। परन्तु वह भोजन क्या है, इस बात के जानने की आवश्यकता है। रेलगाड़ी को खाने के लिए कोयला और पानी दिया जाता है, किन्तु यह प्रश्न यहीं हल नहीं हो जाता। वह कोयला कौन-सा हो सकता है यह जानने की आवश्यकता होती है। कोई भी कोयला, उसको आवश्यकरूप में शक्ति और सहायता नहीं पहुँचा सकता। और इसीलिए प्रत्येक कोयला उसमें प्रयोग नहीं किया जाता। इस बात को सभी जानते हैं कि रेलगाड़ी के इंजन में पत्थर का कोयला लगता है, यदि उसमें, इसके स्थान पर साधारण और असाधारण लकड़ी का कोयला प्रयोग किया जाय तो इंजन, रेलगाड़ी के संचालन में अनेक व्याधियों का अनुभव करेगा। यही अवस्था हमारे जीवन की भी है। हमको भोजन की आवश्यकता तो है ही, परन्तु हमारे लिए क्या भोजन हो सकता है—हमारी खुराक़ क्या है, यह एक अलग प्रश्न है। यह प्रश्न इतना साधारण नहीं है जितना लोग समझ लेते हैं और न इतना अनावश्यक है जितना प्रायः लोग अनुभव करते हैं।

हमारे जीवन का सारा सुख और दुःख, हमारे शरीर के स्वास्थ्य और पुरुषार्थ पर निर्भर है। जो जितना ही स्वस्थ और पुरुषार्थी है, उतना ही वह सुखी और सन्तुष्ट है। रुपया पैसा, धन-दौलत, आदि संसार की समस्त विभूतियाँ अस्वस्थ और पुरुषार्थ हीन को सुखी नहीं बना सकतीं। इसलिए इस विषय का जानना और उसकी विवेचना करना जितना आवश्यक है उतना आवश्यक और कोई भी विवेचन नहीं हो सकता। हमारा भोजन क्या है, इसके सम्बन्ध में, आगे चलकर, स्वतन्त्र रूप से विवेचन किया जायगा, किन्तु यहाँ पर केवल यह बता देना

बहुत आवश्यक है कि समाज में इस प्रकार के मनुष्य बहुत कम मिलेंगे जिनको अपने भोजन का यथोचित ज्ञान हो।

समाज की इस अवस्था का कारण क्या है? यह प्रश्न हमारे सामने है और बहुत आवश्यक है। प्रकृति ने संसार के समस्त प्राणियों को इस प्रकार का ज्ञान प्रदान किया है जिससे किसी भी प्राणी को अपने भोजन का ज्ञान प्राप्त करने के लिए किसी से शिक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती। यह सब होने पर भी मनुष्य को यह जानने की आवश्यकता है कि हमारा वास्तविक भोजन क्या है। सभी लोग यह पढ़कर विस्मित होंगे कि जिस ज्ञान की आवश्यकता संसार में किसी भी प्राणी को नहीं है, उसकी आवश्यकता मनुष्य-जाति को क्यों है? उनका ऐसा सोचना आश्चर्यजनक नहीं है। इसलिए कि जो ऐसा सोचेंगे, वे तो यही जानते हैं कि मनुष्य तो समस्त प्राणियों की अपेक्षा ज्ञान सम्पन्न है, फिर उसको किसी बात के जानने की आवश्यकता क्या है और विशेषकर, उन बातों के लिए, जिनको सभी प्राणी, स्वभावतः जानते और जिनके सम्बन्ध की जानकारी रखते हैं।

यह सब ठीक होते हुए भी बात कुछ और है। जिन बातों का ज्ञान प्रकृति ने स्वभावतः समस्त प्राणियों को प्रदान किया है, उनसे मनुष्य जाति किसी प्रकार वंचित नहीं रखी गई किन्तु मनुष्य-जाति ने स्वयं अपने आपको उन जानकारियों से वंचित कर रखा है! यह सुनकर किसी को आश्चर्य न करना चाहिए, मनुष्य वंचित हुआ है, सभ्यता के प्रमाद में! अप्राकृतिक उन्माद में! यह प्रमाद और उन्माद क्या हैं, यहाँ पर इसके सम्बन्ध में कुछ लिखना आवश्यक है।

मानव समाज की सभ्यता का विकास, प्रकृति के विरुद्ध

हुआ है, इस बात को संसार के प्रायः सभी महान पुरुष स्वीकार करते हैं, किन्तु इसके सम्बन्ध में हमें यहाँ पर किसी प्रकार की विवेचना नहीं करनी। और यदि करें तो वह यहाँ पर अप्रासंगिक होगी। बताना केवल यह है कि उस अप्राकृतिक सभ्यता के विकास में, मनुष्य अपने नैसर्गिक गुणोंको भी भूल बैठा है, यह किसी प्रकार अस्वीकार नहीं किया जा सकता। प्राणविज्ञान - विशारदों ने भिन्न-भिन्न प्राणियों के सम्बन्ध में जो अनुभव किया है, उनका कहना है कि सृष्टि के सभी प्राणियों को अपने जीवन की आवश्यक बातों का स्वभावतः ज्ञान होता है। जिस प्राणि का जो भोजन होता है, वह उसके अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु को नहीं खाता और सूँघ कर छोड़ देता है। प्राणि-विज्ञान ने यह साबित किया है कि सभी प्राणियों की सभी बातें—उनका खाना-पीना, जीवन का व्यवहार-बर्ताव, रहन-सहन, एक-सा नहीं होता। किसी एक प्राणी का जो आहार हो सकता है, दूसरा प्राणी उससे भिन्न पाया जाता है, यह विभिन्नता बहुत विस्तार के रूप में पायी जाती है, आश्चर्य की बात तो यह है कि सभी को अपनी-अपनी इन बातों का यथोचित ज्ञान होता है। प्रकृति ने इन प्राणियों की नाक में घ्राणशक्ति की एक विशेषता प्रदान की है जिसके द्वारा वे सभी अपना-अपना भोजन-पदार्थ पहचान लेते हैं। जो पदार्थ उनके खाने के नहीं होते उनको वे केवल सूँघकर छोड़ देते हैं। इस प्रकार की बातें, भिन्न-भिन्न प्राणियों के जीवन का थोड़ा-सा भी अध्ययन करने से जानी जा सकती हैं।

संसार में खाने के क्या-क्या पदार्थ हो सकते हैं और वे कितने हो सकते हैं, यह बताना असम्भव है। मिट्टी, लकड़ी, फल, पत्ती, माँस, मदिरा, दूध, घी, आदि संसार में जितने भी पदार्थ देखने में आते हैं, वे सभी किसी न किसी प्राणी के

के भोजन में प्रयोग किये जाते हैं। इनमें से किसी के सम्बन्ध में भी यह नहीं कहा जा सकता कि वह उत्तम है, वह ख़राब है, वह शक्ति-वर्द्धक है और वह हानिकारक है। वास्तव में जो जिसका भोज्य पदार्थ है वह उसी के लिए हितकर, शक्ति-वर्द्धक और लाभकारक है। निरर्थक पदार्थों में सब से अधिक मिट्टी ही मानी जा सकती है किन्तु वह मिट्टी कितने ही प्राणियों और जीवों का भोज्य पदार्थ है और उसी से उनको जीवन प्राप्त होता है। घृत अमृत पदार्थों में गिना जाता है किन्तु उसकी गंध मात्र से कितने ही जीवों की मृत्यु होती है। इसीलिए कोई एक पदार्थ, सभी के लिए उत्तम और सभी के लिए ख़राब नहीं हो सकता।

यहाँ पर बताना यह था कि अपने नैसर्गिक गुणों के भूल जाने के कारण, मनुष्य-जाति अपने भोजनों की व्यवस्था को भी भुला बैठी है। यह ऊपर बताया जा चुका है कि इस प्रकार का ज्ञान प्रकृति ने स्वभावतः सब को प्रदान किया है। उन समस्त नैसर्गिक गुणों के मानव जाति से अन्तर्हित हो जाने का कारण यह है कि मनुष्य, अपने जीवन में विकास की ओर आगे बढ़ रहा है, वह जो कुछ जानता है उसी पर उसे सन्तोष नहीं है। जो शक्तियां उसमें विद्यमान हैं, उन्हीं को वह अपने लिए पर्याप्त नहीं समझता। इन बातों को लेकर उसने अपने जीवन में इतना उलट-पलट कर डाला है जिससे वह प्राकृतिक जीवन से बहुत दूर हो गया है और अनेक बातों में उसने अपने नैसर्गिक गुणों और पुरुषार्थों को खो दिया है। विषयान्तर हो जाने के डर से, अधिक विस्तार में न जाकर यदि भोजन के सम्बन्ध में ही विचार किया जाय तो इन बातों का स्पष्टीकरण हो जाता है। मांस-मदिरा से मनुष्य को स्वाभाविक अरुचि और घृणा होती है। जिन परिवारों में मांस खाया जाता है, उन परिवारों के

बालक-बालिकाएँ और स्त्रियाँ असामान्य रूप से उसका विरोध करती हैं और अपनी घृणा का असाधारण परिचय देती हैं। इन अरुचि और घृणा रखने वालों में से ही कुछ आगे चल कर इन घृण्य वस्तुओं का उपयोग करना सीखते हैं। जो पदार्थ जिन प्राणियों के भोजन होते हैं, प्रत्येक अवस्था में उनको उनके खाने का ज्ञान होता है। किसी भी प्राणी के छोटे-छोटे बच्चों के आगे जब वे पदार्थ डाल दिए जाते हैं जिनको वे खा सकते हैं, तो वे तुरन्त खा जाते हैं और जब उनको भोज्य पदार्थों के विरुद्ध कोई चीज़ खाने को दी जाती है, तो वे उसको सूँघकर छोड़ देते हैं, ये बातें पशुओं, पक्षियों, जानवरों और भिन्न-भिन्न प्राणियों में असाधारण रूप से पायी जाती हैं। मनुष्य जिन पदार्थों के खाने का स्वाभाविक अभ्यासी नहीं होता, वे पदार्थ वास्तव में उसके लिए भोजन नहीं होते, परन्तु वह उनके खाने का अभ्यासी बनता है। इसका परिणाम वही होता है जो कुछ होना चाहिये। इन बातों के पुष्टिकरण में एक बात का स्मरण दिलाना आवश्यक जान पड़ता है। समाज में छोटे और बड़े, नीच और ऊँच—सभी लोग सुनते हैं, अनुभव करते हैं और जानते हैं कि उनके पूर्वज शारीरिक शक्ति और स्वास्थ्य में उनसे बहुत आगे थे और यही बात वे पूर्वज भी अपने पूर्वजों के सम्बन्ध में समझते और जानते थे। समाज की इस धारणा का यह अर्थ है कि मनुष्य का शारीरिक स्वास्थ्य और पुरुषार्थ उत्तरोत्तर नष्ट हो रहा है और इस अभाव का गम्भीर सम्पर्क हमारी सभ्यता से है। जितना ही हम प्राकृतिक जीवन के औचित्य से दूर होते जाते हैं, उतना ही हम में स्वास्थ्य और पुरुषार्थ का अभाव होता जाता है।

ऊपर यह बताया जा चुका है कि हमको भोजन की आवश्यकता है, भोजन ही हमारी जीवन-शक्ति है, भोजन ही हमारा

बल है और वही हमारा पुरुषार्थ है, यदि हमें भोजन न मिले तो हम किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकते। इसी प्रकार हमको यह भी जानने की ज़रूरत है कि हमारा भोजन वास्तव में क्या है। भोजन का प्रश्न प्रत्येक प्राणी के लिए इतना साधारण और व्यापक है कि उसके सम्बन्ध में उसको कोई बात अज्ञेय नहीं मालूम होती। वास्तव में अज्ञेय होना भी न चाहिए, और इसीलिए साधारणतया कोई भी व्यक्ति इसके सम्बन्ध की बातें जानने के लिए कुतूहल नहीं हुआ करता। किन्तु मनुष्य जीवन-पथ से इतना विपथ हो चुका है, जिसकी कोई सीमा नहीं है। इसीलिए उसको इन बातों को विशेष रूप से जानने की आवश्यकता है।

इस विषय पर संसार के विभिन्न देशीय विद्वानों ने समय-समय पर बहुत कुछ विचार किया है और समाज की वर्तमान अवस्था पर बहुत असन्तोष अनुभव किया है। इस दुरवस्था के मिटाने के लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया है। मनुष्य-जाति का वास्तविक आहार क्या है, इसके सम्बन्ध में एक-एक बात पर यहाँ भली-भाँति विवेचन किया जायगा।

इस शीर्षक की पंक्तियों में केवल यह बताना था कि हमें अपनी जीवन-शक्ति के लिए भोजन की आवश्यकता है और हमारा भोजन क्या है, यह सब जानने की आवश्यकता है। इसके आगे चलकर जो विवेचना की जायगी, वह इस विषय के एक-एक अंग को पृथक-पृथक स्पष्ट करेगी। इस प्रकार का यथावत् ज्ञान होने पर ही हम अपनी जीवन शक्ति की यथेष्ट रूप में रक्षा कर सकेंगे, अन्यथा रोग-शोकपूर्ण संसार का कटु अनुभव लेकर एक दिन असमय यहाँ से विदा हो जाना पड़ेगा। जीवन का सुख तो जीवन को भली भाँति समझ सकने पर ही मिल सकता है।

हमारे भोजन के पदार्थ

पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है कि भोजन ही हमारा जीवन है, यदि भोजन हमें न मिले तो हम किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकते। इसके साथ ही यह भी बताया जा चुका है कि साधारणतया जो भोजन और उसके पदार्थ हमारे खाने में उपयोग हुआ करते हैं, वे पदार्थ वास्तव में हमारे भोजन के नहीं हैं। यहाँ पर भोजन के सम्बन्ध में कुछ विस्तार के साथ लिखकर इस बात का विचार करना है कि प्रकृति ने, किस प्रकार का भोजन करने के योग्य हमारे शरीर की रचना की है।

भोजन के सम्बन्ध में सब से पूर्व यह जानने की आवश्यकता है कि जो भोजन जितना शीघ्र पच सकता है, वही उतना लाभदायक होता है। किन्तु इस बात का भ्रम न केवल सर्व-साधारण में वरन् समाज के समझदार, विचारशील व्यक्तियों में भी अधिक से अधिक परिमाण में पाया जाता है कि अमुक पदार्थ अधिक बल और रक्त पैदा करने वाले हैं, इस भ्रम के कारण समस्त व्यक्ति उसी प्रकार के भोजन खाने और खिलाने के अभ्यासी होते हैं। इस छोटे से भ्रम के कारण, मनुष्य के स्वास्थ्य को बड़ी हानि पहुँचती है। जिन वस्तुओं में इस प्रकार के गुण पाये जाते हैं, वे कितने भारी और अपाचक होते हैं, सामान्यतः इस बात का कभी विचार भी नहीं किया जाता। होता यह है कि उन पदार्थों से बने हुए भोजन को पचने के लिए जितना समय चाहिये, उतना समय नहीं मिलता, ऐसी अवस्था में लाभ के स्थान पर हानि ही होती है। जब तक एक बार का खाया हुआ भोजन भलीभाँति पच न जाय तब तक

दूसरी बार कदापि न खाना चाहिये। किन्तु हम लोग भूख के लिए भोजन नहीं करते, भोजन करने की आवश्यकता और व्यवस्था ही कुछ और है। दोपहर को जो हमने भोजन किया है वह पूर्णरूप से पचा है या नहीं, यह जानने की कोशिश नहीं होती, किन्तु होता यह है कि सायंकाल भोजन का समय होने पर, भोजन करना पड़ता है। यदि दोपहर को इस प्रकार के भोजन किए गए हैं जो सायंकाल तक पूर्णरूप से नहीं पचे तो उसको बिना पचाए, भोजन करना, शरीर के लिए रोग का निमंत्रण देना है।

शरीर में कोई भी रोग अकारण नहीं हुआ करता और न उसके पैदा होने का कोई ईश्वरीय कारण होता है। उसके पैदा होने का एकमात्र कारण हमारे जीवन की अव्यवस्था है। हमें थोड़ी-सी बुद्धि से काम लेना चाहिए और समझना चाहिए कि हम जो खाना खाते हैं, वह भूख के लिए, न कि भोजन का समय हो जाने के लिए।

जो पदार्थ बहुत भारी होते हैं, वे अत्यन्त अपाचक भी होते हैं, उन अपाचक और भारी वस्तुओं की अपेक्षा हलके भोजन कई बार खाये जा सकते हैं और फिर भी वे पच सकते हैं। ऐसी अवस्था में यदि वे भारी पदार्थ ठीक तौर पर पचाए भी जा सकें तो दोनों प्रकार के आहारों में कोई वैषम्य उपस्थित नहीं होता। परन्तु ये सब बातें सभी के लिए एक-सी नहीं हैं। सभी की प्रकृति और खाने पीने की शक्तियों में अन्तर होता है, इस प्रकृति और शक्ति के अनुकूल ही भोजन सुखकर, लाभकर और उपयोगी होता है।

प्रत्येक प्राणी का वही भोजन है जिसका अपना रूप, आकार और स्वाद खाने वाले के लिए रुचिकर प्रतीत होता है। वही उसके लिए पाचक होता है, और उसके जीवन को शक्ति देने

वाला होता है। जो पदार्थ आग में पकाकर, भिन्न-भिन्न प्रकार के मसाले लगाकर और घृत में भूनकर बनाए जाते हैं, वे, भोजन खाने वालों के लिए किसी प्रकार उतने लाभदायक नहीं होते जितने कि असली रूप में खाये जाने वाले पदार्थ हो सकते हैं। कोई भी पदार्थ या उससे बना हुआ भोजन जब आग में पकाया जाता है अथवा भूना जाता है तो उसमें जीवन-शक्ति पैदा करने वाला जो अंश होता है वह जलकर नष्ट हो जाता है और इसके बाद भी जब अनेक प्रकार के मसालों का सम्मिश्रण किया जाता है, तो वे भोजन पाचन-क्रिया के लिए बहुत कठोर हो जाते हैं, उनका यह अपाचन-गुण, खाने वाले के लिए हानिकारक हो जाता है। जो भोजन रसेदार बनाए जाते हैं, वे कठिनाई के साथ पचने वाले होते हैं। उनके ठीक-ठीक न पचने पर पेट के विभिन्न रोग उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार पेट की ही खराबी समस्त शरीर के स्वास्थ्य बिगड़ने और उसको रोगी बनाने की कारण होती है।

जो भोजन अथवा पदार्थ अपने असली रूप में घृणा-जनक होते हैं, वे हमारे लिए कभी भी लाभदायक नहीं होते और इस प्रकार के पदार्थों और भोजनों में सब से अधिक हानिकारक माँस होता है। प्रकृति ने प्रत्येक प्राणी को उसके भोजन अथवा भोज्य पदार्थों के प्रति सहज ही रुचिकारक प्रवृत्ति उत्पन्न की है, जिसका जो भोजन नहीं होता, उसके प्रति सहज ही उसमें अरुचि का भाव उत्पन्न होता है। संसार का कोई भी जीव अपनी भोज्य वस्तुओं के अतिरिक्त किसी वस्तु को ग्रहण नहीं कर सकता। मनुष्य की स्वाभाविक बुद्धि और रुचि कभी भी माँस को स्वीकार नहीं कर सकती। सर्वसाधारण को उस पर समान रूप से अरुचि और घृणा होती है। समय और संयोग पाकर जो लोग माँस खाने लगते हैं, उनको भी माँस के

असली रूप पर कितनी घृणा और अरुचि होती है, यह किसी को बताने की आवश्यकता नहीं।

प्रत्येक पदार्थ पक जाने की अपेक्षा, कच्चा अधिक पाचक और जीवन-शक्ति देने वाला होता है। परंतु यह खेद की बात है कि सर्वसाधारण में कच्चे पदार्थों के खाने का अभ्यास कम पाया जाता है। बहुत लोगों में तो इस बात का मिथ्या ज्ञान पाया जाता है कि कच्चे पदार्थ हानिकारक होते हैं किन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं है। अनाज, जो साधारणतया हमारे खाने के काम में आता है, अपने स्वाभाविक रूप में अधिक पाचक होता है। प्रत्येक अनाज कच्चा समूचा चबा-चबाकर खाने से जो जीवन-शक्ति प्राप्त हो सकती है वह शक्ति उस अनाज के पीस डालने और आग पर पकाने या भूनने से कदापि नहीं प्राप्त हो सकती। उनके समूचे दाने को चबा-चबाकर खाने से उनमें पाचन-क्रिया उत्पन्न हो जाती है। इस पाचन-क्रिया के उत्पन्न हो जाने का कारण उनको मुख में अधिक देर तक चबाना है। कोई भी भोजन मुँह में जितनी देर तक चबा-कर निगला जाता है, उतना ही वह शीघ्र पाचक हो जाता है। आटे की भूसी छानकर, रोटी बनाने के पूर्व ही अलग कर दी जाती है, वह, उस रोटी का एक बहुत आवश्यक अंग होता है, परन्तु यह भूल समाज में बहुत पाई जाती है। यह छनी हुई भूसी जो उस अनाज का छिलका होती है, उसके साथ बने हुए भोजन के पचाने में बहुत बड़ी सहायता करती है। लोग इस छिलके को निकाल कर अलग कर देते हैं, इसलिए कि वे उसको बेकाम समझते हैं किन्तु उनको समझना चाहिये कि उस छिलके के निकल जाने से, अनाज का गूदा भाग, जो महीन आटे के रूप में मिल जाता है, उस अनाज के गुणों को अनेक अंशों में खो देता है।

इस प्रकार खाने के सम्बन्ध में दो प्रधान अव्यवस्थाएँ हमारे सामने हैं। पहली अव्यवस्था यह है कि जो पदार्थ हमारे खाने के नहीं हैं, उनके खाने की व्यवस्था अथवा प्रथा का होना। माँस, मदिरा और मादक पदार्थ, मनुष्य का भोजन नहीं है और इस बात का इससे अधिक उत्तम और क्या प्रमाण हो सकता है कि मनुष्य स्वभावतः उससे अरुचि और घृणा करता है। छोटे-छोटे बालक और बालिकाएँ, जिनका स्वभाविक ज्ञान नष्ट नहीं हुआ, माँस और मदिरा जैसे पदार्थों का नाम सुनते ही अत्यन्त घृणा के साथ मुँह बनाती हैं, उनके उस समय के भाव यह प्रकट करते हैं कि वे इन वस्तुओं को ग्रहण करने के योग्य नहीं समझतीं। किन्तु उन्हीं के सामने यदि दूध, मक्खन अथवा किसी फल का नाम ले दिया जाय तो वे बालक और बालिकाएँ उसके लिए कातर और उत्सुक हो उठेंगी। इसका तो यही अर्थ होता है कि उनकी स्वाभाविक बुद्धि यह बताती है कि अमुक वस्तुएँ उनके खाने के योग्य हैं और अमुक नहीं।

दूसरी अवस्था यह है कि जो पदार्थ हम खा भी सकते हैं उनके खाने के पूर्व, उनके असली रूप और गुण को नष्ट कर डालते हैं, इसका यह फल होता है कि उनसे जो लाभ होना चाहिये वह नहीं होता और बहुत अंशों में उनसे हानि ही होती है। इन दोनों अव्यवस्थाओं से बचने के लिए जो वास्तविक हमारे जीवन का भोजन है, उसके प्रति हमारा ध्यान नहीं है। प्रकृति ने भिन्न-भिन्न प्राणियों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थों की व्यवस्था की है, इस प्रकार जो पदार्थ, जिसके लिए निर्माण किया है, उसी के योग्य उसके शरीर का आकार-प्रकार और यंत्र निर्माण किया है। अस्तु, हमारे शरीर की अवस्था क्या है और हमारे जीवन का प्राकृतिक भोजन क्या है, इस बात का सूक्ष्म-रूप से विवेचन करना है।

प्रकृति के नियम अत्यन्त सरल, सुबोध और अपने आप प्रतिपादित होनेवाले हैं किन्तु उनकी स्वाभाविकता जहाँ तोड़ी-मरोड़ी जाती है, वहाँ कुछ का कुछ होना अवश्यम्भावी है। जो वृक्ष और पौदे जहाँ—जिस ज़मीन या मिट्टी से अपने लिए खाना प्राप्त कर सकते हैं, उसी प्रकार की मिट्टी वाली भूमि में उनका जन्म होता है, उनके भोजन का प्रबन्ध किसी को करना नहीं पड़ता। वे स्वयं अपनी आवश्यकता पूरी कर लेते हैं। किन्तु जब कोई वृक्ष दूसरी प्रकार की मिट्टी वाली भूमि में ले जाकर लगाया जाता है, तो वह सूख कर मुरझा जाता है, इसलिए कि उस मिट्टी से उसको अपने योग्य खुराक नहीं मिलती। उसका यह अर्थ नहीं है कि पौदों को खुराक पहुँचाने वाले उस मिट्टी में गुण नहीं थे, गुण थे, उसमें वृक्षों के लायक भोजन के अंश भी थे, परन्तु वृक्षों में अन्तर है। सभी वृक्षों के लिए एक ही प्रकार की खुराक आवश्यक नहीं होती। समुद्र के किनारे जो वृक्ष वहाँ की नमकीन मिट्टी में खूब हरे-भरे रहते हैं और फलते-फूलते हैं, वे अन्यत्र कहीं, किसी दूसरे प्रकार की मिट्टी में हरे-भरे नहीं रह सकते। कारण स्पष्ट है कि उनके लिए जो भोजन और खुराक के पदार्थ, उस मिट्टी से प्राप्त होते हैं, वे दूसरी मिट्टी से नहीं प्राप्त हो सकते। इससे भी अधिक सुन्दर और आश्चर्य की बात यह है कि वे वृक्ष उसी भूमि में पैदा होते हैं जो उनके लिए अनुकूल होती है। प्रकृति का यह नियम कितना मनोहर और सुबोध है। अब देखना यह है कि वृक्षों के भीतर अर्थात् एक ही जाति में इतना अन्तर पाया जाता है तब दूसरी के लिए क्या कहना है।

समस्त जीवों के सम्बन्ध में ये बातें विभिन्नता रखती हैं। सृष्टि के समस्त जीवों को, उनकी भोजन सम्बन्धी प्रकृति में, दो भागों में बाँटा जा सकता है। कुछ तो माँस-भोजी होते हैं

और कुछ शाक-भोजी। तीसरी एक और श्रेणी उन लोगों की हो सकती है जो मांस और शाक दोनों के अभ्यासी होते हैं परन्तु थोड़ी-सी गम्भीर आलोचना करने से मालूम होगा कि उनके खाने के पदार्थ, कोई तीसरी श्रेणी की नहीं है, इस प्रकार मांस-भोजी और शाक-भोजी, दो प्रकार के जीव, संसार में पाये जाते हैं। अब इन दोनों प्रकार के भोजन, उनके खाने वालों की प्रकृति और उनके शारीरिक यंत्रों की ओर सब से पहले ध्यान देने की आवश्यकता है। प्रत्येक जीव के शरीर में तीन प्रकार के अवयव इस बात का निर्णय करते हैं कि उसका भोजन क्या है। वह मांस-भोजी है अथवा शाक-भोजी। वे तीन अवयव हैं, दांत, आमाशय और मुख से लेकर पेट तक, वे अवयव, जो भोजन में हर प्रकार से सहायक होते हैं। ये तीन अंग, प्रत्येक जीव के भोजन की व्यवस्था का निर्णय करते हैं।

दांत तीन प्रकार के होते हैं (१) काटने वाले दांत (Incisors), (२) कीले अर्थात् कुत्ते के-से दांत (Canine), (३) पीसने या चबाने वाले दांत (Molars)। जो जीव मांस-भोजी होते हैं, उनके काटने और कुतरने वाले दांत बहुत छोटे होते हैं, उन दांतों का उनको बहुत कम प्रयोग करना पड़ता है। उनके कीले दांत बहुत लम्बे होते हैं। ये लम्बे दांत उनके मुख में आगे तक होते हैं जो बनावट में नोकदार, चिकने और कुछ टेढ़े होते हैं। ये लम्बे दांत चबाने या पीसने के काम में नहीं आते। ये दांत केवल शिकार को पकड़ने के लिए होते हैं। जंगल के भयानक जानवरों के दांत और भी बहुत बड़े ऐसे ढंग के बने होते हैं, जिनको देखते ही, उनका काम और अर्थ, सहज ही समझ में आ जाता है। इन बड़े दांतों के पीछे कांटेदार नोकीले दांत होते हैं, जो मांस के छोटे-छोटे टुकड़े करने में काम आते हैं। ये कांटेदार दांत, मुँह चलाते समय, कभी

एक दूसरे से टकराते नहीं, बल्कि कैंची के दोनों पत्तों की भांति एक दूसरे से मिल जाते हैं। इसके द्वारा मांस का एक-एक टुकड़ा अलग-अलग हो जाता है। इन मांसाहारी जीवों के दांत और जबड़े इस योग्य नहीं होते कि वे मांस को पीस या चबा सकें। सभी लोग कुत्तों को देखते हैं कि जब उनको रोटी दी जाती है तो वे उसके बहुत बड़े-बड़े टुकड़े मुँह में लेते ही निगल जाते हैं, कारण यह है कि उनके दांत और जबड़े, भोजन को आदमी की भांति चबाने और पीसने का काम नहीं करते।

शाक और वनस्पति खाने वाले जीवों के कुतरने अथवा काटने वाले दांत बड़े-बड़े होते हैं, जिनसे वे शाक और घास के छोटे-छोटे टुकड़े करने का काम लेते हैं। पीसने वाले दांत, ऊपर की ओर कुछ चौड़े होते हैं जो शाक-पात के चबाने और पीसने का काम करते हैं।

हमें और आगे बढ़कर, बन्दरों के दांतों पर विचार करना चाहिए। बन्दर के दांत और मनुष्य के दांत, प्रायः समान होते हैं मनुष्य के दांतों की भांति, बन्दरों के दांत भी प्रायः समान लम्बाई के होते हैं। इन दांतों से स्पष्ट पता चलता है कि जो जीव शाकाहारी, फलाहारी और घास-पात का आहार करने वाले हैं, उनके दांत मांसाहारी जानवरों के दांतों की भांति नहीं होते। इससे प्रकट होता है कि प्रकृति ने उनके दांतों को केवल वनस्पति खाने के योग्य बनाया है और इसी लिए वे मांस खाने वाले नहीं हैं। अब यदि प्रश्न किया जाय कि मनुष्य के दांत किस जीव के साथ मिलते हैं तो सहज ही समझ में आता है कि मनुष्य के दांत बन्दरों के दांतों से मिलते हैं। दांतों के अतिरिक्त शरीर की बनावट आदि मनुष्य-जीवन की अन्यान्य बातें, बन्दरों के साथ समानता

रखती हैं। मनुष्य-जाति के आदि-काल का वैज्ञानिक अन्वेषण करने वालों ने तो यहाँ तक निश्चय करके बताया है कि मनुष्य, बन्दर की संतान है। सृष्टि के बहुत पुरा-तन काल में मनुष्य, बन्दरों के रूप-प्रति रूप में हुआ करते थे जो हो, यहाँ पर इस बात के समर्थन और अन्वेषण से कोई सम्पर्क नहीं है। परन्तु, इसमें कोई सन्देह नहीं कि मनुष्य, दाँतों की बनावट में बिलकुल बन्दरों के समान है। इसलिए कि न तो मनुष्य के दाँत मांस-हारी जीवों से मिलते हैं, इसलिये वह मांसा-हारी नहीं हैं, मनुष्य के दाँत, उन पशुओं से नहीं मिलते जो बनस्पति, शाक-पात खाते हैं, इसलिये मनुष्य, वनस्पति या शाक-पात खाने वाला नहीं है। मनुष्य के दाँत उन जीवों से भी नहीं मिलते जो मांस, मेवा, अनाज आदि सभी कुछ खा सकते हैं इसलिए मनुष्य मांस, मेवा और अनाज आदि सभी कुछ खाने के योग्य नहीं बनाया गया। किन्तु मनुष्य के दाँत बन्दरों के समान होते हैं जो फलहारी होते हैं, इस प्रकार यह प्रमाणित होता है कि मनुष्य का प्राकृतिक भोजन फलाहार है!

जो लोग मांसाहार के पक्ष में होते हैं, वे इस बात को पुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं कि मनुष्य न तो मांसहारी है और न शाकाहारी, वरन् वह दोनों प्रकार का जीव है। अर्थात वह दोनों प्रकार के भोजन खा सकता है। किन्तु यह बात सर्वथा मिथ्या है। किसी बात को बिना किसी वाद विवाद के मान लेना और बात है किन्तु किसी विवेचना के साथ किसी बातका समझना और बात है। किसी भी जीव का भोजन, उस पदार्थ का रूप, ज्यों का त्यों होता है जो जानवर मांस खाते हैं, उनको मांस को आग पर भूनने की आवश्यकता नहीं होती। जो पशु, शाक और वनस्पति खाते हैं, उनको भी अपने भोजन के पदार्थ आग पर तपा कर बनाने की आवश्यकता नहीं होती। पक्षियों से

लेकर छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े तक अपने भोज्य पदार्थ, उन पदार्थों को असली दशा में ही खाते हैं। यही अवस्था मनुष्य की भी है। मनुष्य का वही भोज्य पदार्थ है जिसको वह, उस पदार्थ की असली हालत में खा सकता है। इस अवस्था में मनुष्य कच्चा शाक और वनस्पति नहीं खा सकता, कच्चा मांस भी नहीं खा सकता, किन्तु बड़ी रुचि और स्वाद के साथ वह फलों को खा सकता है। इसलिए प्रत्येक अवस्था में यह प्रमाणित होता है कि मनुष्य का भोजन फलों को छोड़कर और कुछ हो ही नहीं सकता।

यह तो बहुत साधारण बात है और बड़ी सुविधा के साथ समझी जा सकती है कि यदि मनुष्य मांसाहारी होता तो वह मांस को बिना पकाये और बिना उस में कुछ मिलाये बड़े स्वाद के साथ खा सकता, किन्तु ऐसा नहीं है। कोई भी मनुष्य कच्चा मांस नहीं खा सकता और न किसी भी युग में मनुष्य कच्चा मांस खा सका है, इसलिए यह तो निश्चय ही है कि मांस मनुष्य का भोज्य पदार्थ नहीं हो सकता। यही अवस्था वनस्पति के सम्बन्ध में भी है। यदि मनुष्य वनस्पति और घास-पात बिना पकाए, कच्चा खा सकता, तो यह मानने में किसी को कुछ भी आपत्ति न होती कि मनुष्य वनस्पति या शाक-पात का भोजी है किन्तु ऐसा भी नहीं है। उसके खाने के एक मात्र पदार्थ फल हैं जिनको वह कच्चे-पक्के सभी रूपों और अवस्थाओं में रुचि और स्वाद के साथ खा सकता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य को किसी भी तर्कना के साथ मांसाहारी सोचना या प्रमाणित करना न केवल मनुष्य-जीवन के साथ, वरन् प्रकृति के साथ अनर्थ करना है!

मनुष्य फलाहारी है, फल ही उसके जीवन का उपयोगी और प्राकृतिक भोजन है, इस बात को अनेक रूप से समझा

जा सकता है। प्रत्येक जीव अपनी इन्द्रियों के द्वारा अपना भोजन पहचानता है। भोजन की पहचान बताने वाली इन्द्रियों में जिह्वा और नाक है। जंगली जानवर दूर से ही, बिना देखे सुने, केवल नाक द्वारा शिकार की गन्ध पाकर सचेत होता है और गन्ध के सहारे-सहारे वह चलकर अपने शिकार को खोजता है। इस प्रकार जब वह शिकार को आँख से देखता है तो बड़ा तेज़ी के साथ, उस पर झपटता है और बात की बात में लोहू-लुहान करके तुरन्त उसका मांस और रक्त खा-पीकर प्रसन्न होता है। उन जानवरों की नाक में ऐसी शक्ति होती है जिससे दूर से ही अपने शिकार की गन्ध उनको मालूम हो जाती है। नाक के द्वारा वे अपने शिकार के पास पहुँचते हैं और जिह्वा के द्वारा वे उसका स्वाद पाते हैं और प्रसन्न तथा संतोष अनुभव करते हैं। यही अवस्था प्रत्येक जीव की है। सभी जीवों को भोजन के सम्बन्ध में नाक, गंध के द्वारा अनेक बातों की जानकारी कराती है। मांसाहारी पक्षी बहुत दूरी से मांस की गन्ध को मालूम करते हैं। अनेक परतों के भीतर कोई खाने की वस्तु बँधी हुई रक्खी होगी किन्तु चूहे उसकी गन्ध से, उसे बड़ी आसानी के साथ ढूँढ़ लेंगे और उसके पास पहुँच जायँगे। चीटियाँ और चींटे, मीलों की दूरी से अपने भोजन की गंध पाते हैं और उसी के आधार पर वे वहाँ तक पहुँचते हैं। मनुष्य को भी प्रकृति ने इस प्रकार की शक्ति प्रदान की है परन्तु मनुष्य ने अपने इस गुण को नष्ट कर डाला है फिर भी उसका अस्तित्व बराबर काम करता है। किसी भी भोज्य पदार्थ की पहचान मनुष्य नाक के द्वारा सूँघ कर ही किया करता है। यदि कोई पदार्थ सड़कर या गलकर खराब हो गया है तो मनुष्य नाक के द्वारा सूँघकर ही जान लेता है। पशु, जो बनस्पति खाते हैं, सूँघने के बाद ही खाना प्रारम्भ

करते हैं। यदि उनके भोज्य पदार्थों में कोई रक्त इधर-उधर छिड़का दे या मांस के टुकड़े डाल दे तो वे अपने खाने के सामान को छोड़ देंगे। इस प्रकार नाक और जिह्वा—दो इन्द्रियों के द्वारा प्रत्येक जीव को अपना भोजन मालूम होता है। यदि इन दोनों इन्द्रियों के द्वारा विचार किया जाय तो मालूम होगा कि किसी भी मनुष्य की नाक और जिह्वा को कच्चे मांस की गन्ध और उसका स्वाद रुचिपूर्ण न मालूम होगा। जो लोग बकरे का मांस खाते हैं, यदि उनसे कहा जाय कि जिन्दा बकरे के बदन में दाँत मार कर अपने मांसाहारी होने का प्रमाण दें तो किसी मांसाहारी मनुष्य का इसके लिए प्रस्तुत होना असम्भव है। यदि मनुष्य मांसहारी होता तो कच्चे मांस के प्रति उसकी अरुचि और घृणा कभी भी न होती।

सर्वसाधारण में मांस के प्रति घृणा होती है, जो मांस खाते हैं, उनको भी, उस समय जब वे मांसाहारी न थे, घृणा थी, इसका कारण क्या है? किसी जीव को मार कर या बध कर और उसका मांस काट कर, खाने के लिए मांस तैयार किया जाता है, मारना और वध करना ही मानव प्रकृति का विरोधी है। प्रत्येक मनुष्य को स्वभावतः किसी का वध अच्छा नहीं लग सकता। जहाँ पर पशुओं का वध किया जाता है, वे स्थान सार्वजनिक रास्तों से हटकर, यथासम्भव एकान्त में बनाये जाते हैं। मांस बेचने की दूकानों पर नियम पूर्वक परदा पड़ा रहता है। इन सब बातों का कारण क्या है? वास्तव में यह बताना अनावश्यक है कि न तो वध-क्रिया हमारी आँखों और नासिका को रुचिकर प्रतीत हो सकती है और न मांस ही। इसी आधार पर जब कोई मार्ग में मांस लेकर निकलता है तो कदाचित् उसे म्युनिसिपल बोर्डों के नियमानुसार उस मांस

को बन्द करके या ढक कर के ले चलना पड़ता है। क्या यही सब बातें साबित करती हैं कि मांस, मनुष्य के भोज्य पदार्थों में से है? जिसको देखकर हमारी आँख और नाक को इतनी घृणा होती है वह पदार्थ हमारे खाने के योग्य हो सकता है! किसी भी फल की सुगंध क्यों हमारे मन और मस्तिष्क को प्रसन्न कर देती है? फलों को देखकर ही उनके खाने के लिए क्यों हमारे मुँह में पानी आजाता है, और हमारी मानसिक प्रवृत्तियाँ क्यों ललचा उठती हैं? इसलिए न कि फल हमारे भोज्य पदार्थ हैं? प्रकृति ने फल खाने के योग्य मनुष्य को निर्माण किया है, इसलिए स्वभावतः उसको फलों से प्रेम होता है।

मनुष्य को प्राकृतिक मांस से घृणा होती है, इसलिए वह मांस नहीं खाता, किन्तु दूसरे से वह मांस खाना सीखता है। मांसाहारी लोगों से बातें करने पर बहुत से ऐसे लोग मिलते हैं जो कहते हैं कि पहले हम मांस न खाते थे और हमको बड़ी उससे घृणा थी किन्तु अमुक प्रकार की घटनाओं में पड़कर अथवा अमुक-अमुक व्यक्ति की संगति में पड़कर हम भी खाने लगे। इसी से कहा जाता है कि मनुष्य मांसहारी नहीं है, वह मांसाहारी बनाया जाता है। दी न्यू साइन्स आफ़ हीलिंग (The new Science of healing) के लेखक ने अपनी पुस्तक में आँखों देखी एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक कुटुम्ब में एक हिरन पाला गया था। हिरन का भोजन वनस्पति है, यह बात सभी लोग जानते हैं, उस कुटुम्ब में एक कुत्ता भी पला था। कुत्ते को बने हुए मांस का रसा और कभी-कभी मांस भी मिला करता था। कुत्ते का यह भोजन, जब कभी उस हिरन के आगे रख दिया जाता तो उसको सूँघकर वह छोड़ देता। हिरन का खाना अलग वहीं पर दिया जाता। कुत्ता अपने आगे का भोजन समाप्त करके बचा हुआ भोजन का रसा

जिह्वा से चाट-चाटकर खाया करता था। हिरन भी कभी-कभी कुत्ते के बर्तन में मुँह डाल देता और नाक सिकोड़ कर अपना मुँह खींच लेता। कुछ दिनों के बाद देखा गया कि वह हिरन गोश्त के रसे को चाटने लगा। इस प्रकार धीरे-धीरे वह मांस के टुकड़े भी खाने लगा। यह अत्यन्त रहस्य पूर्ण बात थी। कुछ दिनों के बाद वह हिरन बीमार पड़ा और अक्सर बीमार रहने लगा। बहुत दिनों तक उसका जीवन रोगीला बीता और अन्त में वह मर गया।

ऊपर की इस घटना से प्रकट होता है कि किसी भी जीव को, उसके प्रकृति भोजन के विपरीत, भोजन करना सिखाया जा सकता है, किन्तु इसका फल, उसके लिए कभी हितकर नहीं हो सकता। उसको भिन्न-भिन्न प्रकार के रोग घेरे रहेंगे और वह रोगी होकर निर्बल हो जायगा। स्वभाव के विरुद्ध भोजन किसी को भी लाभ नहीं पहुँचा सकता। मानव जाति अपने स्वाभाविक भोजन को छोड़कर, दूसरे अप्रिय, अरुचिकर और प्रतिकूल भोजन करने के कारण उत्तरोत्तर रोग-ग्रसित होती जाती है। उसकी स्वाभाविक शक्ति नष्ट होगई है और वह बराबर निर्बल होती जाती है। मनुष्य अपने स्वाभाविक भोजन के द्वारा जितना शक्तिशाली और नीरोग रह सकता था, वह आज मनुष्य-जाति के लिए सपना है! अस्वस्थ और रोगी मनुष्य कभी भी पूर्ण आयु नहीं प्राप्त कर सकता। सर्वसाधारण का यह विश्वास अत्यन्त भ्रमात्मक है कि 'हमारी आयु निश्चित होती है, अवस्था का कोई परिमाण नहीं होता। हम स्वस्थ और आरोग्य रहकर बहुत बड़ी अवस्था तक जीवित रह सकते हैं। स्वास्थ्य और आरोग्य बनाने वाला एक मात्र हमारा स्वाभाविक भोजन है, उसके प्रतिकूल भोजन, हमें सदा अस्वस्थ और रोगी बनावेगा, जिससे हमारे शरीर की जीवन-

शक्ति निर्बल होकर, समय से पूर्व ही, हमारे जीवन को समाप्त कर देगी। इसी बात की पुष्टि के लिए एक बात और हम प्रमाण में देना चाहते हैं जब डाक्टर या वैद्य किसी रोगी को अच्छा करने में असमर्थ हो जाते हैं और कोई उपाय उनके सामने शेष नहीं रह जाता तो वे अधिक समय तक के लिए उस रोगी को फलाहार कराते हैं और उसके दूसरे भोजन बन्द करा देते हैं। इस प्रकार का संयोग प्राप्त होने पर क्या कभी यह कोई सोचता है कि डाक्टर साहब ने अथवा वैद्य साहब ने ऐसा क्यों किया—क्या यह भी कोई चिकित्सा है? बात य है कि स्वभाव के विरुद्ध भोजन प्राण-संहारक होता है। फि भी मनुष्य के जिन्दा रहने के कारण औषधि की व्यवस्था है ये औषधियाँ हमको, उस विपाक्त भोजन में भी जीवित रख की चेष्टा करती हैं। किन्तु जब किसी रोगी को अच्छा कर में वे औषधियाँ समर्थ नहीं होतीं, तो उस रोग के पैदा कर की जड़ कुछ समय तक के लिए काट दी जाती है और ऐसा करने पर वह रोगी अच्छा हो जाता है। कारण क्या है ! वे विपाकपदार्थ जो रोग को बढ़ा रहे थे, वे बन्द कर दिए गए और नई जीवन-शक्ति पैदा करने वाले उसके स्वाभाविक पदार्थ, फल खिलाने आरम्भ कर दिये गए, ऐसी अवस्था में रोगी को अच्छा हो ही जाना चाहिए।

हमारा वास्तविक भोजन क्या है, इस पर अब अधिक समझाने की आवश्यकता नहीं है। यदि हम प्रकृति के भिन्न-भिन्न अंगों पर ध्यान पूर्वक विचार करें तो हम सहज ही समझ सकते हैं कि प्रकृति ने हमारे भोजनों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के फलों की व्यवस्था की है और हमारे इस स्वाभाविक भोजन के अनुकूल ही हमारे शरीर की रचना की है। हमारे पेट का आमाशय और पाचन-शक्ति इन फलों को ठीक-ठीक रूप में पचा

सकती है। फलों को खा सकने और उनके पचा सकने के योग्य हमारे शरीर-यंत्र का निर्माण करके प्रकृति ने मानों हमारे लिए फलों के खाने का उपदेश दिया है। यह तो सोचने की बात है कि प्रकृति के इस आदेश को उल्लंघन करके भला हम किस प्रकार सुखी और स्वस्थ रह सकते हैं। हमारे जीवन का यही प्रायश्चित है कि हम जीवन-भर चिकित्सा करते रहें और एक दिन के लिए भी स्वास्थ्य के सच्चे सुख का अनुभव न कर सकें।

कुछ लोगों का यह भ्रम हो सकता है कि केवल फल खाकर हम कैसे जीवित रह सकते हैं। वास्तव में जो इस प्रकार का भ्रम करते हैं उनको इन बातों के तथ्य का कुछ भी ज्ञान नहीं होता। हमारे भोजन की जो वर्तमान प्रणाली है, उसको हटा कर, यदि हम अपने आप को फलों के खाने का अभ्यासी बनावें तो हमारा अनुभव हमको बतावेगा कि फलों के आहार से जो शक्ति और पुरुषार्थ हमको प्राप्त होता है वह अस्वाभाविक किसी प्रकार के भोजन से सम्भव नहीं है। भिन्न-भिन्न प्रकार के फल, मेवे, अन्न और कन्दमूल जो हमारी आंखों और नासिका को रोचक मालूम हों और खाने में स्वादिष्ट जान पड़ें, वे सब हमारे भोजन के सर्वोत्तम पदार्थ हैं। ये फल, संसार के सभी देशों में यथेष्ट रूप से पाये जाते हैं, और यदि कहीं पर इनकी पैदावार कम हो तो उनकी पैदावार बढ़ाई जा सकती है जिससे कि हमारे जीवन के साधन, सहज और अधिक प्रमाण में प्राप्त हो सकें और यदि किसी देश विशेष में ये फल नहीं हो सकते तो समझ लेना चाहिए कि वह देश मानव प्रकृति के अनुकूल नहीं है, अतएव वह मनुष्यों के निवास करने के सर्वथा अयोग्य है। वास्तव में हमारा भोजन वही है जिसको खाने के लिए आग पर पकाने, नमक, मिर्च, मसालों के लगाने और

तेल या घी में भूनने की आवश्यकता न पड़े। इस नियम के अनुसार विभिन्न फलों को छोड़कर और कोई चीज़ हमारे खाने के योग्य हो ही नहीं सकती।



हमारी भूल और उसका परिणाम

हमारे शरीर स्वस्थ और निरोग क्यों नहीं हैं—वे दुबले-पतले और जीर्ण-शीर्ण क्यों दिखाई देते हैं। छोटे-छोटे बच्चे और नवयुवक नाज़ुक क्यों हो रहे हैं? स्त्रियों के बदन पर रक्त और मांस क्यों सूखा हुआ है? आदि-आदि प्रश्नों का एक ही उत्तर है, और वह यह कि समस्त मानव समाज रोगी है!

यदि हम अपनी दिनचर्या पर विचार करें तो मालूम होगा कि हमारा सम्पूर्ण जीवन रोगों का इलाज करने में ही व्यतीत होता है। हमें अपने जीवन का इतना बड़ा और कोई भी काम नहीं करना पड़ता, जितना कि हमें दवाओं का प्रबंध करना पड़ता है। पहले तो हमें स्वयं बीमारियों से छुट्टी नहीं है, कभी सिर में पीड़ा है कभी कमर में दर्द है, किसी दिन हरारत है और किसी दिन बुख़ार है। ज़ुकाम जैसी बीमारियाँ तो बनी ही रहती हैं। इस प्रकार भिन्न-भिन्न रोगों से हमें छुट्टी नहीं मिलती, किन्तु उसी अवस्था में यदि ईश्वर ने संतान दी है और एक गृहस्थ का जीवन बिताना पड़ता है तो फिर कहना ही क्या है। सबेरे उठकर डाक्टर साहब के पास अथवा वैद्य जी के पास जाकर एक न एक मुसीबत रोना और दवा की शीशी या पुड़िया ले आना नित्य का नियम है। इसके बाद फिर खाना-पीना अथवा सब बातें हैं।

यह सब क्या है? क्या हममें से कभी कोई इस अवस्था का विचार भी करता है? क्या कभी हम लोग इन दुरवस्थाओं की ओर देखते और उनके कारणों की विवेचना भी करते हैं?

और यदि करते हैं तो कौन इस बात का उत्तर देगा कि शहरों में जितने मकान, नागरिकों के रहने के लिए होते हैं, उनके ठीक चौथाई मकानों और इमारतों में दवाखाने, औषधालय होते हैं, क्यों ? इसका उत्तर यही न, कि शहरों का जीवन, नागरिकों की ज़िन्दगी इन दवाख़ानों और औषधालयों पर निर्भर है !

इन दवाख़ानों और औषधालयों की संख्या यहीं तक नहीं है। इनका अभिप्राय उन दवाख़ानों और औषधालयों से है जो किसी वैद्य या डाक्टर के व्यक्तिगत हुआ करते हैं। इनसे कहीं अधिक भयानक सार्वजनिक औषधालय हैं जो धर्मार्थ अथवा परोपकारार्थ हुआ करते हैं। इस प्रकार के औषधालयों की अधिक टीका-टिप्पणी करना व्यर्थ है बताना केवल यह है कि उनमें दवा लेने वालों की संख्या और उनका दृश्य रहस्यपूर्ण हुआ करता है। समाज रोगी है या स्वस्थ, हमारा जीवन रोग-मुक्त है अथवा रोगपूर्ण ? इन प्रश्नों का निर्णय करने के लिए इन धर्मार्थ औषधालयों का निरीक्षण करने की आवश्यकता है।

समाज का इस रोग ग्रसित अवस्था का विचार करते हुये एक विद्वान ने लिखा था—“ मानव समाज रोगों का दिन पर दिन शिकार होता जाता है। मनुष्य के जीवन का रोगों से इतना घनिष्ट सम्बन्ध होगया है कि जीवन का बहुत बड़ा अंश इसी उलझन में चला जाता है। समाज की इस अवस्था परिणाम साधारण लोगों, गृहस्थों पर बहुत भयंकर मिलता है। यह अवस्था इस समय उतनी शोचनीय नहीं है जितनी [illegible] भविष्य में उसके शोचनीय होजाने का निश्चय है। रोगों की इस बढ़ती हुई दुरवस्था का एक अनुचित कारण बहुत अधिक संख्या में डाक्टरों, वैद्यों और हकीमों का होना है।”

समाज की यह अवस्था सचमुच विचारणीय है। संसार के विद्वानों ने समाज की अवस्था का अनुभव किया है। और उसके कारणों पर भलीभाँति विचार किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मुक़दमेबाज़ो के बढ़ जाने का कारण वकीलों की संख्या है, राजनीतिक जीवन के फैलाने और बढ़ाने के कारण, समाचार पत्र हैं, व्यभिचार के बढ़ाने वाली वेश्याएँ हैं, भिखमंगों के पैदा करने वाले, दाता हैं, और रोग तथा बीमारियों के बढ़ने का कारण दवाख़ाने, औषधालय और अस्पताल हैं। ये दवाखाने और अस्पताल किस प्रकार रोगों की वृद्धि करते हैं, संक्षेप में यहाँ पर कुछ प्रकाश डालना है। हम ऐसा कोई भी काम नहीं कर सकते, जिसमें हमको दंड मिल सकता है, किन्तु जब हमको विश्वास होता है कि उस दंड से हम मुक्त हो सकते हैं तो उस अपराध के करने में जो डर होता है, वह हमारे हृदयों से निकल जाता है। चोरी करने से दंड मिलता है, इसीलिए हम चोरी करने से डरते हैं किन्तु जब हम यह जान लेते हैं कि वकील की पैरवी से हम बचाए जा सकते हैं, तो फिर चोरी करने का हमें कौन-सा डर हो सकता है। यह निश्चित है कि रोग या बीमारी का उत्पन्न होना, हमारे ही जीवन का कोई न कोई अपराध है और उस अपराध का दंड स्वरूप यह रोग है, तो फिर उस रोग से किसी को बचाने का प्रयत्न करना यह साबित करता है कि अपराध करने वालों की संख्या बढ़ाई जा रही है। हम स्वभाव और प्रकृति के विरुद्ध खाना खाकर बीमार होते हैं और जब बीमार होते हैं तो दवाओं की सहायता से उससे मुक्ति पाने की चेष्टा करते हैं, मुक्ति पाने का यह ढँग यदि न होता तो एक बार उसका कष्ट भोगकर हम दूसरी बार कभी उस अपराध का साहस नहीं कर सकते थे। जो लोग, धर्मार्थ औषधालय खोलते

हैं वे परोक्ष में धर्म करते हैं किन्तु समाज के लिए वह हानिकर ही होता है। जिन कोठी वालों के दरवाजों पर भिखमंगों की भीड़ लगती है और वहाँ पर उनको मुट्ठी-मुट्ठी अनाज मिलता है, वहाँ पर उनके साथ उदारता और दया होती है परन्तु इसका फल यह होता है कि उन भिखमंगों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जाती है. इस प्रकार अपरोक्ष में समाज का पतन होता है।

मनुष्य का वास्तविक आहार क्या है, यह बात पीछे बताई जा चुकी है. इस स्वभाविक आहार और प्राकृतिक भोजन को छोड़ देने के कारण आज मनुष्य-जाति की यह अधोगति हुई है। यदि ये रोग जीवन के कोई आवश्यक अंग होते तो या मनुष्यों के अतिरिक्त अन्य सभी प्राणियों के लिए भी तो होने चाहिए थे। किन्तु पशुओं, पक्षियों, जंगली जानवरों, कीड़ों मकोड़ों आदि के लिए कभी किसी दवा की आवश्यकता नहीं पड़ती। उनको बीमारियाँ नहीं होतीं और न उनकी बीमारियों के लिए दवाखाने तथा औषधालय ही खुले हैं। कोई भी बीमारी, जो संयोगवश पैदा होती है, वह अपने आप अच्छी भी होती है। फोड़ा-फुन्सी से लेकर, तरह-तरह की बीमारि और भयंकर से भयंकर रोग अपने आप सेहत होना चाहिए यह प्रकृति का नियम है। यहाँ पर एक रोगी का उदाहरण दे आवश्यक जान पड़ता है। एक आदमी की अवस्था लग अड़तीस वर्ष की थी, पानी पीने में उसके दांतों में पानी ल था। वह आदमी कुछ पैसे वाला था। उसने भिन्न-भिन्न वैद्यों दवा की और अंत में एक प्रसिद्ध दांत बनाने वाले (Dentist के पास गया। उसने दांतों को देख कर बताया कि दांतों पर enamel (एक प्रकार की पालिश) लगी होती है, उसके ि जाने से पानी लगने लगता है। उस आदमी के पूछने पर उ

बताया कि यह पानी का लगना बन्द हो सकता है और इसके लिए उसे क़रीब पैंतीस रुपये ख़र्च करने का अन्दाज़ बताया। उस आदमी ने वैसा ही किया किन्तु उतने रुपये ख़र्च होजाने के बाद उसका पानी लगना बन्द न हुआ, इसके बाद उस आदमी ने अधिक रुपये खर्च करना उचित न समझा। उसने दवा करना बन्द कर दिया। कुछ दिनों के बाद उसे कुछ ऐसे आदमियों से बातें करने को मिलीं, जिनके दाँतों में पानी लगने की बीमारी हो चुकी थी। इन बातों के साथ साथ, उन लोगों ने यह भी बताया कि यह पानी का लगना अपने आप बन्द भी होगया। यह बात सुनकर उस आदमी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने एक अंगरेज़ दांत बनाने वाले से बातें की तो उसने बताया कि— दान्तों पर जो enamel अर्थात् एक प्रकार की पालिश होती है उसके निकल जाने से दान्तों में पानी लगता है यह enamel अपने आप फिर दान्तों पर पैदा हो जाती है, इसके निकल जाने का कारण खाने-पीने का व्यतिक्रम होता है। चिकित्सा के द्वारा कुछ जल्दी यह पैदा होती है।

यही अवस्था प्रत्येक रोग की है। कोई भी रोग, कुछ न कुछ कारण पाकर पैदा हो जाता है और अपने आप सेहत हो जाता है। यह अवस्था उस समय होती है जब प्राकृतिक जीवन बिताया जा सकता है। समाज ने अस्वाभाविक जीवन में पदार्पण करके इतना बड़ा भार अपने सिर पर ले लिया है जिसको देखकर सहज ही घृणा होती है। हमें अपने जीवन को समझने और उसको ठीक-ठीक बिताने के लिए न जाने कितनी पुस्तकों और ग्रन्थों को पढ़ना पढ़ता है परन्तु इन पुस्तकों और ग्रन्थों का अंत नहीं होता। इन पुस्तकों और ग्रन्थों में से एक-एक पुस्तक के भीतर न जाने कितने नियम, कितने उपनियम होते हैं। इन पुस्तकों और ग्रंथों एवम् उनके नियमों और उप-

नियमों का याद करना तो दूर रहा, एक बार पढ़ डालना ही असंभव हो गया है। यह जीवन भी क्या एक बला है! व्यर्थ का यह भार देखकर जी ऊब उठता है। इन सब व्यर्थ आडम्बरों की क्या आवश्यकता है। प्रकृति ने हमारे जीवन को एक बला एवम् आडम्बर के रूप में नहीं निर्माण किया। यह जीवन इतना सहज और सरल है जितना कुछ भी सहज और सरल हो सकता है। जिसने हमें जीवन दिया है, उसने हमें उस जीवन को आवश्यकतानुसार बिताने के लिए स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ प्रदान की हैं। प्रकृति की प्रदान की हुई ये स्वाभाविक प्रवृतियाँ, हमारे जीवन में, वहीं पर नष्ट हो जाती हैं जब हमारा जीवन प्रकृति के विरुद्ध प्रवाहित होता है। उस अवस्था में, हमको अपना जीवन बिताने के लिए बैलगाड़ियों में लादी जाने वाली इन पोथियों की ज़रूरत होती है। किन्तु क्या इनसे कुछ वास्तव में उपकार भी होता है? हमें जल कैसा पीना चाहिए, हमें किस प्रकार की वायु का सेवन करना चाहिए? कौन सा भोजन हमें खाना चाहिए और कहाँ कैसे स्थानों में हमें रहना चाहिए, यह सब सीखते-सीखते हम बाल्यकाल से बुढ़ापे तक पहुँचते हैं, किन्तु यदि कोई पूछे कि उससे फ़ायदा क्या उठाते हैं तो कदाचित् यही उत्तर देना पड़ेगा कि कुछ नहीं?

हमें अपने जीवन के लिए जिन-जिन बातों की आवश्यकता है उनको ठीक उसी रूप में प्राप्त करने के लिए प्रकृति ने सब प्राणियों को शक्तियाँ प्रदान की हैं और समूचे विश्व में उनकी व्यवस्था की है। फिर उनको बताने और पुस्तकों के पन्ने रटाने की क्या ज़रूरत है और यही कारण है कि मनुष्य को छोड़कर अन्य किसी प्राणी को उसकी आवश्यकता नहीं पड़ती। जंगलों और बन-पर्वतों पर रहने वाले जानवर तथा पशु-पक्षी पीने के

लिए सुन्दर प्रवाहित जलाशयों, नदियों तथा झरनों का पानी पीते हैं, खाने के लिए अपने अपने स्वभाव के अनुकूल भोजन प्राप्त करते हैं और अपने रहने के लिए सुरक्षित स्थानों की व्यवस्था करते हैं। यही तो जीवन है। फिर इस जीवन को संचालित करने के लिए हमें जीवन-भर क्यों रोना पड़ता है?

हमारे स्वास्थ्य का रोना इतना विस्तार पा चुका है कि विशेष रूप से उसके बताने की आवश्यकता नहीं है। समाज को रात-दिन, सदा-सर्वदा एक न एक बीमारी के कष्ट में दुखी रहना पड़ता है। ऐसी अवस्था में भी यदि कोई इस दुरवस्था से अपरिचित रहे हों तो उनको चाहिये कि वे समाचारपत्र, मासिकपत्र तथा भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं के पन्नों को उलट कर देखें तो उनको उनमें देखने को मिलेगा कि समाज के बिगड़े हुए स्वास्थ्य, बढ़ते हुए स्वाभाविक और अस्वाभाविक रोग किस-किस प्रकार के हैं और उनके कारण समाज की शक्ति कितनी निर्बल हो गई है! चिकित्सा करते-करते विज्ञापन दाताओं और इश्तहारबाज़ों ने तो समाज का जीवन ही अश्लील कर डाला है।

थोड़े से संतोष की बात यह है कि समाज में कुछ दूरदर्शी विद्वानों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है और वे सोचने लगे हैं कि इस दुरवस्था का मूल कारण क्या है। यहाँ पर भिन्न-भिन्न लोगों के विचारों और रिपोर्टों के उद्धरण देकर इस बढ़ती हुई दुरवस्था पर विशेष रूप से प्रकाश डालना चाहते हैं। लार्ड केलवन ने इस स्थिति की मीमांसा करते हुए लिखा है—

"मैं बहुत समय के पश्चात्, इस नतीजे पर पहुँच सका हूँ कि हमारे शरीर में जो रोग उत्पन्न होकर हमारे जीवन के

सुखों को छिन्न-भिन्न कर डालते हैं, वे प्रायः सभी हमारे अस्वाभाविक भोजनों के द्वारा उत्पन्न होते हैं।"

यह बात सभी को मालूम है कि जीवन का सारा सुख, स्वास्थ्य पर निर्भर है। इस स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिए समाज में आए दिनों कौन-से प्रयत्न नहीं किये जा रहे? परंतु वे निष्फल हो जाते हैं, अथवा यों कहा जाय कि मनुष्य के जीवन में जो शक्ति और पुरुषार्थ होना चाहिये, वह नहीं दिखाई देता। दक्षिणी अफ्रीका में दस हज़ार मैट्रीक्युलेट युवकों ने देश और सरकार की सेवा करने के लिए प्रार्थना-पत्र दिए, उन प्रार्थना-पत्रों पर वे दस हज़ार युवक बुलाये गये। आश्चर्य की बात है कि उन दस हज़ार नवयुवकों में केवल बारह सौ इस योग्य निकले जो सैनिक कार्य कर सकते थे! समाज की दुर्बल अवस्था के और क्या प्रमाण हो सकते हैं!

एक सरकारी रिपोर्ट से पता चलता है कि सन् १६०० में जिन युवकों ने सेना में भर्ती होने का प्रयत्न किया था, उनमें से डाक्टरों ने २८ प्रतिशत युवकों को किसी न किसी रोग में रोगी होने के कारण निकाल दिया। इसके बाद जो शेष रहे उनमें से परिश्रम कर सकने और कष्टों को सहन करने के योग्य केवल ५० प्रति शत युवकों को निर्वाचित किया, इस प्रकार बहुत बड़ी संख्या में अयोग्य और रोगी कह कर वापस किए गए। सन् १६०८ में रँगरूटों की भर्ती के लिए जो कितने ही सहस्र जवान एकत्रित हुए थे, उनमें से ४२ प्रतिशत तो केवल इसलिए निकाल दिये गए कि वे विभिन्न सूक्ष्म बीमारियों के रोगी थे। अब सोचने की बात यह है कि यह अवस्था उन लोगों की है जो समाज में युवक, स्वस्थ, शक्तिशाली और निरोग समझे जाते हैं, क्योंकि सेना में भर्ती होने के लिए कोई रोगी, निर्बल युवक प्रार्थी नहीं हो सकता। मानव समाज की

यह अधोगति न किसी एक देश की है वरन् सारे संसार की है। संसार के मानव समाज में वे लोग इस दुरवस्था से किसी प्रकार पृथक हैं जो किसी शहर के नागरिक नहीं हैं, जो धनिक, पैसे वाले नहीं हैं अथवा जो देहात, जंगलों और पर्वतों पर रहते हैं। कारण यह है कि इन लोगों का अधिकांश में उतना अस्वाभाविक जीवन नहीं होता जितना कि इनके विरुद्ध हैसियत वालों का।

इस दुरवस्था के कैसे-कैसे भीषण दृश्य हमारी आँखों के सामने से नित्य प्रति गुज़रा करते हैं, यह बात ध्यान पूर्वक देखने के योग्य है। पैदाइश और मृत्यु विभाग की रिपोर्टों से इस बात का पता चलता है कि मनुष्य की अवस्था लगातार कम होती जाती है अर्थात् ३५ और ४० वर्ष के उपरान्त ही स्त्री-पुरुषों की अधिकांश में मृत्यु हो जाती है। इन रिपोर्टों में एक बात बड़ी भयङ्कर है जो विशेष रूप से जानने के योग्य है। मरने वालों में बहुत बड़ी संख्या उन लोगों की है जो असमय और किसी रोग विशेष के कारण मर जाते हैं। इन मरने वाले व्यक्तियों के रोगों का अनुसन्धान करने से पता चलता है कि क्षयी रोग किस प्रकार समाज में तरक्की कर रहा है। हम आगे चल कर बतावेंगे कि क्षयीरोग जैसी बीमारियों के उत्पन्न होने के मांस जैसे अस्वाभाविक भोजन किस प्रकार कारण हो रहे हैं।

विलायत के डाक्टरों ने जो वहाँ समस्त स्कूलों के विद्यार्थियों के सम्बन्ध में रिपोर्टें प्रकाशित की हैं, वे कितनी हृदय विदारक हैं। उनका कहना है कि प्रति शत २५ विद्यार्थी ऐसे निकल जाते हैं जिनके रक्त ख़राब हो गए हैं, प्रति शत ८ ऐसे लड़के हैं जिनको हृदय की निर्बलता है और ४५ प्रति शत लड़के गले

और नाक की बीमारियों से बीमार हैं। अमीर घराने लड़कों का स्वास्थ्य किसी प्रकार सन्तोष जनक नहीं है।

इन रिपोर्टों की एक-एक बात इस बात को स्पष्ट करती कि प्रकृति और स्वभाव के भिन्न, भोजन करने का, यह ए मात्र परिणाम है। यह अस्वाभाविकता अमीर घरानों में जि प्रकार होती है, उसका यह परिणाम ही होना चाहिये जैसा कि उनके बालकों के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में डाक्टरों ने लिखा है। खाने-पीने के सम्बन्ध में जितनी स्वेच्छा चारिता बढ़ती जा रही है, उतनी ही हमारी अधोगति भी हमारे लिए अनिवार्य हो गई है। पशु और दूसरे पक्षियों में एक स्वाभाविक बुद्धि होती है जिससे वे अपना भोजन खाते हैं और जो अभोज्य होता है, उसको कभी भी वे स्वीकार नहीं करते। परन्तु मनुष्य इन बातों का कभी भी विचार नहीं करता, करे भी कैसे, उसकी तो स्वाभाविक बुद्धि ही नष्ट हो जाती है और उसका सारा जीवन ही कृत्रिम हो जाता है, फिर उसका भोजन स्वाभाविक और प्राकृतिक कैसे हो सकता है। उनको भूख नहीं लगती, खाना हज़म नहीं होता। पाचनशक्ति दिन पर दिन दोहाई देती है परन्तु उनको इस बात का ख्याल नहीं होता कि हम जो खाते हैं, वह वास्तव में हमारा भोजन नहीं है, इसीलिये यह स अनिष्ट हो रहा है। यह सब न सोचकर वे उसी भोजन के पचाने का प्रयत्न करेंगे। वैद्य जी से चूर्ण लावेंगे, दूसरी औष धियों का प्रयोग करेंगे और अपनी हठ से पेट को एक प्र का बोरा बना डालेंगे जिसमें कोई भी पदार्थ उचित अ अनुचित भरे जा सकें।

पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है कि मनुष्य का शारी यंत्र उसके दाँत, आमाशय और कितने ही अवयव इस बात स्पष्ट प्रमाण देते हैं कि मनुष्य का भोजन फलों को छोड़

और कुछ नहीं हो सकता। उसका सबसे उत्तम और आरोग्य वर्द्धक यही भोजन है किन्तु स्वभाव से भिन्न किन, किन पदार्थों को खाकर मनुष्य रोगी होता है, इसका विस्तार के साथ आगे विवेचन किया जायगा। यहाँ पर बताना आवश्यक हो गया है कि सभ्य मानव समाज ने फल और वनस्पति, जो उसके लिए उपयोगी हैं, छोड़कर किस प्रकार के पदार्थों का भोजन अपने लिए आवश्यक समझा है। यहाँ पर उनके सम्बन्ध में थोड़ा-सा उल्लेख कर देने से मालूम हो जायगा कि शरीर और स्वास्थ्य को खराब करने के लिए किस प्रकार ये भोजन कारण हुए हैं।

कोरिया के लोगों में कुत्ते पालने की बहुत पुरानी प्रथा है और प्रायः सभी लोग वहाँ कुत्ते पालते हैं, किन्तु इन कुत्तों के पालने का सिवाय इसके और कोई अभिप्राय नहीं है कि वे लोग कुत्ता खाते हैं। हमारे देश के बहुत से लोग इस बात को सुनकर चौंकेंगे, किन्तु चौंकने की बात नहीं है। हमारे यहाँ बकरी और बकरे पाले जाते और बकरी और बकरे खाये भी जाते हैं। कितने ही ऐसे पक्षी पालने की हम लोगों में प्रथा है जो हमारे ही देश में भोजन के काम में भी आते हैं। मुसलमान लोग गाय पालते हैं और उसी का हनन करके भोजन के काम में लाते हैं।

फ्रांस जैसे सभ्य देश में मेंढक और इस प्रकार के जीव बड़ी रुचि और स्वाद के साथ खाये जाते हैं और उनके द्वारा वहाँ पर भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजन बनाए जाते हैं। योरप के देशों में, मछलियों की गली-सड़ी आँतों से एक बहुत स्वादिष्ट भोजन तैयार किया जाता है और उसे लोग बहुत महत्व देते हैं। श्याम में अंडा तो खाया ही जाता है किन्तु उसको सड़ाकर और गलाकर खाने की बहुत प्रथा है और वहाँ के लोग इसे बहुत

उत्तम समझते हैं। दक्षिणी अफ्रिका में जो वहशी लोग रहते हैं, वे जानवरों की आँतों को बड़े शौक से खाते हैं। जूलू वह-शियों में सड़ा हुआ माँस खाने को बहुत स्वादिष्ट माना जाता है। यह माँस जितना ही सड़ जाता है और जितने ही अधिक उसमें कीड़े पड़कर रेंगने लगते हैं, उतना ही अधिक वह उप-योगी समझा जाता है। अँगरेज़ों में उस पक्षी के माँस को खाने में स्वाद अनुभव किया जाता है जो सड़ने लगता है। उनका विश्वास है कि सड़ने पर उसमें जो उपयोगिता पैदा हो जाती है वह सड़ने के पूर्व उसमें नहीं होती। वहाँ पर आज भी ऐसी बहुत-सी जातियाँ पाई जाती हैं जो रेंगने वाले कीड़े-मकोड़ों को बड़े स्वाद और शौक के साथ खाती हैं।

यह मानव समाज और ये उनके भोजन! जिसकी यह अवस्था हो, वह यदि स्वास्थ्य और शक्ति के लिए रोये तो आश्चर्य ही क्या है। हमारे देश में भी इससे कम आश्चर्य के भोजन नहीं पाए जाते। यदि इतने भयंकर अस्वाभाविक भोजन नहीं हैं तो किसी प्रकार इनसे मिलते-जुलते हैं। जो लोग इसको अस्वीकार करें अथवा बिगड़ें, यदि उनको एक-एक बात सुनाई जाय तो फिर उनको मालूम हो कि इस अध्यात्म-प्रिय देश की आज क्या अवस्था है।



हम बीमार क्यों पड़ते हैं ?

सर्वसाधारण का, इस प्रकार का विश्वास है कि रोग अपने आप पैदा होते हैं। उनकी कुछ ऐसी धारणा होती है कि जो बात होनहार होती है वह किसी न किसी प्रकार होती ही रहती है। इन होनहार बातों में, रोग भी एक होनहार ही है जो समय-असमय पैदा हो जाता है।

समाज के सर्वसाधारण लोगों का यह विचार और विश्वास कितना निर्बल और दयनीय है। उनकी यह भूल और अनजान उनकी बहुत बड़ी विपदाओं का कारण है। यदि उनको यह मालूम हो कि रोग अपने आप नहीं उत्पन्न होते, उनके उत्पन्न करने के हम ही कारण हो जाते हैं तो वे, निश्चय ही फिर यह जानने की चेष्टा करेंगे कि हम स्वयं अपनी बीमारी को किस प्रकार पैदा करते हैं ? और जब उनको इन बातों का यथावत् रहस्य मालूम हो जायगा तो फिर जान-बूझकर वे कोई ऐसी भूल न करेंगे जो उन्हीं के लिए कष्टदायक हो।

मनुष्य-जीवन में कितने प्रकार के रोग पैदा होते हैं, इस बात को निश्चित संख्या के साथ यद्यपि आज तक शरीर-शास्त्र का कोई भी विज्ञान नहीं कह सका और न आगे ही कभी कह सकेगा, इसलिए कि रोग जिन कारणों से उत्पन्न होते हैं उन कारणों की जब तक संख्या और उनका परिमाण नहीं मालूम हो सकता, तब तक उनके द्वारा पैदा होने वाले रोगों के सम्बन्ध में ही कैसे बताया जा सकता है। परन्तु फिर भी, रोगों के सम्बन्ध में जहाँ तक अनुसन्धान किया जा सका है, किया गया

है। और इसके सम्बन्ध में तीन बहुत बड़े-बड़े विभाग अनुसन्धान करने वालों के पाये जाते हैं अर्थात् डाक्टरी, यूनानी और आयुर्वेदिक। इनके आधार पर मनुष्य-जीवन में पैदा होने वाले लगभग डेढ़ हज़ार से लेकर दो हज़ार से कुछ अधिक रोगों की विवेचना, इनके लक्षण, रूप और प्रतिरूप पाये जाते हैं। अमेरिका से प्रकाशित होने वाली मेडिकल और सरजिकल बुलेटीन का कहना है कि पेट की खराबी से और भोजन की गड़बड़ी से इन सभी रोगों की उत्पत्ति होती है, यह यूनानी और आयुर्वेदिक मत है जिसको डाक्टरों ने भी स्वीकार किया है और फ्रांस के प्रसिद्ध डाक्टर थाय और बोशरो तथा लंडन के लोकप्रिय डाक्टर हेग ने विशेष रूप से इन बातों का समर्थन किया है।

मनुष्य जो खाना खाता है उसके खाने के पदार्थों में कुछ इस प्रकार का अंश भी पाया जाता है जो विकार उत्पन्न करता है, इस प्रकार का अंश प्रायः उन बहुत से पदार्थों में पाया जाता है जो आज मनुष्य के भोजन के नाम से प्रसिद्ध हैं और उसीके अर्थ उनका उपयोग होता है। इन पदार्थों में जो यह विकार का अंश होता है, वह कितने ही प्रकार के मल तथा मूत्र के रूप में शरीर से बाहर हुआ करता है। मनुष्य जो खाता है, पेट में जाने पर उसकी बहुत-सी क्रियायें होती हैं और प्रत्येक क्रिया में शुद्ध होकर उसका मल और विकार अलग हो जाता है। जिस प्रकार सोनार सोने और चाँदी को आग में तपाकर उसमें सोने और चाँदी के अतिरिक्त मिले हुए धातु-अंश जलाकर और शुद्धकर पृथक कर देता है, उसी प्रकार पेट के भीतर ये क्रियायें काम करती रहती हैं और ये क्रियायें तब तक बराबर होती रहती हैं जब तक कि उनके भीतर से अशुद्ध अंश और विकार सब पृथक हो नहीं जाता। अंत में किये हुए भोजन का बहुत थोड़ा

सा—कदाचित् कुछेक बूँदों के परिमाण में अंश रह जाता है, वही हमारे शरीर के काम में आता है।

यहाँ पर यह विचार करने की बात है कि खाये हुए भोजन का बहुत थोड़ा-सा अंश जो अंत में तैयार होता है वह सभी प्रकार के भोजनों में समानरूप से, नहीं तैयार होता, बल्कि किसी में कुछ कम और किसी में कुछ अधिक यह अंश निकलता है। इसी प्रकार, जो विकार के अंश हुआ करते हैं, वे भी सभी प्रकार के भोजनों में समान रूप से नहीं होते। किसी में कम और किसी में अधिक, किसी में बिलकुल नहीं और किसी में बहुत अधिक निकलते हैं। लंडन के बहुत प्रसिद्ध और माननीय डाक्टर मि० हेग ने बहुत बड़े परिश्रम के साथ यह निश्चय किया है कि जिन पदार्थों में यह विकार अधिक होता है, उनका प्रभाव मनुष्य के शरीर पर विष के समान पड़ता है और जिन अवस्थाओं में वह शरीर से उचित समय पर निकल नहीं जाता, उन दशाओं में वह तुरन्त अपने प्रभाव से रोग उत्पन्न करता है। अब देखना यह चाहिये कि यह विकार और विष शरीर से मल के साथ अथवा उसके रूप में किस प्रकार निकला करता है। यह देखा जाता है जब किसी को दस्त साफ़ नहीं होता, या टट्टी खुल कर नहीं आती, तो वह बीमार पड़ जाता है। जिन्हें दस्त साफ़ न होने की शिकायत रहा करती है, उनको सदा बीमार रहने की शिकायत भी रहा करती है। मि० हेग का यह कहना भी सत्य है कि कुछ पदार्थों में यह विकार इतना अधिक होता है कि वह विष होकर प्रभावान्वित होता है, इसलिए कि प्रायः देखा जाता है कि जिनको भयंकर से भयंकर रोग हो जाते हैं और उसी रोग में उनके प्राण जाते हैं, जब उस रोगी से बातें की जाती हैं तो मालूम होता है कि उसको टट्टी साफ़ न होने

की शिकायत है। मि० हेग ने इस विकार को यूरिक एसिड (Uric acid) अर्थात् एक प्रकार का विष निश्चित किया है। यह विष किन-किन खाने के पदार्थों में, किस-किस परिमाण में होता है और किस-किस प्रकार यह मनुष्य शरीर में रोग उत्पन्न करता है, इस पर उन्होंने बहुत कुछ लिखा है। उनके अनुभव और अनुसंधान समाज में ३ य माने जाते हैं। और इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने इसके सम्बन्ध में बहुत परिश्रम और अन्वेषण किया है यहाँ पर इस विष के सम्बन्ध में उचित प्रकाश डालने की चेष्टा की जायगी और प्रत्येक वस्तु में इस विष के परिमाण की विवेचना की जायगी। इसके साथ ही यह निश्चय किया जायगा, कि कौन-कौन रोगों का श्रीगणेश किस-किस प्रकार होता है।

जिन-जिन पदार्थों में यह यूरिक एसिड नामक विष होता है, उनका निम्नलिखित उल्लेख करके यह भी बताया जायगा कि किसमें कितना यह विष होता है, आजकल मनुष्यों के भोजन में विभिन्न प्रकार की चीजें हो गई हैं फिर भी उसमें मछली, मांस, वनस्पति, शराब और चाय इत्यादि अधिक उपयोग में आती हैं। मछली की कई जातियाँ होती हैं और वे सभी मनुष्यों के भोजन में काम आती हैं। उन सब में यह विष समान नहीं होता। भिन्न-भिन्न जाति की मछलियों में विभिन्न परिणाम में यह विष पाया जाता है। यदि आध सेर प्रत्येक मछली के वज़न का गोश्त लिया जाय तो उनमें काड मछली में चार ग्रेन, यलीस में पांच ग्रेन, हाइबट में सात ग्रेन और सामन में आठ ग्रेन तक यह विष पाया जाता है।

यही अवस्था पशुओं और विभिन्न जीवों के मांस की है। मांसाहारी मनुष्यों ने पालतू पशुओं से लेकर, पक्षियों और

जंगली जानवरों तक को अपना भोजन बना रखा है। इन जीवों में ही इस विष की विभिन्नता नहीं होती, एक ही जीवके विभिन्न अंगों के मांस में विभिन्न परिमाण में यह विष पाया जाता है जैसा कि नीचे के विश्लेषण से कहीं-कहीं पर प्रकट होगा। प्रत्येक मांस को आधा सेर वज़न में लेने पर, सुअर-गुर्दा में चार ग्रेन, ख़रगोश में छः ग्रेन, भेड़ और बकरी में छः ग्रेन से कुछ अधिक, गाय की खाल में सात ग्रेन, गाय की पसली में आठ ग्रेन, तुर्की मुर्ग़ में आठ ग्रेन से कुछ अधिक, चूज़े में नौ ग्रेन, गाय की पीठ तथा पीछे के अंग में नौ ग्रेन, गाय की भुनी हुई बोटी में चौदह ग्रेन, उसकी यकृत् में उन्नीस ग्रेन मांस के जूस में पचास ग्रेन तक यह विष पाया जाता है।

वनस्पतिक पदार्थों में यद्यपि इस विष की मात्रा बहुत कम पायी जाती है, परन्तु पायी थोड़ी-बहुत अवश्य जाती है। प्रत्येक वनस्पति पदार्थ को आध सेर वजन में लेने पर, आलू में अत्यन्त सूक्ष्म, प्याज में उससे कुछ अधिक, मारचोबा में एक ग्रेन, पीलमील में दो ग्रेन, जई के आटा में तीन ग्रेन, हरी कुटवीन में चार ग्रेन और मसूर में चार ग्रेन विष होता है।

शराब में भी यह विष बहुत कम पाया जाता है। जितनी भी शरावें हैं उनमें कदाचित् किसी में प्रत्येक आध सेर शराब में एक ग्रेन से अधिक यह विष नहीं होता। किन्तु चाय में यह विष बहुत परिमाण में पाया जाता है, उसको आधा सेर लेने पर कोका चाय में उनसठ ग्रेन, कहवा में सत्तर ग्रेन और लंका की चाय में एक सौ अस्सी ग्रेन तक यह विष पाया जाता है। अंडा, दूध, पनीर, चावल गोभी आदि में यह यूरिक एसिड नहीं पाया जाता।

ऊपर के उल्लेख से यह तो मालूम ही हो जायगा कि कि में कितना यह विष पाया जाता है। इन पदार्थों से बना हु भोजन खाने से और उसका ठीक-ठीक पाचन हो जाने पर विष साधारणतया, विशेष हानि नहीं पहुँचाता। किन्तु ठीक-ठी उन पदार्थों का पाचन न होने पर और दस्त के साफ न हों पर यह पेट में ही रुक जाता है, इसका रुक जाना ही हानि कारक है और जिन अवस्थाओं में यह अधिक समय तक एकत्रि हुआ करता है, उनमें यह बड़े भीषण रोग उत्पन्न करता है। विशेष कर उन परिस्थितियों में जब यह विष शरीर से नहीं निकलता और लगातार रुक कर शरीर के रक्त के साथ मिश्रि हो जाता है। यहाँ पर यह एक प्रसिद्ध डाक्टर की कही हु बात सत्य प्रमाणित होती है कि संसार में एक ही रोग है औ उस रोग का सम्बन्ध पेट की ख़राबी से है। यदि पेट में के ख़राबी न हो तो कभी कोई रोग हो ही नहीं सकता।

शरीर में इस विष के रुक जाने या एकत्रित हो जाने दो विशेष कारण हुआ करते हैं, या तो यह रक्त के सा मिश्रित हो जाता है अथवा शरीर के किसी जोड़, या अंग बैठ जाता है। इन दो अवस्थाओं में यह विष शरीर से निकल कर, विभिन्न रोगों की उत्पत्ति करता है। जब यह रक के साथ मिश्रित हो जाता है तो उससे मस्तक की बीमारियाँ हिस्टीरिया, सुस्ती, नींद का अधिक आना, श्वास-रोग, जिग की ख़राबी, अजीर्ण रोग, शरीर में रक्त की कमी आदि बहुत-सी बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं, और जब वह किसी गांठ या जो में रुक जाता है तो उससे वात-रोग, गठिया-रोग, नाक और कलेजे की दाह, पेट में विभिन्न रोग, शरीर में विभिन्न दर्द मेलेरिया, निमोनियाँ, ज़ुकाम, इनफ़्लूएंजा और क्षयी रोग उत्पन्न होते हैं।

जिस रक्त में यूरिक एसिड मिल जाता है, उसमें ठंढक हुँचने से या किसी प्रकार की खटाई पैदा होने से यूरिक सिड उस रक्त से पृथक हो जाता है। इसकी यह अवस्था कट करती है कि यूरिक एसिड के मिल जाने से, रक्त की गति स्थिर हो जाती है। डाक्टर हेग ने जिन्होंने इसके सम्बन्ध में हुत अधिक छान बीन की है, लिखा है—

'मैंने जहाँ तक परीक्षा की है, इस बात को निश्चित रूप से ाया है कि यूरिक एसिड की गति में अन्तर होने से सूक्ष्म और बारीक नसों में रक्त का दौड़ा रुक जाता है। अर्थात् जो हुत बारीक और पतली नसें होती हैं, उनके अन्दर जो रक्त बराबर गतिमान रहा करता है, रक्त की उस गति में तुरन्त अंतर पड़ जाता है, जब यूरिक एसिड की अवस्था में कुछ अन्तर होता है। ऐसी दशा में मैंने निश्चय किया है कि जब खून में यूरिक एसिड अधिक परिमाण में हो जाता है तो रक्त की गति में बहुत-सी स्थिरता उत्पन्न हो जाती है और जब रक्त में उसका परिमाण कम हो जाता है तो रक्त शरीर की सभी छोटी-बड़ी नालियों में समान रूप से गतिमान रहता है। इससे यह साबित होता है कि सूक्ष्म नसों पर यूरिक एसिड का बहुत शीघ्र प्रभाव पड़ता है।"

यह बात सही है और सन्देह होने पर बिना किसी यंत्र की सहायता के अनुभव की जा सकती है, अर्थात् अपनी किसी उँगली को थोड़ा-सा जोर से दबाने पर वह सफेद हो जायगी और छोड़ने पर फिर लाल हो उठेगी। डाक्टर हेग का यह भी कहना है कि जो लोग माँसाहारी होते हैं उनकी उँगली में इतनी जल्दी सफेदी नहीं आ सकती जितनी कि वानस्पतिक पदार्थों का भोजन करने वाले की उँगली में।

इस यूरिक एसिड के रुक जाने का एक और भी कारण और जिसके सम्बन्ध में कुछ संक्षेप में पहले ही लिखा भी ग है। यूरिक एसिडदार पदार्थों का सेवन करने से जिन अ स्थाओं में मल निकलने से रुक जाता है उनमें यह विष श की किसी हड्डी या पट्ठे में बैठ जाता है और वहाँ पर धीरे-धी अधिक परिमाण में एकत्रित होता रहता है और उसके वा वायु जनित गांठों, हड्डियों, पुट्ठों आदि में अनेक बीमारि पैदा करता है। शरीर में यूरिक एसिड होने न होने की पहचा बड़ी आसानी से और दूसरे ढंग से हो सकती है। परिश्र पूर्ण कार्य करने से या व्यायाम करने से जब अधिक सुस्ती आत है, तो समझ लेना चाहिये कि शरीर में यूरिक एसिड मौजू है। क्योंकि जब यह विष शरीर में नहीं होता और परिश्र तथा व्यायाम आदि किया भी जाता है तो उसकी थकाव और सुस्ती बहुत शीघ्र दूर हो जाती है और इसलिए कि हड्डियों नलियों और नसों में जो रक्त प्रवाहित होता रहत है, वह तुरन्त फिर नवीन रक्त के द्वारा नई स्फूर्ति उत्पन्न क देता है। परन्तु जब यूरिक एसिड शरीर में होता है तो व रुधिर की गति को स्थिर कर देता है और परिश्रम तथ व्यायाम द्वारा शरीर के जोड़ों, पुट्ठों आदि में जो क्लान्ति उत्प हो जाती है, उसको दूर करने के लिए नवीन रक्त शीघ्र नहीं पहुँचने पाता, जिससे नवीन स्फूर्ति शीघ्र नहीं उत्पन्न होती।

यह बात सभी को मालूम है कि जो लोग परिश्रम नहीं करते और न व्यायाम ही करते हैं, वे सदा निर्बल और रोगी रहा करते हैं, इसका कारण क्या है? बात यह है कि पारिश्र मिक कार्य करने से जो शरीर में पसीना आता है उस पसीने में हमारे शरीर से रक्त का यूरिक एसिड निकल आता है। उसका शरीर से निकल जाना ही शरीर का स्वास्थ्य और

पुरुषार्थ है। उसका रुक जाना या शरीर में रुधिर, हड्डी या नसों जोड़ आदि में बना रहना शरीर को निकम्मा, रोगी और निर्बल बनाता है। सभी लोग जानते हैं कि पक्के महलों और बंगलों में रहने वाले स्त्री-पुरुषों और बच्चों के शरीर में वह शक्ति, पुरुषार्थ, स्वास्थ्य नहीं होता जो कि सड़क पर कंकड़ कूटने वाले, खेतों पर काम करने वाले पुरुषों, स्त्रियों और मज़दूर-किसानों के शरीरों में होता है। यह किसी को बताने की आवश्यकता नहीं है कि इन दोनों प्रकार के मनुष्यों के भोजनों और उनके भोजन के पदार्थों में किस प्रकार अंतर होता है। दोनों के शरीरों में इस विशाल अंतर होने के दो बड़े कारण हैं। एक तो यह कि वे मज़दूर और किसान वानस्पतिक पदार्थों के द्वारा बने हुए उन भोजनों को खाते हैं जिनमें यूरिक एसिड बहुत कम परिमाण में होता है। दूसरा कारण यह है कि वे दिन-भर इतना परिश्रम करते हैं कि उनके शरीरों में रक्त के साथ जो यूरिक एसिड होता है वह पसीने के साथ शरीर से निकल जाता है।

यह बात देखी गई है और परीक्षा से मालूम हुई है कि यूरिक एसिड विष का प्रभाव प्रातःकाल अधिक रहता है और दोपहर, संध्याकाल कुछ फुरसत सी रहती है। इसी आधार पर मि० हेग ने लिखा है कि "लंडन के अमीर और बड़े आदमी तो प्रातःकाल देर तक सोते ही हैं, सर्वसाधारण की भी यही अवस्था होती जाती है, इसलिए कि उनके भोजनों में मांस का बाहुल्य होता है, और यूरिक एसिड पैदा करने में माँस सब से अधिक है।" वास्तव में यह बात न केवल लंडन या अमेरिका के बड़े आदमियों के सम्बन्ध में है वरन् किसी भी देश में यदि देखा जाय तो यही अवस्था मिलेगी। प्रायः सभी देशों के बड़े आदमी पैसे वाले, समर्थ व्यक्ति माँस तथा इस प्रकार के

भोजन करते हैं जो यूरिक एसिड अधिक उत्पन्न करते हैं इसी के फल-स्वरूप उनको प्रातःकाल बहुत देर तक पड़ता है और उठने पर भी उनकी आँखों का आलस छूटता। साधारण समाज में भी जिनके भोजनों का यूरिक एसिड से होता है, उनकी भी यही अवस्था है। वानस्पतिक पदार्थ जिनके भोजन होते हैं, उनकी उनके शरीरों का चैतन्य मांसाहारी लोगों में नहीं सकता।

मनुष्य के भोजन के विषय में फलों और तरकारियों की आवश्यकता और उपयोगिता दिन पर दिन संसार के बुद्धिमान् और विचार शक्ति अनुभव करते जाते हैं। लोगों का ध्यान इस ओर गया है और वे समझने लगे हैं कि जाति की स्वास्थ्य सम्बन्धी दुरवस्था का कारण उसके अस्वाभाविक भोजन के कारण है। इस ओर लोगों ने बड़े-बड़े अनुसन्धान करने प्रारम्भ कर दिये हैं। और उनमें से जो जिस नतीजे पर पहुँचते हैं, अपने विचारों को बराबर प्रकट करते हैं। संसार के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष, महात्मा गांधी ने फलों के ऊपर कई बार लिखा है और उन्होंने स्वयं अपने जीवन का अधिक समय केवल फलाहार करके बिताया है, ऐसा करने पर उनके जीवन को जो शक्ति, पुरुषार्थ और आरोग्य प्राप्त हुआ है, वह सब उस प्राकृतिक भोजन का ही एक परिणाम, उन्होंने स्वीकार किया है। मि० पावल ने अपनी अँगरेजी पुस्तक में, इसके सम्बन्ध में कुछ लोगों की सम्मतियाँ लिखी हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि अस्वाभाविक और हानिकारक खाने की चीजों का समाज में भंडाफोड़ होता जाता है। इस प्रकार की सम्मतियाँ यहाँ पर दे देना अनावश्यक न होगा। डाक्टर प्रोक्स ने लिखा है—

यूरिक एसिड उत्पन्न करने वाले पदार्थों के भोजन करने वालों की अवस्था उस आदमी की भाँति है जो अपनी जेब में बारूद भरकर आग वाले कारखाने में घूमता है। जिसमें आग की एक चिनगारी की ही केवल कमी रहती है और उसकी प्रत्येक घड़ी आशंका की जाती है।

विलायत में गो-मांस की चाय खाने की बहुत प्रथा है, यह बीफ़टी (Beaf tea) के नाम से प्रसिद्ध है। यह चाय गौ के मांस द्वारा तैयार की जाती है, आरम्भ में बताया जा चुका है कि गौ के मांस में कितना यूरिक एसिड होता है। इस बीफ़टी का अनुचित प्रभाव देखकर और अनुभव करके मि० राबर्ट बारथोले ने लिखा है—

"यह बात भलीभाँति अब समझ में आ गई है कि बीफ़टी के प्रयोग से कुछ उत्तेजना के अलावा और कोई फ़ायदा नहीं होता। बल्कि बहुत अंशों में वह नुकसान ही पहुँचाता है।"

सर विलियम राबर्ट्स का कहना है कि "बीफ़टी को किस प्रकार मनुष्य का आहार समझना बड़ी भूल करना है। वह तो एक प्रकार से मादक पदार्थों की भाँति उत्तेजना मात्र का प्रवर्तक है। और अन्त में बहुत दूषित अंश उत्पन्न करती है।"

बीफ़टी के सम्बन्ध में एक बार प्रकाशित हुआ था कि "जो स्त्रियाँ बीफ़टी तैयार करती हैं और उनका उपयोग करती हैं, वे किसी प्रकार यह नहीं समझतीं कि उसमें मनुष्य के भोजन का अंश बिलकुल नहीं होता। बहुत से रोगियों के साथ देखा गया है कि बीफ़टी ने उनको बहुत हानि पहुँचाई है। इस-लिए कि बहुत दिनों से उनका यह आहार हो रहा था।"

अमेरिका के एक यूनीवर्सिटी के डाक्टर साहब ने लिखा

था कि जो लोग मांस के शोरवे का आहार करते हैं, वे ऐसी गलती करते हैं जिसके फल-स्वरूप उनको अनेक के कष्ट भोगने पड़ते हैं।

मि० ए० एच० अमीन ने लिखा है—मांस को भोजन भना और भोजन के स्थान पर उसका प्रयोग करना गलती है। ऐसी भूलों के परिणाम-स्वरूप बुरी-बुरी बी में पड़ना होता है।

समाज में मांसाहार के बढ़ते हुए परिणाम को और उसके भयंकर परिणामों को अनुभव करके डा० टी०आ आलिसन ने उन लोगों को चुनौती देते हुए लिखा है जो मांस हार के पक्ष में हैं, कि जो कोई मांस को गेहूँ के आटे से उपयोगी प्रमाणित कर देगा उसको पन्द्रह सौ रुपये इनाम दिये जायँगे।

डाक्टर ब्रिटन हे का कहना है कि मैंने अपने अनुभव यह सम्मति निश्चित की है कि बीफ़टी के लिए जो प्रयोग किया जाता है वह मनुष्य के लिए बहुत हानिकारक है

मि० डब्ल्यू डंकन का कहना है कि लोगों का यह वि है कि मांस के भोजनों से सर्दी, जुकाम, इन्फ्लुएञ्जा बीमारियाँ दूर हो सकती हैं, मिथ्या धारणा है। उनको ज चाहिए कि मांसाहार से एक प्रकार का ऐसा विष शरीर प्रवेश करता है जो इन बीमारियों को शरीर में पैदा है।

बीफ़टी के सेवन से मनुष्यों के स्वास्थ्य को जो हुई है और उसके द्वारा उत्पन्न हुई भिन्न-भिन्न बीमारियों जो सर्वसाधारण की मृत्यु हुई है, उसका अनुमान और उससे कातर होकर डाक्टर मिलस फ़ोदागल ने है—

लोगों में वीफ़टी का प्रचार बराबर बढ़ता जाता है, उससे इस क़दर ज़्यादा हानि हो रही है कि केवल मेरे ही न जाने कितने मित्र सम्बन्धी और शुभचिन्तक मर गए। उनकी मृत्यु का एक-मात्र कारण यह था कि उनको वीफ़टी दी जाती थी। इस बीफ़टी के द्वारा इतनी अधिक मृत्युएँ होती हैं कि उसके सामने नैपोलियन का भयानक युद्ध कोई चीज़ नहीं है।

इस लेख में अकारण रोगों के पैदा होने का कारण और क्रम भलीभाँति दिखाया गया है, हम लोग जो बिना सोचे-समझे कोई भी भोजन कर लिया करते हैं और सभी को भोज्य समझ लेते हैं, इस लेख को पढ़कर हमारे हृदय का वह मिथ्या भाव उड़ जायगा और हम समझने लगेंगे कि हमें वास्तव में किस प्रकार का भोजन करना चाहिये और किससे हमको क्या लाभ और किससे क्या हानि हो रही है।

भोजन से जो शरीर में यूरिक एसिड उत्पन्न हो जाती है उसका शरीर से निकलना बहुत आवश्यक है और उसके निकालने के लिए परिश्रम पूर्ण कार्यों और व्यायाम से बढ़कर दूसरा कोई मार्ग नहीं है जिससे हमारा सम्पूर्ण शरीर एक बार पसीने से ख़ूब नहा जावे।



फलाहार क्यों सर्वोत्तम है ?

भोजन के प्रत्येक पदार्थ की वैज्ञानिक विवेचना !

मनुष्य के खाने-पीने के सम्बन्ध में पिछले पृष्ठों में यथा-स्थान कुछ बातें बताई गई हैं किन्तु उनका क्रम और उचित उपयोग अभी तक नहीं बताया गया। यहाँ पर भोजन की वैज्ञानिक विवेचना करके यह निश्चय करना है कि मनुष्य के अन्य भोजनों की अपेक्षा फलों का सेवन क्यों सर्वोत्तम है !

प्रारम्भ में मनुष्य के शरीर की उपमा रेलगाड़ी के इंजन के साथ दी जा चुकी है। मनुष्य के शरीर-यंत्र को सुगमता से समझने के लिए यहाँ पर फिर उसी इंजन का आश्रय लिया जाता है इंजन जब काम करता है, तो उसके पहले ही उस गर्मी उत्पन्न करने की आवश्यकता होती है जिसके लिए उस कोयला और पानी का प्रयोग किया जाता है। दूसरी बा उसमें काम करने से कल और पुर्ज़े—सभी छोटे और बड़े घिस रहते हैं, इसके लिए ऐसी चीज़ों का प्रयोग करना पड़ता जिनसे उनकी मरम्मत होती रहती है। तीसरे उसके कल पुर्ज़ को सहज ही गतिमान बनाने के लिए तेल की आवश्यकत पड़ती है। मनुष्य के शरीर में पेट इंजन है, इस इंज के द्वारा ही सारे शरीर का काम होता है। पेट में ज भोजन पहुँचता है, उसकी गर्मी शरीर में शक्ति, उत्तेजन उत्पन्न करती है, और इस अवस्था में ही शरीर कार्य करने यो योग्य होता है। इसके बाद, कार्य करने से शरीर के अंग-प्रत्यं जो घिसते रहते हैं और आगे के लिए अपनी शक्ति का ह्रास करते हैं, उसको पूर्ण करने के लिए हमें आवश्यकता होती है।

तीसरी बात, जिस प्रकार इंजन के कल-पुर्ज़ों के लिए तेल अथवा चिकनई की ज़रूरत होती है, उसी प्रकार हमारे शरीर के लिए भी ज़रूरत होती है, इन तीन बातों के लिए हमें शरीर का प्रबन्ध करना पड़ता है। शरीर की ये तीनों आवश्यकताएँ हमारे भोजन से ही पूर्ण होती हैं। इसलिए हमें उस भोजन की आवश्यकता होती है जिससे हमारे शरीर की ये तीनों आवश्यकताएँ पूर्ण हो सकें।

हमारे शरीर की इन तीन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किन-किन वस्तुओं की आवश्यकता है, इस बात का निश्चय करके हमें आगे बढ़ना चाहिए। उन आवश्यकताओं में सबसे पहले और सबसे अधिक पानी की आवश्यकता होती है। काम के कारण शरीर के अंग-प्रत्यंगों को जो क्षति पहुँचती है, उसको दूर करने लिए पानी ही उपयोगी होता है। इसके पश्चात् शरीर में शक्ति उत्पन्न करने के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है उसको डाक्टरी में प्रोटीन कहते हैं। यह प्रोटीन वास्तव में नाइट्रोजन है जो अंडे की सफेदी, दूध की सफेदी और गेहूँ के लवाब आदि में मिलता है। तीसरी आवश्यकता नमक की है, इसके द्वारा शरीर के अवयवों को अनेक प्रकार की सहायता मिलती है। इसके साथ ही उन तत्वों की भी आवश्यकता होती है जो तेल तथा चीनी का अंश पैदा करते हैं।

शरीर की इन तीन प्रकार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए चार प्रकार के तत्वों की जरूरत पड़ती है। पानी, प्रोटीन, नमक और तेल-चीनी। ये चार प्रकार के तत्व प्राप्त करने के लिए हमें भोजन की आवश्यकता है। इस विवेचना से स्पष्ट रूप से मालूम हो जाता है कि मनुष्य का भोजन वही है

जो इन तत्वों को प्रदान कर सकता है। इन तत्वों के प्रदान करने वाले भोज्य पदार्थों के सम्बन्ध में, आगे चलकर अलग-अलग विश्लेषण किया जायगा। किन्तु उसके पहले इन तत्वों के सम्बन्ध में कुछ बातों का और लिख देना आवश्यक जान पड़ता है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, आहार में पानी की सबसे अधिक परिमाण में आवश्यकता है। शरीर-विज्ञान के विद्वानों ने निश्चय किया है कि शरीर में पानी का अंश इ- त्तर प्रति शत है। शेष उन्तीस फीसदी में बाक़ी वस्तुएँ हैं। इससे ज़ाहिर होता है कि पानी शरीर के लिए कितना आवश्यक है। इसके बाद प्रोटीन की आवश्यकता होती है। प्रोटीन ही शरीर में शक्ति और पुरुषार्थ उत्पन्न करता है। जिन भोजन पदार्थों में इसकी कमी होती है, उनके खाने से मनुष्य की शक्ति दिन पर दिन क्षीण होती जाती है। जिनको इस बात का ज्ञान नहीं होता और ज्ञान न होने से, बिना इस बात को समझे बूझे जो लोग भोजन खाया करते हैं, वे अपनी समझ में भोजन करते हैं और संतोषजनक परिमाण में करते हैं, परन्तु उससे उनको वह लाभ नहीं होता जो वास्तव में उनको होना चाहिए। इसका फल यह होता है कि खाते-पीते रहने पर भी शरीर की शक्ति क्षीण होती जाती है और उनके शरीर का पुरुषार्थ अव्यक्तरूप से अदृश्य होता जाता है।

शरीर-शास्त्र के विद्वानों ने इस प्रोटीन को कितना अधिक महत्व दिया है, इसको प्रकट करने के लिए कुछ सम्मतियाँ दे देना यहाँ पर आवश्यक है। प्रोटीन की उपयोगिता और शरीर में उसकी आवश्यकता का अनुभव करते हुए एक विद्वान ने लिखा है—

"हमारे शरीर के लिए प्रोटीन बहुत आवश्यक है, नित्य के कार्यों में जो शक्ति हमारी व्यय होती है, उसको हम प्रोटीन के द्वारा प्राप्त करते हैं। इसलिए यदि यह कहा जाय तो अनुचित न होगा कि प्रोटीन, हमारी जीवन-शक्ति है। शरीर के लिए आवश्यक इन तत्वों से लाभ उठाकर जीवन न केवल सुख के साथ बिताया जा सकता है वरन् मनुष्य बहुत दिनों तक जीवित रह सकता है।"

शरीर-विज्ञान के एक प्रोफ़ेसर साहब ने लिखा है कि "प्रोटीन हमारे शरीर के लिए बहुत आवश्यक है, इसलिए जिन पदार्थों में यह प्रोटीन अधिक पाया जाता है, वही वास्तव में हमारे खाने के पदार्थ हैं, जिनमें प्रोटीन की मात्रा नहीं होती, उनका खाना, शरीर के लाभ के लिए व्यर्थ है।"

प्रोटीन की आवश्यकता पर भिन्न-भिन्न लोगों ने विभिन्न रूप से अनुभव किया है, और प्रत्येक अवस्था में लोगों ने इसको शरीर के लिए आवश्यक पाया है। एक डाक्टर साहब ने लिखा है—शरीर में जिन तत्वों की आवश्यकता होती है, उनमें प्रोटीन सब से अधिक आवश्यक और उपयोगी है। हम नमक के बिना काम चला सकते हैं, परन्तु प्रोटीन के बिना तो हमारा जीवन ही निकम्मा और मुर्दा हो जाता है। प्रोटीन हमारे लिए बहुत आवश्यक है। उसके बिना हमारा काम चल सकना असम्भव है।

इन सम्मतियों से पता चलता है कि हमारे शरीर को शक्ति और सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए जिस तत्व की आवश्यकता होती है, वह प्रोटीन है और वह किस प्रकार हमारे लिए आवश्यक है।

चीनी और नमक की ज़रूरत है, परन्तु इन तत्वों का कितना कितना परिमाण हमारे लिए आवश्यक है। क्योंकि उसका परिमाण अलग-अलग न मालूम होने से कौन भोजन कितना हमारे लिए आवश्यक है, इसका क्रम समझना कठिन है। इस लिए इन तत्वों का कितना किसका परिमाण हमारे भोजन में होना चाहिए, इसके सम्बन्ध में शरीर-शास्त्र के सभी विद्वानों और डाक्टरों ने जिसे स्वीकार किया है, उसी के आधार पर यहाँ उल्लेख किया जाता है। मि० ड्यूली नामक एक प्रसिद्ध विद्वान ने लिखा है कि एक साधारण आदमी को अपने शरीर की रक्षा के लिए, इस प्रकार के पदार्थों का प्रतिदिन भोजन करना चाहिए जिनमें उसे सामान्यतः प्रोटीन साढ़े चार औंस, चिकनाई तीन औंस, चीनी चौदह औंस और नमक एक औंस प्राप्त हो सके। इस प्रकार रोज़ एक साधारण मनुष्य को अपने भोजनों से साढ़े बाईस औंस इन तत्वों का मिलना चाहिए। जिससे वह सदा शक्तिशाली, निरोग और अधिक आयु वाला हो सकेगा।

अब, हमें मनुष्य के वर्तमान भोजन के पदार्थों पर विचार करना चाहिए और हिसाब लगाना चाहिये कि उनमें कितना अंश किसका पाया जाता है। इसके लिए हमें यह जानना चाहिये कि आजकल भोजन दो प्रकार से किये जाते हैं, वानस्पतिक और पाशविक। वानस्पतिक वे हैं जो हमको वनस्पति से प्राप्त होते हैं और पाशविक वे हैं जो हमको पशुओं से प्राप्त होते हैं। वनस्पति के द्वारा प्राप्त होने वाले पदार्थ इस प्रकार हैं :—

अनाज—गेहूँ, जौ, मकाई, चना, चावल, ज्वार बाजरा आदि।

दाल—मटर, चना, सेम, उरद, मूँग आदि।

सब्ज़ी-तरकारी—आलू, प्याज, गोभी, गाजर, टमाटो, मूली, सलजम आदि।

फल—बादाम, सेव, नासपाती, केला, अंगूर, अंजीर, खजूर मेवा, नारंगी और खूबानी आदि।

पाशविक भोजन—मांस, मछली, पनीर, भेड, चूज़ा, गाय का मांस, भेड़, बकरी, सुअर का मांस और दूध आदि।

इन पदार्थों में से ही भिन्न-भिन्न प्रकार के खाने के सामान तैयार होते हैं। इन सब के साथ नमक का प्रयोग होता है, नमक वास्तव में न तो वानस्पतिक है और न पाशविक। वह तो खनिज पदार्थों में से है जो पृथ्वी से हमको प्राप्त होता है। इस नमक के अतिरिक्त, खनिज पदार्थों में और कोई भी पदार्थ हमारे खाने के उपयोग में नहीं आता। कुछ लोगों का यह भी मत है कि खनिज पदार्थ कोई भी हमारे खाने के प्रयोग में नहीं आने चाहिये। इसी आधार पर वे नमक का भी विरोध करते हैं। इस विरोध में वे लोग न केवल एक आग्रह उपस्थित करते हैं, वरन् अनेक प्रकार से उसे हानिकारक और व्यर्थ प्रमाणित करते हैं। यहाँ पर महात्मा गाँधी की एक बात विशेष रूप से लिखने के योग्य है। महात्मा जी स्वयं नमक के विरोधियों में हैं। एक समय की बात है, उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरी बाई किसी बीमारी से परेशान थीं। बाई जी ने उस बीमारी की चिकित्सा करने की भावना से महात्मा जी से बीमारी के सम्बन्ध में बातें कीं। महात्मा जी ने कुछ सोच कर किसी चिकित्सा आदि की तो व्यवस्था न की और बाई जी से कहा कि तुम नमक खाना छोड़ दो। महात्मा जी की इस बात पर बाई जी को संतोष न हुआ, उन्होंने समझा कि महात्मा जी उनसे हँसी कर रहे हैं, बाई जी ने यह भी समझा कि नमक

भला कैसे छोड़ा जा सकता है जब कि मनुष्य के खाने के लिए सभी प्रकार के भोजन बिना नमक के नहीं बन सकते। उन्होंने महात्मा जी से कहा—"नमक खाना तुम्हीं छोड़ दो।" महात्मा जी ने मुस्करा कर स्वीकार कर लिया, बाई जी की बात पर महात्मा जी ने नमक का प्रयोग छोड़ दिया और आज अनेक वर्ष हो गए पर उनका नमक अब भी छूटा है।

नमक हमारे लिए हानिकारक है अथवा लाभकारक, यह विवेचना करना इस लेख का अभिप्राय नहीं है। खनिज पदार्थों के साथ नमक का भी लोग विरोध करते हैं। केवल इतना ही यहाँ पर प्रदर्शन करना मन्तव्य था। ऊपर की पंक्तियों में वानस्पतिक और पाशविक जो दो प्रकार के पदार्थ गिनाए गये हैं, उनमें किसमें, कितना भोजन का अंश होता है, इसको ठीक-ठीक प्रदर्शित करने के लिए एक छोटे से नक़शे में उनका निम्नलिखित विवरण दिया जाता है और बताया जाता है कि उनमें से किस में किस-किस तत्व का कितना-कितना अंश पाया जाता है :—

पदार्थों के नाम	प्रोटीन की मात्रा	चिकनाई की मात्रा	चीनी और मैदा की मात्रा	नमक की मात्रा	पानी की मात्रा	भोजनांश का ठोस योग
दाल	२५·१	२·३	५५·८	२·८	१·२	८५·६
मेवा	१८·५	५१·६	६·६	२·४	२६·२	८२·२
अनाज	१०·६	२·३	७२·५	२·१	१२·०	८७·८
सूखे मेवा	४·४	१·६	६८·७	२·४	१६·७	७७·१
सब्ज़ीतरकारी	१·४	०·३	८·६	०·८	८७·८	११·१
ताज़ा फल	१·०	०·६	१६·०	०·६	८१·४	१८·५
पनीर	२८·४	३१·०	०·०	४·५	३६·०	६४·०
मांस	१७·०	१७·६	०·०	२·१	६२·६	३७·०
अंडे	१४·०	१०·५	०·०	१·५	६४·०	३६·०
मछली	११·६	१·२	०·०	१·२	८६·१	१·३
दूध	४·०	३·६	५·२	०·८	८६·५	११·८

ऊपर का यह नकशा स्पष्ट प्रकट करता है कि किस पदा में किसका, कितना अंश होता है। यह पहले ही बताया ज चुका है कि हमको भोजन से ही जीवन-शक्ति प्राप्त होती है यह जीवन-शक्ति प्रोटीन, चिकनाई, चीनी और नमक है चारों ही तत्व मिलकर हमारे शरीर के लिए जीवन-शक्ति प्र करते हैं। हमें अपने प्रति दिन के जीवन के लिए चारों वस्तु २२½ औंस के परिमाण में मिलनी चाहिए अर्थात् ४½ औं प्रोटीन, ३ औंस चिकनाई, १४ औंस चीनी व मैदा और १ औं नमक। अब यह समझाने की आवश्यकता नहीं है कि हमा वही भोजन है जिसमें ये चारों वस्तुएँ हमारे शरीर के लि प्राप्त होती हैं और ऊपर के नक़शे में यह विदित हो जाता कि कौन पदार्थ अपने भीतर कितना-कितना अंश, उन वस्तु का रखता है।

मांसाहारी मनुष्यों को भलीभाँति यह समझने की आ श्यकता है कि वे जो भोजन पशुओं से प्राप्त करते हैं, उनमें को छोड़कर कोई ऐसा नहीं है जो मनुष्य को भोजनांश देने पूर्ण रूप से समर्थ हो। मांस-भोजन में प्रोटीन होता है न होता है और तेल का अंश भी होता है परन्तु उनमें चीनी मैदा का अंश बिल्कुल नहीं होता। अब यह बात विचारणी कि प्रोटीन, तेल और नमक ही मिलकर क्या हमारे शरीर हृष्ट-पुष्ट और शक्तिशाली बना रख सकते हैं। यहाँ पर मां के सम्बन्ध में किसी धार्मिक विवेचना से काम नहीं लिया रहा और न किसी धार्मिक बात की आड़ लेकर यही जा रहा है कि मांस और मछली खाना हमारे लिए धर्म-वि है, इसलिए वह हानिकारक है। भोजन का वैज्ञानिक विवे गया है और विज्ञान के सामुदायिक अनुसन्धान के आधार

हमें क्या खाना चाहिए क्या नहीं, इस विवेचन के बाद भी उसको सोचने-विचारने और संसार में आँखे खोल कर देखने की आवश्यकता है। समाज के स्त्री-पुरुषों और बच्चों के स्वास्थ्य, उनकी शक्ति और आरोग्यता को, इस विवेचना की परीक्षा द्वारा आज़माने की ज़रूरत है। इस प्रकार की पूरी छान-बीन के साथ हमें अंत में निश्चय करना चाहिए कि हमारा वास्तविक भोजन क्या है और वह हमारे सुख, स्वास्थ्य बल-पौरुष की किस प्रकार रक्षा करके हमें बहुत दिनों तक जीवित रख सकता है। इसलिए कि समाज में यह समझने वालों की कमी नहीं है जो समझते हैं कि हमारी आयु तो ईश्वर के घर से निश्चित है। यह बात गलत है। और इस प्रकार की धारणा रखने वालों को यह जान लेना चाहिए कि हमारा जीवन हमारे ही हाथों में है। जो लोग सदा रोगी और अस्वस्थ रहा करते हैं, उनकी जीवन-शक्ति, धीरे-धीरे क्षीण होती रहती है और अन्य जनों की अपेक्षा उनका जीवन बहुत थोड़ा हुआ करता है। जो जितना ही रोगी है, उतनी ही उसकी अवस्था छोटी है, जो जितना ही स्वस्थ और आरोग्य है वह उतना ही अधिक अपनी अवस्था रखता है, यह सब लोगों को ध्यान पूर्वक समझ लेना चाहिए और किसी प्रकार के भ्रम और गलत विचारों में पड़कर, अपने हाथों, अपना जीवन नष्ट न करना चाहिए।

हमारे शरीर के लिए प्रोटीन तेल चीनी और नमक का जो क्रम ऊपर बताया गया है, उसी क्रम से उनकी आवश्यकता होती है, यदि उनमें कोई भी एक न मिले तो समझ लेना चाहिये कि हमारे शरीर में कोई न कोई व्यतिक्रम पैदा होना चाहता है। किसी मकान में चार कोने हैं और चारों कोनों पर सुदृढ़ चार स्तम्भ हैं, जब तक वे चारों स्तम्भ ठीक ढंग से

अपना काम करते हैं, तब तक मकान को सुदृढ़ और सार्थ समझना चाहिए और जब उन चार स्तम्भों में एक भी स्तम्भ ढीला पड़ जायगा अथवा गिर जायगा तो मकान का सुदृढ़ रहना कठिन ही नहीं, असम्भव हो जायगा। यही अवस्था हमारे शरीर की भी है। जिन चार प्रकार के तत्वों से हमारे शरीर को जीवन-शक्ति प्राप्त होती है, उन चारों का अपने-अपने क्रम से होना बहुत आवश्यक है। जब उनके क्रम में अन्तर पड़ेगा अथवा उन चार में से एक भी मनुष्य को न प्राप्त होगा तो शेष तीन मिलने वाले, उसके जीवन को जीवन-शक्ति नहीं पहुँचा सकते। इस हिसाब से, यह समझने में किसी को भी अब कठिनाई नहीं हो सकती कि माँस और अंडे मनुष्य को जीवन-शक्ति प्रदान करने का सामान नहीं रखते। यही कारण है कि माँस और अंडे भोज्य पदार्थों में निन्दनीय माने जाते हैं।

अब प्रश्न यह है कि हमारे शरीर की जीवन-शक्ति प्रदान करने वाले कौन-कौन से आहार और किन पदार्थों में हो सकते हैं? इसके लिए उस नक्शे में एक बार देखकर विचार करना होगा। पाशविक भोजनों में, दूध के अतिरिक्त कोई भी हमारे लिए भोजन नहीं है इसलिए कि जिन-जिन तत्वों की हमें आवश्यकता है, वे तत्व पूर्ण रूप में उनसे हमें प्राप्त नहीं होते। इसके पश्चात् हमारे सामने वानस्पतिक पदार्थ हैं। ये पदार्थ हमारे लिए भोजन हो सकते हैं किन्तु वही, जो हमारे आमाशय के अनुकूल हों—हमारे अंग और प्रत्यंग जिनको खा सकें और पचा सकें।

वनस्पति-पदार्थों में जो हमें रुचिकर और अपने अनुकूल प्रतीत हों और जिनको हम बिना पकाए-बनाए, अपने दाँतों से

खाकर पचा सकें, वही हमारे लिए सर्वोत्तम है। इसके लिए बिना अधिक सोचे-समझे और किसी प्रकार की उलझन का अनुभव किए, प्रत्येक व्यक्ति अब समझ सकेगा कि हमारे लिए सब से योग्य, लाभदायक भोजन फलों का सेवन है। इन फलों के सम्बन्ध में एक छोटी-सी गलत धारणा यदि सर्व साधारण के विचारों से निकल जाय तो फिर किसी को अपना स्वाभाविक भोजन अपनाने में और उससे लाभ उठाने में कुछ भी आपत्ति नहीं हो सकती। वह गलत, धारणा यह है कि लोगों की समझ में फलों के आहार से मनुष्य का क्या कभी पेट भर सकता है। उनकी समझ में फल इतने हलके पदार्थ हैं कि उनके सेवन से मनुष्य को पूरी न तो शक्ति ही प्राप्त हो सकती है और न उससे उसका पेट ही भर सकता है। जिन लोगों का यह विश्वास होता है, वे लोग वास्तव में इन बातों का कभी विवेचन नहीं करते और कदाचित् विवेचन की सामर्थ्य भी नहीं रखते। हमें अपने समाज में, खोजने पर बहुत से ऐसे व्यक्ति मिलेंगे जो फलों की शक्ति के सम्बन्ध में बहुत अच्छे उदाहरण ही नहीं हैं, उसका अनुभव भी रखते हैं।

प्राचीन काल में साधु सन्यासी, भोगी और तपस्वी फलाहार ही अपना भोजन समझते थे, उनके जीवन में कितना तेज, कितना प्रताप और पुरुषार्थ होता था, यह कदाचित् किसी को बताने की आवश्यकता नहीं है। रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीता को साथ लेकर जब वन को जाने लगे हैं, तब उन्होंने सीता को समझाया है कि वन में जाकर चौदह वर्ष हमको केवल फलों का आहार करके रहना होगा, नदियों और झरनों का जल पीना होगा और पैदल चल कर रास्ता पार करना होगा। परन्तु रामचन्द्र की इस बात पर सीता को कोई अस्वाभाविकता अथवा आश्चर्य की बात नहीं जान पड़ी। अंत में

तीनों ही जंगल को चले गए हैं और दस-पांच दिन नहीं चौदह वर्ष, उसी फलाहार पर उन्होंने प्रसन्नता के साथ जीवन बिताया है, और अंतिम दिनों में भीषण पराक्रमी लंकापति रावण और उसकी सेना-शक्ति का सामना किया है। रावण और उसकी सेना की शक्ति कितनी भयानक थी यह यहाँ पर बताना, व्यर्थ ही है, कहने की बात यह है कि उसका सामना किया फलों का सुन्दर सात्विक भोजन करने वाले रामचन्द्र ने, लक्ष्मण ने और उस वानर-सेना ने जिनका फल ही एक-मात्र भोजन होता है। हिन्दू-समाज को यह स्मरण दिलाने की आवश्यकता न होना चाहिए कि उस भयानक युद्ध में फलों का भोजन करने वालों की कितनी सफलतापूर्ण विजय हुई थी।

भोजन-सम्बन्धी, सर्वसाधारण की भूल के सम्बन्ध में कितनी गवेषणा के साथ विचार हो रहा है, यह सभी को मालूम नहीं है। इस लेख में जो इसकी वैज्ञानिक छानबीन की गई है, वह कहाँ तक ठीक है, इस पर कुछ प्रसिद्ध विद्वानों और डाक्टरों की यहाँ पर सम्मति देना आवश्यक प्रतीत होता है। डाक्टर एलेक्स हेग का कहना है—

"इस बात के प्रमाण की ज़रूरत नहीं है कि मनुष्य का सब से उत्तम आहार फल है। मैंने अपने जीवन में इसे भली भाँति अनुभव किया है और इस नतीजे पर मैं पहुँचा हूँ कि फलों के सेवन से मनुष्य की आत्मा शुद्ध, बलवान और पवित्र रहती है।"

मि० एडेम स्मिथ ने लिखा है—"भोजन में मांस को सम्मिलित करना, शरीर को नष्ट करने के साथ अपने आयु को जल्दी समाप्त करना है। मनुष्य का भोजन तो फल शाक मात्र है।"

डाक्टर सर हेनरी टाम्सन का कहना है—प्रकृति ने हमारे रीर की रचना इस प्रकार की है जिससे हम फल और वन-पति को अपना आहार बना सकते हैं। हमारे शरीर के लिए जन वस्तुओं की आवश्यकता है, वे सब हमें फलों में ही प्राप्त ोती हैं। मैंने खूब देखा है कि जो वानस्पतिक भोजन करते हैं ौर मांस-मछली से परहेज़ करते हैं, वे स्वस्थ, हृष्ट पुष्ट तथा लवान होते हैं।

डाक्टर एफ० जे० साइफ़स का कहना है—जो लोग सायन विद्या को फलाहार और शाकाहार के विरुद्ध समझते , वे सख्त भूल करते हैं। वास्तव में रसायन का मूलाधार नस्पति ही है। मनुष्य स्वाभाविक वनस्पति और उसके द्वारा लों के योग्य बनाया गया है। यह मनुष्य की भूल है जो सने अपना भोजन उसके विरुद्ध पदार्थों का बना रखा है।

डाक्टर जानवुड एम० डी० का कहना है—एक डाक्टर ी हैसियत से बहुत दिनों तक मनुष्य के शरीर का अध्ययन रने के पश्चात् मैं कह सकता हूँ कि मनुष्य का मांसाहार, स्वाभाविक है और उसके शरीर के लिए बहुत हानिकारक । जो लोग उसका सेवन करते हैं वे वास्तव में अनजान होते उनको मालूम नहीं होता कि इसके भोजन से उनके शरीर ो क्या क्षति पहुँचेगी।

प्रोफेसर ए० विन्टर ब्लायथ ने लिखा है—मनुष्य रीर का अध्ययन करने के पश्चात् किसी प्रकार समझ में हीं आता कि मनुष्य का भोजन मांसाहार हो सकता है, सके लिए तो फल और वनस्पति बनाई गई है।

डाक्टर एडवर्ड स्मिथ ने बड़े ज़ोरदार शब्दों में लिखा —मनुष्य के शरीर के लिए जिस प्रकार भोजन की आवश्य-ता है, वह सब एक मात्र फलों के द्वारा बड़ी आसानी से

प्राप्त होती है। इससे जो उसको शक्ति और सामर्थ्य होती है वह किसी प्रकार दूसरे पदार्थों से सम्भव नहीं है।

प्रोफेसर सेम्ज़वुड का कहना है—फलों और शाक आहार से मनुष्य का जो भोजन प्राप्त होता है, वह उसे दूसरे किसी पदार्थ से प्राप्त होना असम्भव है। जो लोग स्थ्य और बल के लिए मांस का सेवन करते हैं, वे बहुत भूल करते हैं। उसके द्वारा मनुष्य दुर्बल और रोगी बनता है मेरा ज़बरदस्त अनुभव है कि यदि मनुष्य अपने जीवन सुन्दर फलों और वानस्पतिक पदार्थों का प्रयोग करे तो व मनुष्य के सच्चे सुख को प्राप्त करता है।

डाक्टर जोज़िया ओल्ड फ़ील्ड का कहना है—मनुष्य शरीर के लिए जिस प्रकार की आवश्यकता है, वह सब के द्वारा प्राप्त होती है, मुझे आश्चर्य है कि मनुष्य अपने प्राकृतिक भोजन को किस प्रकार भूल गया। जिन लोगों फलों के आधार पर अपना भोजन निश्चय किया है, उन्ह उसकी अपूर्व शक्ति का अनुभव किया है। मनुष्य ने ि ही उनका प्रयोग कम कर दिया है, उतनी ही उनकी पै भी कम होती जाती है।

इस प्रकार एक दो नहीं, बहुत-सी सम्मतियाँ दी जा हैं। परन्तु जितना अधिक उसका विवेचन ऊपर किया चुका है, उसके आधार पर यह भलीभाँति समझ में जायगा कि मनुष्य स्वभाव के विरुद्ध भोजन करके आपको किस प्रकार रोग का कीड़ा बना डालता है। वास्तव में फलों की उपयोगिता और अपने लिए आ भूल गया है। भूल जाने का कारण भी है और कारण पुराना तथा जटिल है किन्तु फलों की ओर मनुष्यों का

जिस प्रकार आकृष्ट हुआ है, उसे देखकर यह सहज ही अनुमान होता है कि यह भूल बहुत शीघ्र सुधरेगी।

स्वास्थ्य और सामर्थ्य के नाम पर मनुष्य जाति कितनी निर्बल हो गई है, यह बात अधिकतर बताने की नहीं है, केवल आँखों से देखने-दिखाने की है। यह रोगी समाज स्वयं ही अपनी अवस्था को आप पहचानने की चेष्टा करेगा, ऐसा जान पड़ता है। यदि वास्तव में सोचा जाय तो हमारे जीवन की प्रायः सभी ख़राबियाँ हमारे भोजन पर अवलम्बित दिखाई देंगी। यदि समाज को अपने स्वभाव के अनुकूल भोजन से अभिरुचि हो जाय तो थोड़े ही दिनों में मनुष्य का जीवन बहुत शान्त, सुन्दर और सलोना बन सकता है।



फलों के सम्बन्ध में संसार के विद्वान

सभी प्रकार की आलोचना के साथ, यह बात निश्चि होगई है कि मनुष्य के लिए फल ही सर्वोत्तम भोजन है। भोज के लिए समाज में जितने पदार्थ काम में आते हैं, प्रायः रूप में सभी की एक अनुक्रमणिका देकर यह भी प्रमाणित क दिया गया है कि वे अन्यान्य पदार्थ, जो फल और वनस्पति प्रतिद्वन्द्वी हैं, किसी प्रकार उपयोगी नहीं हैं। मनुष्य की बना वट, उसकी प्रकृति और शारीरिक शक्तियाँ इस बात का प्रमाण देती हैं कि मनुष्य के भोजन के लिए प्रकृति ने फलों की व्यवस्था की है। इन सभी बातों के समझने के लिए मनुष्य शरीर और फल तथा वानस्पतिक पदार्थों से लेकर अन्यान्य पदार्थों तक की जो वैज्ञानिक आलोचना-प्रत्यालोचना की है और उसके द्वारा जो निश्चय किया गया है, उससे सर्वसाधारण के समझने में कि हमारा वास्तविक भोजन क्या है, कोई कठिनाई न होगी।

इसके अतिरिक्त, पुस्तक के विषय की पुष्टि करने के लिए यहाँ पर एक बात की और ज़रूरत समझ पड़ती है। संसार विभिन्न देशों में लोगों ने, मनुष्य जीवन की इस आवश्यकता अनुभव किया है, और अपने जीवन में, स्वयं इनका प्रयोग किया है। मनुष्यों के भोजन के सम्बन्ध में, संसार में आप दि एक प्रकार का तहलका-सा मचा हुआ है। समाज बड़ी तेज़ी साथ भौतिक उत्थान की ओर क़दम बढ़ा रहा है, परन्तु उस यह ख़ूब देखा कि उसके उत्थान के साथ उसके जीवन के उत्थ

का जो सम्बन्ध है, वह किसी प्रकार संतोषजनक नहीं है। अनेक शताब्दियों से मनुष्य अपनी शारीरिक शक्ति को खोता चला आ रहा है, और उसका यह क्रम इधर कुछ दिनों से और भी अधिक बढ़ गया है। मनुष्य-जीवन की जो यह क्षति हुई है और भविष्य में उसके सम्बन्ध में जो भयंकर आशंका है, उसकी अवस्था से समाज के विद्वान अपरिचित नहीं रह सके। प्रत्येक देश के समाज में कुछ न कुछ ऐसे विद्वान पाये जाते हैं, जिन्होंने इस आवश्यकता और क्षति का भली प्रकार विचार किया है, मानव जाति की इस भावी आशंका ने शरीर विज्ञान-विशारदों का उस ओर ध्यान आकर्षित किया है। उन्होंने बड़ी सावधानी के साथ इस ओर विचार किया है और प्रायः सभी लोग एक ही नतीजे पर पहुँचे हैं। इस प्रकार, जिन लोगों ने इसके सम्बन्ध में अपना मत स्थिर किया है, और जिस नतीजे पर वे पहुँचे हैं, उनसे वे विचार और निर्णय, संक्षेप में किन्तु संतोषजनक विस्तार के साथ, यहाँ पर दे देने की आवश्यकता जान पड़ती है।

उनकी सम्मतियों को देने के पूर्व एक बात लिखना आवश्यक है। मानव जाति के भोजनों में व्यतिक्रम करने का अपराधी कौन है? इस प्रश्न की एक गम्भीर आलोचना करने के बाद, मालूम होता है कि संसार की वर्तमान नवीन सभ्यता के पक्षपाती और प्रवर्तक उसके उत्तरदायी हैं। इस नवीन सभ्यता के पूर्व संसार के उन्नत जीवन पर या तो भारत के अध्यात्मवाद का प्रभाव था अथवा मनुष्य स्वयं नैसर्गिक जीवन का पक्षपाती था। उसके इस प्राकृतिक जीवन को मटियामेट करने का एक मात्र अपराध योरप के समुन्नत राष्ट्रों ने किया है जिसका समर्थन करते हुए एक अँगरेज़ लेखक की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :—

"मनुष्य जितना ही समुन्नत होता जाता है, उतना ही शरीर विज्ञान में वह अपने आप को पतित करता जाता है। समाज का स्वास्थ्य जितना आज रोगी दिखाई देता है, उससे भी अधिक रोगी उसके होने की आशंका है, कारण यह है कि जिन भूलों के कारण हमारे देश के निवासियों ने शरीर का स्वास्थ्य और स्वाभाविक पुरुषत्व खोया है, वे भूलें आज भी लगातार बढ़ती जाती हैं। मांस मदिरा, अंडे चाय कहवा आदि जितनी ही समाज में प्रयोग की जायगी, उतनी ही समाज की अधोगति होगी। सुन्दर स्वास्थ्य और सात्विक भावों को प्राप्त करने के लिए, फलाहार और शाकाहार को छोड़ कर और कोई दूसरा मार्ग नहीं है।"

प्रसन्नता की बात यह है कि जिन देशों ने मनुष्य जीवन की स्वाभाविकता को नष्ट किया है, उन्हीं देशों में, आज ऐसे बहुत से विद्वान और शरीर-विज्ञान के पंडित पाये जाते हैं जिन्होंने इस दुरवस्था के कारणों का भलीभाँति अध्ययन किया है और अपने अध्यवसाय से उन कारणों को दूर करने के लिए प्रयत्न किया है। सभी लोगों ने मनुष्य-जीवन की विपरीत अवस्थाओं का वर्णन करते हुए फलाहार पर ज़ोर दिया है। जिन लोगों ने वनस्पति शब्द का उल्लेख किया है उनका उद्देश्य विशेष रूप से उनके द्वारा उत्पन्न फलों से है। फलों के बाद, सब्ज़ी और तरकारी भी मनुष्य का भोजन है किन्तु वहीं तक, जहाँ तक वह प्रकृति रूप में प्रयोग की जा सके, किन्तु समाज में जहाँ पर सब्ज़ी और तरकारियाँ खाई जाती हैं, वहाँ पर वे भिन्न-भिन्न मसालों के साथ आग में पका और बनाकर खाई जाती हैं, ऐसा करने से उन वानस्पतिक पदार्थों का प्रकृत अंश जो स्वभावतः मनुष्य के जीवन को

और स्वास्थ्य देने वाला होता है, नष्ट हो जाता है जैसा कि विश्वपूज्य महात्मा गाँधी ने लिखा है—

"A vegetable diet is the best after a fruit-diet. Under this term we include all kinds of pot-herbs and cereals, as well as milk. Vegetables are not as nutritious as fruits, since they lose part of their efficacy in the process of cooking, we cannot, however, eat uncooked vegetables."

"वानस्पतिक भोजन मनुष्य के लिए उत्तम है परन्तु फलों के पश्चात्। वनस्पति-पदार्थों के साथ-साथ, प्रत्येक प्रकार की शाक-सब्ज़ी, अन्न और दूध की भी यही अवस्था है। वानस्पतिक पदार्थों में मनुष्य-जीवन के पालन करने का वह गुण नहीं है जो फलों में है। इसलिए कि वानस्पतिक पदार्थ, बिना पकाये हम खा नहीं सकते और पकाने से उनका प्राकृतिक गुण और लाभ मारा जाता है।"

महात्मा जी ने तो फलों के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है, यदि उनकी पूर्ण रूप से सम्मतियाँ दी जाँय तब तो एक पुस्तक के समस्त पृष्ठ इसी में भर जाँयगे। वे फलों की उपयोगिता को कहाँ तक स्वीकार करते हैं, इसको जानने के लिए ऊपर का एक छोटा-सा उद्धरण ही काफ़ी है।

पाश्चात्य देशों के बड़े-बड़े विद्वानों और डाक्टरों ने फलों के गुणों को कहाँ तक और किस प्रकार स्वीकार किया है, इसके लिए निम्नलिखित कुछ सम्मतियाँ दी जाती हैं। मनुष्य का भोजन क्या है, इसपर लेडी डाक्टर अनाकिंग्स फोर्ड ने एक बड़ी उपयोगी पुस्तक लिखी है, उसमें उसने मनुष्य के शरीर की बनावट पर बड़ी गम्भीरता के साथ विचार किया है और

अन्त में उसने मनुष्य की समता, बन्दरों के साथ दी है औ उसी आधार पर उसने निश्चय किया है कि मनुष्य क सर्वोत्तम भोजन फल है। उसने लिखा है—

मुझे ऐसे बहुत-से आदमी मिलते हैं जो मनुष्य के मांसा हारी होने पर विवाद करते हैं। वे मनुष्य के दाँत और आमाशय की बनावट पर यह साबित करते हैं कि उसका मांसाहार होना स्वाभाविक है किन्तु ऐसी अवस्थाओं में बन्दरों को भी मांसाहारी होना चाहिये था, क्योंकि उसके लम्बे, पैने और मज़बूत दाँत तो मांसाहारी होने का और भी अधिक प्रमाण रख सकते हैं। परन्तु ऐसा नहीं है। किसी ने आज तक, किसी बन्दर को मांस का भोजन करते नहीं देखा होगा।

मोसियोपाविट का कहना है—मनुष्य के दाँत और उसके आमाशय की बनावट यह प्रकट करती है कि वह फलाहारी जीव है। ऐसी अवस्था में वह फलों का आहार छोड़ कर अन्यान्य भोजनों का आश्रय लेता है और उनको पचाने तथा उनसे आवश्यक तत्वों का लाभ उठा सकने में वह असमर्थ हो जाता है।

प्रोफ़ेसर अज़ोन ने भी इसी प्रकार की सम्मति देते हुए लिखा है—"मनुष्य के शरीर की बनावट जिन जीवों के साथ मिलती है, वे फलों का भोजन करते हैं। अनुभव से भी यह बात देखी गई है कि फलों को खाकर मनुष्य, जितना स्वस्थ, शक्तिशाली और उत्तम विचारों से पूर्ण रह सकता है, उतना वह अन्य किसी प्रकार के भोजनों से नहीं रह सकता।"

मनुष्य के भोजन के सम्बन्ध में इसी प्रकार का समर्थन करते हुए फ्रांस और इङ्गलैण्ड के बड़े-बड़े डाक्टरों ने स्वीकार किया है कि मनुष्य, स्वभाव से फलाहारी और शाकाहारी है।

जो लोग ग़लती से मांसाहार करते हैं, वे उसका फल भी भोगते हैं। उनको शरीर को किस प्रकार के कष्टों को सहना पड़ता है और किस प्रकार वे रोगी हो जाते हैं, इसको वे नहीं जानते, किन्तु उनके डाक्टरों को यह मालूम होता है। डाक्टर क्लोरेलज़ का कहना है—

मनुष्य न तो मांसाहारी है और न वनस्पति आहारी है। उसके दांत उन पशुओं और जानवरों से नहीं मिलते जो जुगाली करते हैं। उसके आमाशय की बनावट भी उन पशुओं के आमाशय की-सी नहीं होती। यदि मनुष्य के शरीर की बनावट पर भलीभाँति विचार किया जाय, तो मालूम हो जायगा कि वह बन्दरों की भाँति फलाहारी और शाकाहारी है।

प्रोफ़ेसर चार्ल्सवेल्स ने लिखा है—जिनको शरीर-विज्ञान की जानकारी है, उनको यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि मनुष्य को प्रकृति ने फल और शाक खाने के योग्य बनाया है, मनुष्य के दाँत और उसका आमाशय इस बातका स्पष्ट प्रमाण देता है।

इन बातों का बड़ी गम्भीरता के साथ विवेचन करते हुए प्रोफ़ेसर सरजान अज़ो ने लिखा है—मनुष्य के शरीर की बनावट और उसका ढाँचा बन्दरों और वनमानुसों की भाँति बना है, और वह उन्हीं पदार्थों के खाने-पीने के योग्य बनाया गया है जिनको वनमानुस और बन्दर खाते हैं। अर्थात् मनुष्य का भोजन फल है। उसके शरीर को फलों के प्रयोग से जो लाभ हो सकता है, वह लाभ दूसरे पदार्थों से नहीं हो सकता है।

जर्मनी के एक विद्वान् मि० हैकल ने लिखा है—जहाँ तक परीक्षा से मालूम हुआ है, मनुष्य और वनमानुस के शरीर की बनावट आपस में मिलती है। हमारे शरीर की भाँति उसके

भी हड्डियाँ और नसें होती हैं। हाथों पैरों की बनावट अधिकतर रूप में मिलती है। हमारे शरीर के भीतर जिस जो अवयव होता है, वनमानुस के शरीर में वह उसी मिलता है। शरीर-निर्माण की एक-एक बात एक-दूसरे मिलती है। हमारे मुख में बत्तीस दांत होते हैं, उसी वनमानुस के मुख में भी बत्तीस दाँत होते हैं। मनुष्य के आम शय में पाचन-क्रिया के लिए जो विशेषता पाई जाती है, वनमानुस और बन्दरों के आमाशय में पाई जाती है।

डाक्टर जान वुड ने अपने एक लेख में लिखा था— के लिए मांस का भोजन, उसकी प्रकृति से भिन्न है। स्वाभाविक आहार फल और शाक है।

प्रोफ़ेसर विलियम लारेन्स का कहना है—मनुष्य के दाँ और आमाशय की बनावट, मांसाहारी जीवों से बिलकुल भि है। जब मनुष्य के दाँतों, जबड़ों और आमाशय की बनावट विचार किया जाता है त स्पष्ट प्रकट होता है कि वह फला हारी और शाकाहारी जीव मात्र है।"

फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान पियर गेसेण्डी का कहना है—मैं मनुष्य-जीवन का जहाँ तक अध्ययन किया है और जहाँ उस पर विचार किया है, उसके आधार पर मैं गर्व के कह सकता हूँ कि मनुष्य फलाहार जीव है। जो लोग मांसा हारी बताते अथवा, मांस का आहार करते हैं, वे भूल करते और अपने शरीर एवम् जीवन, दोनों को नष्ट करते हैं।

फ्रांस के माननीय विद्वान प्रोफ़ेसर वैरनक्वे ने लिखा है- मनुष्य का शरीर देखकर यह सहज ही जान पड़ता है कि उसका भोजन फल और शाक है। मांसाहारी जीवों के साथ उसका तुलना कभी नहीं की जा सकती। अन्य जीवों में वन

मानुस एक ऐसा जीव है जिससे मनुष्य बिलकुल मिलता-जुलता है। बन्दर और वनमानुस फल और शाक सब्ज़ी खाते हैं, अतएव मनुष्य का भी यही आहार है।

जर्मन के एक नामी विद्वान प्रोफेसर शाफ् व्हूसन ने लिखा है—मनुष्य मांस का स्वभावतः विरोधी है और इस बात का सब से बड़ा प्रमाण यह है कि उसके दांतों और आमाशय की बनावट बन्दरों और बनमानुसों से मिलती है। ये दोनों जीव फल और शाक-सब्ज़ी खाते हैं, मनुष्य का भी स्वाभाविक यही भोजन है।

ऊपर की सम्मतियों और विचारों से बार-बार एक ही बात का समर्थन होता है। मनुष्य के भोजन के सम्बन्ध में और भी बहुत-सी सम्मतियाँ दी जा सकती हैं परन्तु उन्हें अनावश्यक समझ कर यहाँ पर छोड़ दिया जाता है। प्रसिद्ध-प्रसिद्ध डाक्टरों, वैज्ञानिकों और शरीर-शास्त्र के ज्ञाताओं के इन विचारों से स्पष्ट रूप से निश्चय हो जाता है कि मनुष्य यदि अपने इस स्वाभाविक भोजन पर ही अपना निर्वाह करे तो वह बहुत सुखी, स्वस्थ और मनुष्योचित कार्य-पटु बन सकता है।

लोगों ने मनुष्य के भोजन के सम्बन्ध में फलों के साथ वानस्पतिक पदार्थों—शाक सब्ज़ी आदि को भी अनुकूल प्रमाणित किया है, इसमें सन्देह नहीं कि मनुष्य के लिए शाक-सब्ज़ी आवश्यक और उपयोगी भोजन है परन्तु उनमें फल सर्वोत्तम है। शाक-सब्ज़ी के सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि उस अवस्था में खाने के योग्य होती है जब वह आग पर पकाई जाती है। इसके लिए महात्मा गाँधी की एक सम्मति पहले दी जा चुकी है। फलों और वनस्पति के सम्बन्ध में उन्होंने आगे चलकर फिर लिखा है जो विषय की उपयोगिता को और भी

स्पष्ट करता है, इस लिए उसको ज्यों का त्यों नीचे
जाता है—

From this many scient'st have
that man is intended to live, not on meat,
even on all vegetables, but chiefly on
fruits.

वैज्ञानिक ने बड़ी गम्भीरता के साथ यह निश्चय
है कि मनुष्य न तो मांस को अपना आहार बनाकर रहना चाहता है और न शाक-सब्ज़ी पर। वह तो कन्द
फलों को ही विशेष रूप से अपना भोजन समझता है
उसी पर वह जीवित रह सकता है।

इसके बाद वे फिर लिखते हैं और आगे की पंक्तियाँ
वानस्पतिक पदार्थों और फलों की वस्तुस्थिति पर वे
स्पष्ट प्रकाश डालते हैं—

Scientists have found out by
that fruits have in them all the elements
are required for man's sustenance. The pla
tain, the orange, tee date, the grape, the app
the almond, the walnut, the groundnut,
cocoanut—all these fruits contain a large
centage of nutritious elements. The scient
even hold that there is no need for man
cook his food. They argue that he should
able to subsist very well on food cooked by th
Sun's warmth, even as all the lower anim
are able to do and they say that the mo

tritious elements in the food are destroyed in
: process of cooking, and that those things
it can not be eaten uncooked could not have
en intended for our food by Nature.

वैज्ञानिकों ने इस बात की भी परीक्षा की है कि मनुष्य
ज़रूरत के लिए जिस प्रकार के तत्वों की आवश्यकता है,
सब फलों में पाये जाते हैं। केला, नारङ्गी, छुहारा, अंगूर,
ा, बादाम, अखरोट, किशमिश और गरी आदि आदि में
ुष्य को जीवन-शक्ति प्रदान करने वाले शत प्रति शत अंश
ते हैं। इन वैज्ञानिकों का यह भी कहना है कि मनुष्य को
ना भोजन पकाने की कोई ज़रूरत नहीं है। सूर्य की धूप में
हुए फल ही उसके लिए काफ़ी है, इस बात को वे लोग
बित करते हैं। उनका यह भी कहना है कि अन्य जीवों को
ना भोजन पकाने की क्यों आवश्यकता नहीं होती, फिर
ुष्य को क्यों है? उनका कहना है कि पकाने से, पदार्थ की
वन-शक्ति नष्ट हो जाती है। इस लिए जो पदार्थ हम बिना
ाये नहीं खा सकते, वे पदार्थ हमारे लिए कदापि भोज्य
ीं हो सकते।

फलों की आवश्यकता और उपयोगिता पर अब अधिक
ने की ज़रूरत नहीं है।



संसार की जातियों में फलाहार का प्रभाव

मानव समाज में यद्यपि भोजन की व्यवस्था बहुत [illegible] गई है, फिर भी प्रत्येक जाति और समाज में प्राकृतिक [illegible] का उपयोग पाया जाता है किन्तु कहीं पर कम और कहीं अधिक।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि भोजन की प्राकृतिक व्यवस्था को बिगाड़ने वाला नवीन सभ्यता विकाश है। इसलिए संसार के सभी देशों और जातियों यदि समाजिक और व्यवहारिक अवस्था का पता ल[illegible] जाय तो उसके भीतर अभी इस बात के बहुत प्रमाण [illegible] हैं जिनसे मालूम होता है, कि उस प्राकृतिक भोजन का बहुत कुछ प्रयोग होता है। इस लेख में संसार की भिन्न जातियों और समाजों की अवस्थाओं की छानबीन करके देखना है कि जो लोग फलों का भोजन करते हैं, उनके [illegible] में, अन्य मनुष्यों की अपेक्षा, जो अप्राकृतिक भोजनों अभ्यासी हैं, क्या प्रभाव पड़ता है।

प्रत्येक देश और जाति के स्त्री-पुरुषों की भोजन-स[illegible] परिस्थितियों का अध्ययन करने पर, उनके तीन विभाग पड़ते हैं। पहले विभाग में वे लोग हैं जो मज़दूरी या श्रमिक कार्य करते हैं। इन श्रमजीवियों में मज़दूर, किसान [illegible] साधारण स्थिति का ग़रीब-समुदाय है। दूसरे विभाग में [illegible] लोग हैं जो पहले विभाग वालों से कुछ ऊपर हैं और [illegible] अवस्था में मध्यम श्रेणी के गिने जाते हैं। तीसरे विभाग में [illegible] लोग हैं जो सम्पत्ति शाली, रईस, उच्च-शिक्षित और [illegible]

क्ति हैं। इन तीनों विभागों की अवस्था अलग-अलग है। में अन्तिम विभाग अप्राकृतिक भोजनों का बहुत अधिक यासी है। दूसरा विभाग वानस्पतिक पदार्थों का भोजन ता हुआ, यथासम्भव मांस, मदिरा, मछली, अंडा आदि वाभाविक भोजनों का उपयोग करता है। किन्तु पहला भाग प्राकृतिक भोजनों का अधिक अभ्यासी है। वे लोग, ा, अनाज और शाक-भाजी पर ही अपना जीवन निर्वाह ते हैं। यहाँ पर अनाज के सम्बन्ध में थोड़ा सा प्रकाश लना आवश्यक है, अनाज के नाम से जो वस्तुएँ पुकारी ती हैं, वे वास्तव में वानस्पतिक पदार्थ हैं और उनमें तथा ों में कोई अन्तर नहीं है। प्रत्येक अनाज भी फल ही है। तु उनका उपयोग मनुष्य आग में पकाकर या भूनकर ता है इसलिए वे सब फलों की अपेक्षा, मध्यम श्रेणी के फल, अनाज और शाक-सब्ज़ी—ये तीन भोजन प्राकृतिक ा वानस्पतिक भोजन हैं, इनमें फल सर्वोत्तम और अनाज ा शाक-भाजी मध्यम श्रेणी में हैं।

ऊपर की विवेचना के अनुसार, मनुष्य-समाज तीन श्रेणियों विभाजित होता है। तीनों श्रेणियों के अलग-अलग भोजन ा हैं, यह भी ऊपर बताया जा चुका है। अब नीचे प्रत्येक और जाति के लोगों की, इन तीनों श्रेणियों के अनुसार, जन व्यवस्था देखकर इस बात पर प्रकाश डालना है कि में, किसकी कैसी अवस्था है!

सब से पहले हम अपने देश की अवस्था पर विचार करना हते हैं। भारतवर्ष, स्वभावतः अध्यात्मवादी होने के कारण कृतिक भोजनों का और विशेषकर फलों का अनुयायी रहा है न्तु आज उसका वह समय नहीं रहा, इसीलिए उसके विचारों

और सिद्धान्तों का खो जाना असम्भव नहीं है। अन्य जातियों ने उसके खान-पान में, व्यवहार-वर्त्ताव में और भावों में कितना उलट-पलट कर दिया है, यह सब यहाँ की आवश्यकता नहीं है। वरन् वह इतनी साधारण होगई उससे सर्वसाधारण अपरिचित नहीं है। इस अवस्था में खाने-पीने का जीवन भी, कुछ का कुछ हो गया है। फिर भी ऐसी बात नहीं है कि प्रकृति का प्यारा भारत, प्रकृति की ओर बिलकुल विमुख हो गया हो। दू दूसरी और तीसरी श्रेणी के लोग—जैसा कि ऊपर वि किया गया है—प्राकृतिक भोजनों से भिन्न भोजन करते हैं। तीसरी श्रेणी की अपेक्षा, दूसरी की अवस्था संतोष जनक पहली श्रेणी के लोगों में फल और प्राकृतिक भोजन ही पाया जाता है। उनको उच्चकोटि के फल नहीं मिलते, से साधारण स्थानों में जो फल पाये जाते हैं, उन्हीं का वे बड़ी रुचि के साथ उपयोग करते हैं और तरह-तरह से खाते हैं। अनाज के दानों को ये लोग कच्चे और पक्के तरह से प्रयोग करते हैं। दूध, मट्ठा, मक्खन, घी, अनाज, सब्ज़ी और फल—यही उनके भोज्य पदार्थ हैं, देश की नता के कारण, तीसरी श्रेणी के लोगों को ये भोजन भी समय पर पेट-भर नहीं मिलते, फिर भी ये प्रसन्न, प्र परिश्रमी और तन्दुरुस्त होते हैं, देश की इन तीनों श्रेणि लोगों की शारीरिक अवस्था की तुलना करने से, को व्यक्ति यह समझ सकेगा कि वानस्पतिक पदार्थों का करने वाले, अन्य लोगों की अपेक्षा कितने मोटे, स्वस् बलवान होते हैं। जो लोग मूल्यवान किन्तु अप्राकृतिक के अभ्यासी हैं, वे किस प्रकार नाज़ुक मिज़ाज़, दुर्बल शक्ति और सामर्थ्य हीन तथा दुख और कष्टों को

तर होते हैं, यह बड़ी आसानी से समझा जा सकता है। इन
नों श्रेणियों के लोगों को इस अवस्था का कारण क्या है?
ज़दूरों, किसानों और उनकी स्त्रियों में कितना स्वास्थ्य, मांस,
र रक्त होता है, इसका परिचय उनके शरीर देते हैं। उनमें
ाज़ और अदा का सौन्दर्य नहीं होता, उनके वस्त्रों में आँखों
ो चकाचौंध करनेवाली सफाई, तथा चमक-दमक नहीं होती
न्तु उनके शरीरों में स्वास्थ्य और बल होता है, उनके जीवन
, बीमारियों का सहज ही आक्रमण नहीं होता। उनके शरीर
र्दी, गर्मी, तथा अन्यान्य उत्पात सहने की अपूर्व शक्तियाँ
खते हैं। जिन्होंने देहातों की अवस्था का अध्ययन किया है
थवा जो गावों की परिस्थितियों से अपरिचित नहीं है, उनको
ह बताने की आवश्यकता नहीं है कि वहाँ जब संयोगवश कोई
सी बीमारी में ग्रसित होता है तो वह बिना किसी उलझन
ौर चिकित्सा के अपना काम करता रहता है। वह अपनी
स बीमारी की परवाह नहीं करता। वे साधारण विचार वाले
ते हैं बीमारी के सम्बन्ध में, हमने उनको बहुत अधिक यह
हते सुना है कि जितने दिनों का कष्ट बदा है, उतने दिन तो
सका भोग करना ही पड़ेगा। समय हो जाने के बाद ही
ीमारी अच्छी हो सकती है, चाहे दवा की जाय चाहे न की
ाय। हमने खूब देखा है कि वे महीनों बीमार पड़े रहते हैं
ौर अपने आप अच्छे हो जाते हैं।

उन लोगों के शरीरों की इस अवस्था को देखकर क्या कोई
ह बता सकता है कि उनके शरीर इस प्रकार पत्थर और
ोहा क्यों होते हैं? क्या कोई इस बात का उत्तर देगा कि
कृति ने कौन-सी शक्ति उनके शरीरों में भर दी है, जिससे वे
सार के बड़े से बड़े कामों को हँसते-खेलते सहन करते हैं?
मारा यह विश्वास है और कोई भी समझदार व्यक्ति, यदि

सोचेगा त वह समझ सकता है कि उनके शरीरों में इस
की शक्ति उत्पन्न करने वाले फल आदि—प्राकृतिक भोजनों
अतिरिक्त और कोई नहीं है। यह फलों का गुण है—यह
स्वाभाविक भोजनों का परिणाम है ! और कुछ नहीं !!

हम संसार के दूसरे-दूसरे देशों के लोगों की इस
का विवेचन सामने रखकर पाठकों को बताना चाहते हैं
फलों और प्राकृतिक भोजनों में जो गुण है, वह गुण और
अन्य भोजनों से किसी प्रकार नहीं प्राप्त हो सकती। विस्त
भय से अधिक न लिखकर प्रत्येक देश और जाति की
को व्यक्त करते हुए यह बताने की चेष्टा करेंगे कि वहाँ
सब से अधिक शक्तिशाली, स्वस्थ और सुखी कौन लोग
और उनके कौन-से भोजनों का, उनके जीवन के लिए
आशीर्वाद है।

अफ्रीका के लोग स्वस्थ और नीरोग पाये जाते हैं।
कुछ लोग तो बहुत ही परिश्रम-शील और बलशाली होते
उनके बल, पौरुष और आरोग्य की प्रशंसा करते हुए प्रो
राबर्टसन स्मिथ ने लिखा है कि अफ्रीका के लोगों में हों
ढोनेवाले, अद्भुत परिश्रमी और ताक़तदार होते हैं। उनकी
ताक़त को देखकर जब पता लगाया गया तो मालूम हुआ
वे लोग केवल फल, रोटी और दूध का प्रयोग करते हैं।

जिन्होंने अरब के लोगों को देखा है, वे जानते हैं कि
लोग किस प्रकार शरीर के विशाल, फुर्तीले और ताक़त
होते हैं। परिश्रम करने में असाधारण और बलवान
हैं। वे अपने जीवन में केवल फलों और दूध का
करते हैं।

ब्राज़ील के रहने वाले गुलाम लोग बहुत हृष्ट-पुष्ट

ज़बूत समझे जाते हैं। वे अत्यन्त परिश्रमी और अधिक से धिक बोझा अपने हाथों में उठाकर बहुत दूर तक ले जाते । उनके सम्बन्ध में कहा जाता है कि ढाई-ढाई मन के बोरों । लेकर ये दो-दो मील तक बिना रुके और बिना आराम किए, ले जाते हैं। ये लोग बीमार बहुत कम होते हैं। उनका भोजन ल और चावल, रोटी होता है।

रायोडिजेनरो के गुलामों की भी इसी प्रकार प्रशंसा है। नका शरीर बहुत मजबूत और गठा हुआ होता है। लागो- ।यारा के मज़दूरों के लिए कहा जाता है कि ये बहुत तन्दुरुस्त ौर भयानक परिश्रमी होते हैं। पीरू, तोवासों, एण्डेमंज़, ,रु, न्यूहेब्रीडीज़, सैंडविच, जापानियों एवम् अन्यान्य द्वीपों रहने वाले अपने सुगठित शरीर, परिश्रम और बल के लिए हुत प्रसिद्ध हैं। वे लोग फल और रोटी ही अधिक खाते हैं।

कनारी द्वीप के लोग भी बड़े बलवान होते हैं। वज़न में ारी से भारी बोझे को, ये लोग उठाकर बड़ी आसानी से हाँ चाहते हैं, पहुँचा देते हैं। एक बार की घटना है कि नारी के एक मल्लाह बहुत भारी बोझे को अकेले उठाकर हीं अन्यत्र ले गया, उसी बोझे को उठाने में अमेरिका-निवासी चार-पाँच आदमी लगे रहे और असमर्थ रहे। इनके भोजनों के सम्बन्ध में कहा जाता है कि ये लोग मोटी-मोटी रोटी, फल एवम तरकारी खाने के आदी होते हैं।

अमेरिका के चिली-लोग अपने परिश्रम के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं, वे लोग मज़दूर हैं और खानों में काम करते हैं। वे इतना अधिक परिश्रम करते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। *ये लोग अंजीर के फल और रोटी खाते हैं, और अपने कठिन* कामों से दूसरों को चकित कर देते हैं।

चीन के लोग अपनी होशियारी और मज़बूती के मशहूर हैं। वे शरीर में इतने शक्तिशाली होते हैं कि बड़ा बड़ा बोझा लादे वे जहाँ चाहें घूमा करें परन्तु उन्हें कुछ नहीं होता। कैण्टन के रहने वाले कुली तो अपने परिश्रम लिए बहुत विख्यात हैं। वे भारी से भारी बोझा उठाकर जाने में और अपनी-अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने में काम करते हैं। ये लोग अधिकतर फल और व खाते हैं।

रूम में कियरस नामक एक द्वीप है यहाँ के मज़दूर मांस घृणा करते हैं और फलों पर बड़ी रुचि रखते हैं। उनमें जीवन-शक्ति होती है कि सत्तर वर्ष के बुड्ढे भी, जवानों तरह अकड़कर चलते हैं। उनके स्वास्थ्य और पौरुष को कर कभी अनुमान नहीं होता कि वे इतनी अधिक अवस्था हो सकते हैं। उनके शरीर बड़े हृष्ट-पुष्ट होते हैं। उनके विच शुद्ध और संयमशील होते हैं। अपनी ईमानदारी के लिए लोग बहुत प्रसिद्ध हैं।

मिश्र के कृषकों के भोजन की सादगी देखकर होता है। उनके शरीरों में परिश्रम पूर्ण कार्य करने में की शक्ति होती है। वे हट्टे-कट्टे होते हैं। उन लोगों में से नाव चलाते हैं वे बहुत ताक़तदार होते हैं। उनका भोजन और अनाज मात्र होता है। उनके साधारण भोजन का प्रभाव देखकर विस्मय होता है।

इङ्गलैण्ड में लंकाशायर और यार्कशायर के मज़दूर फल और तरकारियाँ खाते हैं किन्तु परिश्रम करने में बलवान होते हैं। यह देखा जाता है कि उनके साथ जो मांस मदिरा और मछली का सेवन करने वाले होते हैं

नका मुकाबिला नहीं कर सकते। इसका फल यह होता है कि इन मांसाहारियों की अपेक्षा उनको वेतन भी अधिक मिलता है।

इंगलैण्ड के देहातों के सम्बन्ध में मि० किंग्सफोर्ड ने लिखा है कि पहले ज़माने में यहाँ के देहातों में मांस-मदिरा का बड़ा परहेज़ किया जाता था। उस समय यहाँ के निवासी बड़े ताक़तदार होते थे। आज भी उनमें बहुत कुछ परहेज़ की मात्रा पाई जाती है, किन्तु उन्हीं लोगों में जो ग़रीब तथा मज़दूर हैं और इसीलिए दूसरों की अपेक्षा वे ग़रीब और मज़दूर शक्तिशाली तथा बलवान पाये जाते हैं। यहाँ के लोगों में देखा जाता है कि जो मांस का आहार करते हैं, पचीस वर्ष की अवस्थाओं में ही, उनके शरीर का बहुत अधिक ह्रास हो जाता है। यह भी देखा गया है कि मांसाहारी परिवारों के घरों के लड़के और लड़कियाँ भी स्वस्थ और मज़बूत नहीं होतीं।

मि० स्माइल ने किंग्वरलैण्ड के देहातों की अवस्था पर लिखा है कि यहाँ पर जो मांस-मदिरा का उपयोग करते हैं उनकी अपेक्षा वे लोग यहाँ काफ़ी स्वस्थ, बलवान और परिश्रमी पाये जाते हैं जो दूध, फल, रोटी और तरकारी खाते हैं और सदा उसी प्रकार के भोजन पर अपना निर्वाह करते हैं।

मि० हेनरी ने एक स्थल पर लिखा है कि प्राचीन काल में अंगरेज़ लोग अत्यन्त बलिष्ट, सुगठित शरीर और परिश्रमी होते थे। वे लड़ाइयाँ लड़ने, परिश्रम के कार्य करने, पैरों से लम्बी यात्रा करने आदि में बहुत प्रसिद्ध थे परन्तु जब से उनके भोजनों में प्राकृतिक पदार्थों के स्थान पर मांस, मदिरा और अंडे, मछलियों ने अधिकार किया है तब से उनकी शक्ति बराबर घटती जाती है और उनके शरीर की वह अवस्था भी अब नहीं रह गई। यह भी देखा जाता है कि जो लोग अपने जीवन

में फलों और तरकारियों का सेवन करते हैं वे, ... कहीं स्वस्थ और अच्छे हैं जो भोजनों में इनके विरोधी हैं।

फ्रांस के किसानों और मज़दूरों की अवस्था उतनी नहीं है जितनी कि और जगहों के किसानों और मज़दूरों पायी जाती है। इनमें रोटी के साथ मांस और ... खाने की चाल है वहाँ के कुछ ज़िलों में तो अप्राकृतिक की प्रथा बहुत बढ़ गई है परन्तु कहीं-कहीं पर कम है, कम है, वहाँ पर मांस और मदिरा त्योहारों में उपयोग जाता है। मि० किंगसन फोर्ड ने लिखा है कि यहाँ के ... स्वास्थ्य और शरीर का बल पाशविक भोजन के कारण पर दिन घटता जाता है।

प्राचीन काल में यूनान के लोग केवल फलों ... करते थे। जिस समय की ये बातें हैं, उस समय ... लोग बड़े परिश्रमी, स्वस्थ और बलवान होते थे। उन को फलों और व्यायाम के सम्बन्ध में शिक्षा मिलती थी, इधर, कुछ समय से यहाँ भी मांस के खाने की प्रथा हो गई है। अमीर और बड़े आदमी तो मांस-मदिरा खाते समाज के साधारण लोग भी उसका सेवन करने लगे इसका परिणाम यह हुआ है कि यूनान के लोग सुस्त निकम्मेपन के लिए मशहूर हो रहे हैं। एक पत्र का ... कि यूनान के लोगों की इस शारीरिक अवस्था का उनका मांस-मदिरा का सेवन है।

परन्तु यूनान में ही कुछ लोग पाये जाते हैं जो मांस भोजन से परहेज़ करते हैं। ये लोग अंजीर, अंगूर, किश... और अनेक प्रकार के फलों के साथ रोटी भी खाते हैं। ये ... बहुत मज़बूत, बलवान और परिश्रमी होते हैं। इनका स्व...

सदा शान्त और प्रसन्न रहता है। वहाँ के कारखानों में देखा जाता है कि जो मज़दूर मांस से परहेज़ करते हैं वे लोग फल, रोटी और साग-भाजी खाते हैं और मांस खाने वालों की अपेक्षा बड़े हट्टे-कट्टे तथा परिश्रमी होते हैं।

इंगलैण्ड के मज़दूरों के साथ कोयले की खानों में जो आयरलैण्ड के मज़दूर काम करते हैं वे बड़े परिश्रमी और बलवान पाए जाते हैं। इसका कारण यह है कि वे लोग मांस नहीं खाते।

इटली के किसान बहुत शक्तिशाली और मेहनती होते हैं। वे अपने खेतों में काम करते हुए कभी थकते ही नहीं। उनके शरीर सुन्दर मज़बूत होते हैं। उनका भोजन वनस्पति-पदार्थ होता है।

जापान के सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि वे लोग न केवल मांस से ही परहेज़ करते हैं बल्कि दूध और उससे बनी हुई चीज़ों से भी परहेज़ करते हैं। वे अधिकतर फल शकरकंद चावल और दाल खाते हैं। जिन लोगों ने जापान का इतिहास लिखा हैं उन्होने जापान के निवासियों की बड़ी प्रशंसा की है। उनका स्वास्थ्य, मज़बूत शरीर और उनकी ताक़त सदा प्रशंसा के योग्य है। वे पैदल यात्रा करने में और भारी बोझ उठाने में बड़े बहादुर होते हैं।

माल्टा के लोगों के सम्बन्ध में यह बात प्रसिद्ध है कि वे लोग फलों के अतिरिक्त सब्ज़ी-तरकारी और रोटी खाते हैं। वे लोग बड़े मोटे-ताज़े और बलवान होते हैं, उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा होता है और वे लोग बीमार बहुत कम होते हैं।

मैक्सिको के रहनेवाले, साधारण अनाज की रोटियाँ और फलों का सेवन करते हैं, परन्तु शरीर के वे इतने

बहादुर होते हैं कि माँस खाने वाले मज़दूर उनका किसी प्रकार सामना नहीं कर सकते। उनके अंग इतने मज़बूत होते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है।

नार्वे के लोग बहुत दीर्घायु हुआ करते हैं। वे सदा स्वस्थ और तन्दुरुस्त भी पाये जाते हैं, उन लोगों के सम्बन्ध में विचार करते हुए डा० ब्रुक ने लिखा है कि उनके स्वास्थ्य और दीर्घ आयु के कारण उनके भोजन की सादगी है। कहा जाता है कि नार्वे के कुछ भागों में लोग माँस के भोजन के नाम से अनजान हैं। वे लोग बहुत सुन्दर और तन्दुरुस्त होते हैं। पहाड़ों पर चढ़ने में वे बहुत बड़ा परिश्रम करते हैं।

पैलिसटाइन के कृषक, माँस से इतना परहेज़ करते हैं कि उसको खाना तो दूर रहा, उसको छूते तक नहीं हैं। वे लोग अंगूर, ख़रबूज़ा, तरबूज़, कद्दू बहुत खाते हैं। इसके अतिरिक्त वे चावल, खमीरी रोटी का भी आहार करते हैं। उनके फलाहार के कारण ही उनके दाँत बहुत सफ़ेद होते हैं और उनका शरीर बहुत मोटा-ताज़ा होता है। उनमें बल और पुरुषार्थ बहुत पाया जाता है।

रूस के मज़दूर और किसान बड़े बलवान और परिश्रमी होते हैं। उनमें इतना पुरुषार्थ होता है कि नब्बे वर्ष के बुड्ढे भी मेहनत का काम करते हुए देखे जाते हैं। उनका भोजन बहुत साधारण होता है। वे लोग रोटी के साथ लहसुन का बहुत प्रयोग करते हैं।

सेराल्यून का जल और वायु मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए बहुत ख़राब है लेकिन वहाँ के निवासी फिर भी स्वस्थ और प्रसन्न चित्त पाए जाते हैं। उनके शरीर हट्टे-कट्टे और मज़बूत होते हैं। उनकी अवस्था भी बहुत बड़ी होती है। उनके

स्वी जीवन का कारण केवल यह है कि वे लोग फल बहुत खाते हैं।

समरना के निवासी कितने मज़बूत और ताक़तदार होते हैं, इसका अनुमान इससे हो जायगा कि वहां का एक-एक आदमी चार-पांच मन तक का बोझा उठा सकता है। अमेरिका के एक विद्वान् ने उनके सम्बन्ध में लिखा है कि यहाँ के लोगों का मज़बूत शरीर और परिश्रम देखकर मुझे आश्चर्य होता है। ये लोग फल और बहुत साधारण भोजन खाते हैं।

हस्पानियों में मूर मज़दूरों की दशा देखकर कप्तान सी० ए० चेस ने लिखा है कि उनमें शारीरिक शक्ति बहुत ही अधिक होती है। वे लोग बहुत भारी-भारी बोझ उठाते हैं और वे गेहूँ की रोटियों के साथ अंगूर खाते हैं। यहाँ के लोगों के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि ये लोग ५० मील तक बड़ी आसानी के साथ यात्रा कर सकते हैं और घोड़े की सवारियों के साथ दौड़ लगाने में भी आश्चर्यजनक काम करते हैं।

कुस्तुनतुनियाँ के मल्लाह और माशकी लोग योरप में हट्टे-कट्टे और बलवान होने के लिए प्रसिद्ध हैं। ये निर्भय और साहसी होने के साथ साथ वीर तथा बहादुर भी होते हैं। ये लोग ककड़ी, अन्जीर, शहतूत, खजूर तथा अन्यान्य प्रकार के फल खाते हैं। रोटी और तरकारी खाने की भी उनमें प्रथा है। तुर्क लोग लड़ने में कितने बहादुर होते हैं यह बताने की आवश्यकता नहीं है। वे स्वस्थ और परिश्रमशील होते हैं। उनका स्वभाव बहुत साधारण और शरीर की बनावट बहुत सुन्दर होती है। उनको वानस्पतिक पदार्थों से बड़ा प्रेम होता है।

प्रायः देखा जाता है कि जब साइकिल चलाने वालों को

दौड़ होती है तो उनमें भिन्न-भिन्न विचारों के लोग स
होते हैं। उन दौड़ों में जो सब से आगे गया है उसके
में पता लगाने से मालूम हुआ है कि उसमें यह विशेषता
कि वह फल और वानस्पतिक पदार्थों का भोजन करता

पैदल की दौड़ में देखा जाता है कि जो लोग
तथा मदिरा आदि का सेवन करने वाले होते हैं, वे
दौड़ में पराजित होते हैं। इस प्रकार की जितनी भी बातें
जाती हैं, उनसे इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है कि फलों
वनस्पति में, मनुष्य-जीवन को पुरुषार्थ प्रदान करने
एक अपूर्व शक्ति होती है।

संसार के भिन्न-भिन्न देशों और जातियों के भोजन
ब्योरा देकर ऊपर जो उनके बल और पराक्रम
किया गया है, उससे भी यह प्रमाणित हो जाता है कि
और वनस्पति-पदार्थों का आहार करने से शरीर में
शक्ति पैदा होती है। संसार के प्रायः सभी देशों में देखा
है कि उनके गरीब, मज़दूर और किसान अपनी
कारण मांस-मदिरा का उपयोग नहीं कर सकते, किन्तु
असमर्थता का परिणाम यह होता है कि उनको उससे
और शक्ति प्राप्त होती है।

महात्मा गाँधी ने इँगलैण्ड के सम्बन्ध में लिखा है—T
are many men in England who have tried a p
fruit diet, and who have recorded the results
their experience. They were people who
to this diet, not out of religious scruples, b
simply out of considerations of health.

इंगलैण्ड में ऐसे बहुत से आदमी हैं जिन्होंने फला

करके, फलों की परीक्षा की है। उनके फलाहार करने का कोई धार्मिक बन्धन नहीं था, बल्कि उसका सम्बन्ध स्वास्थ्य से था, उन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर फलों के भोजन की बड़ी प्रशंसा लिखी है।

फलों की इतनी उपयोगिता होने पर भी, यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि, हमारे शरीर के पोषण तथा उसकी समस्त शक्तियों के विकास की दृष्टि से निर्णीत वैज्ञानिक तथा उत्तम आहार विज्ञान के क्षेत्र में अभी फलाहार को उसका उचित स्थान नहीं दिया गया है। अधिकांश लोगों की यह धारणा है कि हमारे अन्य आहार के साथ साथ फलों का व्यवहार भले ही हो सके, किन्तु स्वतंत्र रूप से फलों को एक मात्र अवलम्ब न बनाना चाहिए। फलाहार को यह स्थान देने के विरुद्ध अनेक दलील पेश की जाती हैं। अभी यहाँ उनकी चर्चा अथवा उनके खंडन में प्रवृत्त न होकर हम उन पोषक आहारों की उपयोगिता ही की परीक्षा करेंगे जो हमारे दैनिक जीवन में स्वीकृत हैं। उनके दोषों को जान लेने के बाद फलों की उपयोगिता को हृदयंगम करने की ओर हमारी सहज ही प्रवृत्ति हो सकेगी।

पोषक पदार्थों में शहद एक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। आहार-विज्ञान के प्रामाणिक अधिकारियों का कहना है कि हमारे दैनिक भोजन में शक्कर का एक अंश अवश्य होना चाहिये, शहद इसी अंश की पूर्त्ति में सहायक हो सकती है। लेकिन शक्कर की जितनी मात्रा हमें शहद से मिलती है उतनी ही कुछ मीठे फलों से भी मिल सकती है। उदाहरण के लिए छुहारे और खजूर का नाम लिया जा सकता है। मीठे फलों का व्यवहार करने में लाभ तो उतना ही है जितना शहद के व्यवहार में है,

साथ ही शहद प्राप्त करने में हमें जिस निर्दयता का देना पड़ता है उससे भी हम बच जायँगे। स्मरण रहे कि की मक्खियाँ अपने लिए जाड़ा के आहार के रूप में हो इकट्ठा करती हैं और हम उन्हें उनके आहार से वंचित यह वस्तु अपने व्यवहार में लाते हैं।

पोषक पदार्थों में ज़ैतून के तेल का भी नाम लिया है। अगर यह शुद्ध रूप में प्राप्त किया जा सके तो उपयोगी है। ज़ैतून के तेल में चर्बी का अंश अधिक होता और इसीके लिए उसका महत्त्व है। लेकिन बादाम, आदि अनेक पदार्थों से भी हम यह आवश्यक चीज़ प्राप्त सकते हैं। ऐसी दशा में जिस वस्तु के शुद्ध रूप में मिल की आशा न हो उसका व्यवहार करने और जिस वस्तु सम्बन्ध में कोई सन्देह करने की गुंजाइश न हो उसकी से आँख मूँदने में बुद्धिमानी नहीं हो सकती।

पोषक पदार्थों में दूध का महत्त्व सभी आहार- ने स्वीकार किया है। निस्सन्देह माँ का दूध बालक के बहुत हितकारी होता है और दूध की सृष्टि में का उद्देश्य केवल बालकों के आहार-प्रदान होने के कारण शायद मनुष्य की अधिक अवस्था होने पर दूध की समस्त आवश्यकताओं की पूर्त्ति करने में असमर्थ हो है; माँ का दूध एक निश्चित अवधि के बाद समाप्त हो दूसरे शब्दों में यही बात इस तरह कही जा सकती है यदि तरुण मनुष्य को दूध की आवश्यकता होती तो प्रकृति उसे माँ का ही दूध दिया करती। ऐसी अवस्था में गाय का दूध पीने की भी आवश्यकता हम नहीं समझते। इस दूध के विरुद्ध दो दलीलें पेश की जा सकती हैं (१) गाय का दूध गाय के बछड़े

लिए बनाया गया है। बछड़े के शरीर की रक्त-सम्बन्धी तथा सायनिक बनावट मनुष्य के शरीर की इस प्रकार की बनावट बिलकुल भिन्न है। ऐसी दशा में गाय के दूध की रसायनिक बना मनुष्य के लिए ठीक ठीक उपयुक्त नहीं हो सकती और से अपने व्यवहार के अनुकूल बनाने के लिए हमें बहुत-सी सरी चीज़ों को मिलाकर मनुष्य के दूध से मिलता-जुलता नाना पड़ता है; गाय का दूध बेशक गाय के बछड़े के लिए अच्छी चीज़ है। गाय के दूध में एक दोष और है। ज़ैतून के ल की तरह कभी कभी वह भी बहुत अशुद्ध रूप में मिलता है। इ० यफ० ब्रश, यम० डी० नाम के एक सज्जन ने मनुष्यों और पशुओं के राजयक्ष्मा रोग के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी है। उसमें एक स्थल में वे कहते हैं—

"दैनिक कार्य्य के कारण मैं डेरी के पशुओं के घनिष्ट सम्पर्क में आता हूँ। मैंने स्वभावतः इनके रोगों के सम्बन्ध में विशेष ध्यान दिया है और मैं यह कह सकता हूँ कि डेरी की अधिकांश गायों में राजयक्ष्मा का रोग रहता है। मैं यह भी जानता हूँ इस रोग के निवारण के लिए कभी कोई प्रयत्न नहीं किया जाता।"

इसी लेखक ने अपनी "दूध" नाम की पुस्तक में लिखा है:—रोगी पशु से प्राप्त किए जाने वाले दूध के द्वारा रोग एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुँचता है। दूध शुद्ध भी हो तो तरह तरह के रोगी व्यक्तियों की छूत से भी वह रोग-संचारक हो जाता है।

ऊपर कहा जा चुका है कि तरुण व्यक्तियों को अगर दूध की आवश्यकता होती तो प्रकृति उन्हें स्वयं देती। तरुणों को प्रोटीन और खनिज लवण की विशेष आवश्यकता होती है।

दूध में इन दोनों वस्तुओं का पर्याप्त मात्रा में मिश्रण होता है।

(२) गाय के दूध के व्यवहार के विरुद्ध दूसरी दलील है कि हम गाय के बछड़े का दूध छीन कर अपने पेट में ड हैं; जिस दूध को पीकर बछड़ा पुष्ट और बलवान होता हमारे कृषि-कार्य्य को बहुत सहायता पहुँचाता उसे हम उसको निर्बल और रोगी तो बनाते ही हैं, अपने को भी पहुँचाने के स्थान में अधिकतर हानि ही पहुँचाते हैं। जो गो-रक्षा के बहुत बड़े समर्थक हैं और उसके लिए गो-हत्या रियों से लड़ते हैं वे सबसे पहिले अपने ही सच्चे गो होने का प्रमाण दें और वह यह कि बछड़े को अपनी माता दूध उतनी मात्रा में और उतने समय तक पीने दें जितने निर्देष स्वयं प्रकृति ने किया है। दूध के स्थान में हम सहज फलों का रस दे सकते हैं जिसमें न किसी प्रकार अशुद्धता सम्भावना है और न जिसको प्राप्त करने में हम पर कि का आरोप ही किया जा सकता है।

पोषक पदार्थों में मक्खन की भी गणना है। कि यदि हम गाय के दूध का ही बहिष्कार कर दें तो मक्खन अस्तित्व ही न रह जायगा। मक्खन का न रहना कि प्रकार शोचनीय न होगा, क्योंकि यह दूध के इतना भी लाभ कारी आहार नहीं। दूसरे तैलाक्त पदार्थों की तरह यह कठिनता से हज़म होता है। बेशक शिकायत यह नहीं है, इससे पेट में दर्द होता है, हमारा कथन है कि यह उन परि को ग्रहण नहीं करता जिन्हें ग्रहण करना प्रत्येक आहार के आवश्यक होना चाहिये। यह मछली के तेल के दूध के रूप रक्त में अपरिपक्व अवस्था ही में प्रवेश करता है और

चर्बी के रूप में इकट्ठा होता है। इसमें पोषण की शक्ति बहुत अल्प है, जो इसमें मिले हुए द्रव्यों की प्रकृति से समझा जा सकता है। इससे तीन से लेकर पाँच प्रति सैकड़ा केसीन और इनने का दुगना पानी पाया जाता है और पदार्थ जो इसमें विद्यमान रहता है तैलाक्त तत्त्व है।

जो लोग मक्खन अधिकतर खाते हैं उनके शरीर से एक प्रकार की गंध आती है जिसका अनुभव उन लोगों को सहज ही हो सकता है जो पशुओं का आहार नहीं करते।

कुछ लोग मक्खन में नमक मिलाकर खाते हैं; लेकिन यह ठीक नहीं। बहुत से उदर-विकार-ग्रस्त लोग चर्बी से तो बचते हैं लेकिन अज्ञात रूप से मक्खन का व्यवहार करके वे वहीं जा पहुँचते हैं। बहुत से लोग दूध पीने से डरते हैं इस लिए कि वह कठिनता से पचता है परन्तु मक्खन के प्रयोग द्वारा भी वही शिकायत हो सकती है।

उक्त निवेदन से यह स्पष्ट है कि मक्खन से जितना हम लाभ समझते हैं उतना होता नहीं।

बहुत से लोग, जो मांस नहीं खाते, शक्ति प्राप्त करने के लिए अण्डों का व्यवहार करते हैं। माता की मांस-निषेधाज्ञा के कारण महात्मा गाँधी ने भी इंगलैण्ड में कुछ दिनों तक अण्डों का व्यवहार किया था क्योंकि उनके मित्रों का यह आग्रह था कि केवल अन्नाहार करके वे इंगलैण्ड में जीवित न रह सकेंगे। अण्डों में पित्त पैदा करने की प्रवृत्ति होती है। एक सप्ताह तक प्रतिवार भोजन करने के बाद अण्डे खाने से आँखों में एक तरह की सफ़ेदी आ जाती है, जो पित्त के अस्तित्व की सूचना देती है। अण्डों में गंधक भी प्रचुर मात्रा में रहता है। उनका एक हिस्सा सफ़ेदी लिए और

दूसरा पीलापन लिए होता है। सफेदी लिए हुये हिस्सा मधुरता से पकाया जाय तो पीले हिस्से से कम हानिक होता है। पीले हिस्से में तीस प्रति सैकड़ा तैलांक होता है। अगर अण्डे खाये ही जायँ तो वह ताज़े हों कि अधिक मात्रा में उनका सेवन न करना चाहिए और व्यवहार अधिकतर जाड़ों में ही होना उचित है। लें शिकायत बाज़ार की शहद, ज़ैतून के तेल, दूध ... दि की द्धता के सम्बन्ध में की जा सकती है वही अण्डों के बारे सम्भव है। जिन चिड़ियों का अण्डा व्यवहार में जाय उनकी सफ़ाई की ओर हमें ध्यान देना चाहिये; वे स्थान में रहें, प्रचुर मात्रा में ताज़ा पानी पियें, उन्हें हवा मिले और वे अच्छा अन्न खाने को पावें। खेद है, ठीक उल्टा देखने में आता है और चिड़ियाँ जो कुछ भी जहाँ कहीं भी मिल गया खा लेती हैं। इस गंदगी अण्डों पर पड़े बिना कैसे रहेगा और जब अण्डों में तो उनसे अण्डे खाने वालों का कष्ट अवश्य ही बढ़ेगा।

जो लोग जिगर की मंदता के रोगी हैं उन्हें मक्खन अण्डों से दूर रहना चाहिए और जिन्हें जिगर ... में बनाये रखना है उन्हें यह दोनों चीज़ें खाते समय रखना चाहिये कि वे ऐसा करके अपनी उस विशेषता खोने की ओर पैर बढ़ा रहे हैं। अण्डों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है, लेकिन यही प्रोटीन बादाम अखरोट अनेक प्रकार के शाकों में पाया जा सकता है।

नैतिक दृष्टि से भी अण्डों का खाना विचारणीय है। सोचिये तो सही, जितने अण्डे हम खाते हैं क्या उतने जीवधारियों का संसार में आना नहीं रोकते। अण्डों का

..मय यदि हम यह भी सोचें कि हम इतने जीवों की हत्या ..र रहे हैं तो शायद हमारी उदर-पूर्ति अथवा स्वास्थ्य-सिद्धि .. लालसा अपनी ही आंखों में निर्दयता पूर्ण दिखलायी पड़े। ..नव-जीवन के इतिहास में एक समय ऐसा था जब जीवों .. प्राण-हरण करके ही हम अपने आपको जीवित रख सकते .. । लेकिन आज जब कि हमें अपना पेट भरने के अनेक ..धन उपलब्ध हैं और हम शारीरिक और मानसिक शक्तियों .. विकास करने के लिये उपयुक्त आहार का चुनाव कर ..कते हैं तब भी उसी प्राचीन प्रवृत्ति को बनाये रक्खें तो कहाँ .. उचित है ? विशेष करके अण्डों ही की सी शक्ति-दायनी ..शेषता से सम्पन्न फलों आदि के रहते भी हमारा ऐसा करना .. भयंकर अन्याय हो जाता है।

पनीर में चर्बी और प्रोटीन की प्रचुर मात्रा पायी जाती है ..केन इसमें अनेक दूषण हैं। (१) यह कठिनता से पचता है .. । इसमें वे सभी त्रुटियाँ होती हैं जो दूध में हो सकती हैं। ..हा जाता है कि इसमें पाचक शक्ति बहुत अधिक होती है ..र स्वयं भले ही न पचे, किन्तु अन्य चीज़ों को अवश्य ही ..पा देती है। लेकिन यह भ्रम है। पनीर में नमक मिलाकर उसे ..छ अधिक समय तक चलाने की कोशिश की जाती है। इस रूप ..तो यह अत्यन्त अस्वास्थ्यकर आहार हो जाता है। पनीर .. जो प्रोटीन पाया जाता है वह भी बादाम अखरोट आदि .. सहज ही मिल सकता है।

ऊपर जो कुछ निवेदन किया जा चुका है उससे यह प्रगट ..ता है कि जिन वस्तुओं को हम पोषक समझते हैं उन्हें प्राप्त ..रने में कभी कभी निर्दयता का सहारा तो लेना ही पड़ता है,

साथ ही उन्हें विशुद्ध रूप में प्राप्त करना बहुत कठिन कभी कभी तो असंभव होता है। फलों की पोषक उल्लेख तो अन्यत्र विस्तार पूर्वक होगा, यहाँ साधारण से यही बतलाने की चेष्टा की गयी है कि उल्लिखित पदार्थों का त्याग कर भी हम अपने शारीरिक और स्वास्थ्य को सुरक्षित बनाये रख सकते हैं।

अगले अध्याय में हम यह बतायेंगे कि जो वनस्पति, अन्न, आदि—हमारे शरीर की शक्तियों का करने वाले बताये जाते हैं, वे किन त्रुटियों से पूर्ण हैं।

शाक-भाजी की तुलना में फलाहार

मांसाहार की अस्वाभाविकता के सम्बन्ध में निवेदन किया जा चुका है। उससे पाठकों की अच्छी तरह आ गया होगा कि मानव जीवन के अथवा विकास के लिए मांस बिलकुल ही है। फलाहार की सर्वोत्तमता के विषय में संसार के विद्वानों की सम्मतियाँ भी पिछले पृष्ठों में दी जा चुकी यहाँ मांसाहार के सम्बन्ध में कुछ भी अधिक न हम केवल उन अन्य आहारों की सदोषता की परीक्षा करेंगे जो हमारे जीवन में प्रभावशाली रखते हैं। उन आहारों में शाक-भाजी, अन्न तथा दोनों के सहायक रूप में मसाले उल्लेख-योग्य हैं। सम्बन्ध में यहाँ जो कुछ निवेदन किया जायगा उससे है, फलाहार की सर्वोत्तमता की बात और भी स्पष्ट जायगी।

डाक्टर टिबुल्स ने "भोजन और स्वास्थ्य" नामक पुस्तक में लिखा है :—जिनका स्वास्थ अच्छा है, जिन्हें पेट की कोई शिकायत नहीं है और जो मुस्तैदी से काम में लगे रहते हैं वे सब तरह की तरकारियाँ, चाहे वे किसी भी तरह पकाई गई हों, बिना किसी हानि की आशंका के खा सकते हैं। हाँ, केवल इतना ध्यान रखना चाहिए कि बहुत अधिक मात्रा में न खायें।"

इससे यह स्पष्ट है कि डाक्टर महोदय साधारण अथवा खराब स्वास्थ्य रखने वालों को सब तरह की तरकारियां खाने की अनुमति नहीं देते। यह एक महत्व पूर्ण बात है जिसे हम सब लोगों को स्मरण रखना चाहिए और ज़ायकेदार दिल लुभाने वाली तरकारियाँ खाकर अपने आपको संकट में न डालना चाहिए। वास्तव में जब नया मौसिम नई नई शाक-भाजियों को लेकर आता है और बाज़ार उनकी ताज़गी से ताज़ा हो जाता है तब उन्हें अपनी रसोई में शामिल करने का प्रलोभन दुर्निवार हो उठता है और मज़े की बात यह है कि जो तरकारी सब से अधिक हानिकारक होती है उसी को देखकर मुँह में पानी भर आता है। लेकिन चाहे जैसे हो हमें अपनी रसना को काबू में रखना होगा, अन्यथा डाक्टर की शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।

यह स्वीकार करना पड़ेगा कि शाक-भाजी भी हमारे जीवन का एक आधार है और उसमें अनेक पोषक द्रव्यों का अस्तित्व है, जिनसे शरीर की रक्षा हो सकती है। उनमें से अनेक में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। लेकिन प्रोटीन की अधिकता ही उन्हें उतना हानिकारक बना देती है जितना स्वयं मांस होता है। ऐसी तरकारियों में मांस की तरह

यूरिक एसिड नामक विष उत्पन्न करने की शक्ति
जिसके कारण शरीर में कार्य्यकारिणी शक्ति का ह्रा
हो जाता है।

आग पर पकाई जाने के कारण तरकारियों की
शक्ति का ह्रास हो जाता है। यही एक बात ऐसी है जो
भाजियों के आहार को फलाहार की अपेक्षा ... महत्व
बना देता है।

तरकारियों के साथ जो मसालों का संसर्ग कराया
है, उससे उनकी उपयोगिता बढ़ने के स्थान में घट
क्योंकि तब एक बुराई के स्थान पर दो बुराइयाँ इकट्ठी
जाती हैं। मसाले से होनेवाली हानियों की चर्चा
करेंगे। निस्संदेह, मांसाहारी होने की अपेक्षा शाकाहारी
से कहीं अच्छा है किन्तु फलाहारी अधिक होना अच्छा
प्रकृति की गोद में विकास पाकर परिपक्व होने वाले फल
प्राकृतिक रूप में अधिक लाभकारी होंगे या सर्वथा
ढंग से आग पर नष्ट-शक्ति हो जाने वाली तर
हमारा हित अधिक मात्रा में करेंगी, इसके सम्बन्ध में
विशेष कहने की आवश्यकता नहीं।

हम लोगों में जो तरकारियाँ प्रचलित हैं वे हैं बैंगन, भि
इइयाँ, गोभी का फूल, टिमाटर, आलू, केले की छीमी,
लौकी, पालक, मेथी, सोया, आदि। इनमें से घुइयाँ
आदि में प्रोटीन की और टिमाटर आलू कुम्हड़ा
स्टार्च की प्रचुर मात्रा होती है। शाक जिस तरह पकाये जा
हैं उसका परिणाम यह होता है कि उनमें लोहा और नम
की जो कुछ विशेषतायें हैं भी वे उस पानी में चली जाती
जिसमें शाक पकाये जाते हैं। लहसुन प्याज़ अगर कच्चे खा

कुछ रोगों में लाभ भी होता है किन्तु उन्हें भी पकाकर हम
गुणहीन बना देते हैं। कुल बातों पर विचार करने से यह
स्पष्ट होता है कि अनेक मसालों के मिश्रण से तरकारियाँ
स्वादिष्ट भले ही बना ली जायँ किन्तु मनुष्य का प्राकृतिक
आहार होने का दावा वे नहीं कर सकतीं।

ऊपर जो कुछ निवेदन किया गया उसमे वनस्पतियों की
उत्तम आहार समझे जाने की योग्यता नहीं सिद्ध होती; सच
पूछ तो उनके सम्बन्ध में सभ्य समाज में पागलपन से भरा
जो शौक़ पैदा हो गया है और उस शौक़ के कारण हम
उनके स्वरूप को अधिकाधिक कृत्रिम तथा विकार पूर्ण करने
में अभ्यस्त हो गये हैं वह हमारे वर्तमान स्वास्थ्य की
हीनता के लिए बहुत कुछ उत्तरदायी है। ऐसी स्थिति में
वनस्पतियों का अपने आहार-क्षेत्र से सर्वथा विसर्जन करके
उनके स्थान में फलों का स्वागत करके हम अपने स्वास्थ्य
में, किसी डाक्टर या वैद्य की सहायता के बिना ही, बहुत
सुधार कर सकते हैं।

अन्न की तुलना में फलाहार

संसार में अधिकांश मनुष्य अन्न ही पर अवलम्बित रहकर
जीते हैं। डाक्टर टिबुल्स ने अपने 'भोजन और स्वास्थ्य' नामक
पुस्तक में अन्न की महिमा का वर्णन करते हुए लिखा कि गेहूँ
और दूसरे अन्न मनुष्य के गृह-कार्यों से इतना अधिक सम्बन्ध
रखते हैं कि यह कहने में किसी प्रकार की अत्युक्ति नहीं जान
पड़ती कि यदि किसी वर्ष अन्नों की फसल बिलकुल नष्ट हो
जाय तो पृथ्वी पर निवास करने वाले प्रतिशत नब्बे मनुष्यों
के जीवन का अंत हो जाय। डाक्टर राउलाथम का कहना है

कि गेहूँ को रोटी में जीवनी-शक्ति-संचार करने अधिक क्षमता है कि यदि उसे जीवन का अवलम्बन अत्युक्ति न हो। जहाँ कुछ लोगों ने उसका मानव क्षेत्र में इतना ऊँचा स्थान निर्धारित किया है; वहाँ का यह मत भी है कि वह मनुष्य के लिए बेकाम है।

गेहूँ में प्रोटीन की प्रचुर मात्रा पायी जाती है। में हम यह बता आये हैं कि हम अपने आपको स्वस्थ वाले जिस किसी भी आहार का चुनाव करें उसमें अस्तित्व अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से गेहूँ की गिता निर्विवाद जान पड़ती है। फिर भी इस सम्बन्ध पाठकों का ध्यान दो महत्त्वपूर्ण बातों की ओर करेंगे। (१) पहली बात तो यह कि गेहूँ का आटा जिस में हम व्यवहार में लाते हैं उसमें गेहूँ की एक सर्वथा लोप हुआ रहता है। चलनी से चालकर हम छिलके को चोकर या भूसी के रूप में आटे से अलग हैं। हमारी वर्तमान सभ्यता का कहना है कि आटे की के भीतर भूरे रंग की अगर कोई चीज़ बाक़ी रह लो कि जंगली क़ौमों में तुम्हारा नाम लिखा गया। देवी की इसी चेतावनी के भय से हमारा नाज़ुक सम्प्रदाय अधिक से अधिक पतले आटे का शौक़ीन है और साथ ही बदले में क़ब्ज़ तथा उससे उत्पन्न होने सैकड़ों बीमारियों का शिकार भी बनता जा रहा है।

(२) अब दूसरी बात पर विचार कीजिये, अर्थात् अवस्था पर जिसमें गेहूँ का चोकर आटे से अलग नहीं जाता। गेहूँ के छिलके को जला कर देखा गया है कि

फ़ोरिक एसिड, पोटाश, त
वत् अंश विद्यमान रहता है
क अन्य अंशों की अपेक्षा,
या जाता है। पतले आटे
अभाव हो जाता है
षक-शक्ति मिलना तो दूर
ता है। कारण यह कि स
क हो जाती है और उसको
र का रूप देने के लिए
है, क्योंकि शरीर द्वारा स
नहीं हो सकता; उसे श
प। उसको इस रूपान्तर-
घाओं को पार करना प
टे में मौजूद रहती है तब
ती है; चोकर में एक प्रक
कि होती है जिससे पे
है।
क दोनों बातें पाठकों के
हो इतना हानिकारक है
र किये गये प्रयोग में
गये जिन्हें पतला मैदा
ही दूसरे कुत्ते जिन्हें भू
तरह तन्दुरुस्त बने रहे
है ही कि चोकर उत्तेजन
यंत्रों को क्रियाशील बना
कि गेहूँ की रोटी के
करने पर भी वह सर्वथा

ा दूसरे खनिज पदार्थों का
। गेहूँ की ऊपरी तहों में,
इट्रोजन का अंश विशेष मात्रा
गेहूँ को इन सब विशेताओं
ौर इस कारण उस आटे
हा, उदर-विकारों की प्राप्ति
ैद आटे में स्टार्च की मात्रा
शरीर का अंश बनाने के पहले
मेदे को बहुत अधिक परिश्रम
टार्च का उपयोग स्टार्च ही के
कर के रूप में परिणत होना
हण की प्रक्रिया में, अनेक
ड़ता है। जब चोकर या भूसी
क प्रक्रिया में कुछ सरलता
र की उत्तेजना उत्पन्न करने
की सफ़ाई में सहायता

सामने प्रस्तुत कर दी गयीं।
कि मैजेंडी नामक व्यक्ति के
े कुत्ते तो चालीस दिनों ही
खाने को दिया गया था;
ो रोटी खाने को दी गयी
रहा नं० २, सो उसमें यह
ा उत्पन्न कर के ही हमारे
सकता है। इस प्रकार यह
न्ध में अधिक से अधिक
दोष-शून्य नहीं हो सकती।

वास्तव में गेहूँ की रोटी से हमारा उतना
जितना हम समझते हैं; गर्भवती ि
हानिकारक हो सकती है। स्वयं
गेहूँ को रोटी के सम्बन्ध की प्रशंसा क
चुकी है. उससे होने वाली हानियों के
लिखते हैं:—

"यह बात सही है कि गर्भ के पुष्ट
के लिए पोषक पदार्थों की
भोजन में पोषक तथा पार्थिव अंश दो
के आटे में पार्थिव तत्व इतना अधिक है
लिए यह *अत्यंत हानिकारक चीज़ हो जाती*
दूसरे अन्न भी हानिकारक हैं, पर गेहूँ से

इन डाक्टर महोदय का यह भी
आहारों में पार्थिव तत्व विशिष्ट मात्रा में
से मनुष्य मंद-बुद्धि और प्रतिभाहीन हो
लोग निम्न मनोवृत्ति के तथा चिड़चिड़े
प्रायः उन्हीं भोजनों के ग्रहण करते हैं।
अधिक मात्रा में होता है। जो बात गेहूँ के
कम या अधिक मात्रा में अन्य अन्नों के
ऐसी दशा में यह मत किस प्रकार टिक स
आहारों में अन्नों की अनिवार्य्य रूप से
वास्तव में ताज़े फल तथा बादाम और
सेवन से प्रोटीन तथा स्टार्च की इच्छित मात्र
साथ उन समस्त त्रुटियों से पूरा पूरा बचा
अन्नाहार के साथ दूध और पानी का सा सम

शरीर-विज्ञान की दृष्टि से देखने पर भी फलाहार की महत्ता निर्विवाद रूप से सिद्ध होती है। हमारे आहार में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, तथा चर्बी तीनों तत्वों की आवश्यकता होती है। यह सिद्ध किया जा चुका है कि फलाहार से इन तीनों तत्वों की प्राप्ति शरीर को हो सकती है। फलाहार की इस समर्थता के साथ यह भी स्मरण रखने योग्य है कि उससे न तो मांसाहार के कारण पेट में अनेक अपच्य वस्तुओं की तरह कोई कठिन चीज ही पेट में जाती है और न शाकाहार में सम्मिलित बहुत सी रेशेदार चीज़ों के ढंग का कोई अवांछनीय पदार्थ ही वहाँ पहुँच पाता है। इन सब बातों के अतिरिक्त फलाहार में एक विशेषता और है। फलों के बारे में यह भय नहीं हो सकता कि पेट में वे उचित से अधिक मात्रा में पहुँच जायँगे, जैसा स्वादिष्ट भोजनों के विषय में प्रायः डर रहता है। साथ ही, फल जल्दी पच जाते हैं और उनमें पार्थिव तत्व भी बहुत थोड़ी मात्रा में रहता है। फलों की इतनी उपयोगिता से परिचिति हो जाने पर भी यदि अब भी किसी को संदेह हो और फलाहार की उत्तमता के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने की इच्छा हो तो उसे कालीफोर्नियाँ विश्वविद्यालय के अध्यापक एम. ई. जाफ़ा के अनुसन्धानों का अध्ययन करना चाहिए। अमरीका के कृषि-विभाग ने उनकी खोजों को प्रकाशित किया है, जो सर्वाङ्ग-पूर्ण होने के साथ-साथ आहार-विज्ञान के इतिहास में एक नवीन युग की घोषणा करती हैं। "फलाहारियों और चीन-वासियों में पोषण-सम्बन्धी अनुसंधान' नामक अपने एक निबन्ध में वे लिखते हैं :—

"उल्लिखित सामग्री की परीक्षा करने पर तथा साधारणतया स्वीकृत मानदण्डों के साथ परिणामों की तुलना करने,

पर यह प्रगट होता है कि आलोच्य व्यक्तियों को पूर्ण आहार नहीं मिला, यद्यपि यह बात भी सही है कि वज़न स्वभावतः कम होता है। लेकिन जब हम सोचते हैं दो अधेड़ व्यक्ति सात वर्ष तक फलाहार पर ही रहे हैं उन्हें अच्छे स्वास्थ्य में तथा अधिक कार्य्य करने के योग्य हैं तब कोई निर्णय प्रगट करते हुए हमें संकोच होता है। आलोच्य बच्चे, जो फलाहार करते रहे, और वज़न में से कम होने पर भी स्वास्थ्य और शक्ति के सभी लक्षणों युक्त थे, साधारण स्वस्थ बालकों की तरह सारे दौड़ते और खेलते कूदते थे और लड़कों को होनेवाली आदि तरह-तरह की शिकायतों से बिलकुल मुक्त जाते थे।"

अध्यापक जाफ़ा ने अपने निबंध में आगे चलकर सिद्ध कर दिया है कि फलाहार के द्वारा उतना ही बल पोषण प्राप्त किया जा सकता है जितना अन्य किसी के आहार से। उनका कहना है कि उक्त आलोच्य केवल दो बार आहार ग्रहण करते थे। उनका यह भी है कि पकाया हुआ भोजन जितनी मात्रा में ग्रहण जाता है उससे कम ही इन फलाहारियों को आवश्यक था। विशेष उल्लेख योग्य बात यह है कि एक फलाहारी वज़न में भी बढ़ गया; तीन महीने के भीतर ही उसने पौंड वज़न की वृद्धि कर ली। अपनी इन खोजों के स्वरूप जाफ़ा महाशय का मत है कि फलों को सहायक का स्थान न देकर स्वतंत्र आहार के रूप में ग्रहण चाहिए।

'स्वास्थ्य और भोजन' नामक अपनी पुस्तक के पृष्ठ पर डा० टियुल्स कहते हैं :—

"ताज़े फलों का महत्त्व, विशेष करके शहर वालों के लिए,
ुत अधिक है। फलों में जो नमक विद्यमान रहता है वह
व की वृद्धि करता है। सैलिवा (मुँह के भीतर मौजूद रहने
ला द्रव पदार्थ) का प्रवाह उत्तेजित कर के वह पाचन-क्रिया
सहायक होता है। पाचन-क्रिया को द्रुत करने वाले उदर
भीतर के द्रव पदार्थ को भी यह नमक बढ़ाता है। जब
न आँतों के भीतर पहुँचते हैं तब जिगर, अंतड़ियों की
ठों और पेशियों से द्रव पदार्थ उत्पन्न होता है; रक्त पर
उनका यथेष्ट प्रभाव पड़ता है।"

प्रकृति ने मनुष्य को न मांसाहारी बनाया है और न
ाहारी; वास्तव में वह फलाहारी जन्म से ही है। किन्तु
हा के शासन ने इस बुद्धिमान पशु को अपने भोजन का
ाद अनेक उपायों से बढ़ाने की हिकमत ढूँढ़ने की ओर
ृत्त किया और इसमें वह इतना सफल हुआ कि उसके
रा पाक-शास्त्र नामक एक विज्ञान ही की सृष्टि हो
ी, जिसके अनुसार यदि भोजन तैयार कराया जाय
शायद सवेरे से लेकर शाम तक पेट-पूजा के अतिरिक्त
ुष्य को दूसरे कामों के लिए अवकाश ही न मिले!
ानव जीवन का विज्ञान' नामक अपनी पुस्तक में डाक्टर
हम महोदय कहते हैं :—

"यदि मानव प्रकृति की सर्व्वोत्तम और सर्व्वोत्कृष्ट
वस्था का खयाल किया जाय तो यह एक व्यापक सिद्धान्त
रूप में गृहीत किया जा सकता है कि आग की सहायता
भोजन का कृत्रिमता-पूर्ण परिपाक मनुष्य शरीर के
ज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक हितों के प्रति कुछ मात्रा में
ाघातकारी है।"

डाक्टर ग्रेहम तो अन्य अनेक दृष्टियों से भी पकाया हुआ आहार अधिक मात्रा में खाने की करते हैं। उनका कहना है कि उस अवस्था में दाँतों का अधिक उपयोग करेगा, वह आहार को अच्छी तरह चबाएगा, जिससे पाचन-क्रिया को समुचित करने योग्य अधिक सैलिया की उत्पत्ति हो सकेगी, गरम भोजन करने की हानिकारक आवश्यकता से ब जायगा, तथा आहार की उचित मात्रा का अतिक्रमण नहीं करेगा।

फलाहार को स्वतंत्र आहार के रूप में ग्रहण कर एक बहुत बड़ा लाभ तो यह है कि आग की विशेष कर गर्मी के दिनों में, अपने स्वास्थ्य और स दोनों का हवन करने के लिए विवश की जाने वा देवियों का उद्धार हो जायगा। हमारी महिलाओं के होने का एक बहुत बड़ा कारण है उनका अपने बहुत बड़ा हिस्सा धुएं से व्याकुल आँखों को भोजन ब देना। इस अनिवार्य्य कठिनाई के कारण स्त्रियों को और आत्मोन्नति के साधनों का उपयोग करने के समय ही नहीं रह जाता। गार्हस्थ जीवन में रुग्ण पत्नी पति के लिए अभिशाप स्वरूप है और सदैव यह प्रयत्न करना चाहिए कि उसकी स्त्री अंधकार में से निकल कर प्रकाश में आवे। प्रचार इस प्रकार के प्रयत्न का एक स्वरूप हो सकता है।

फलों की उपयोगिता सिद्ध होने पर भी यह वि करना शेष रह गया है कि फलाहार खर्चीला है या न इसमें शक नहीं कि यदि एक रुपये का मांस मोल

जायगा तो उसमें प्रोटीन की जितनी मात्रा होगी उतनी एक रुपये के फल में नहीं मिलेगी। फिर भी इसमें शक नहीं कि शक्ति की मात्रा दोनों आहारों में समान मात्रा ही में मिलेगी, यदि हम यह ध्यान में रक्खें कि जहाँ तक संभव हो ताज़े फल मोल लिये जायँ, विशेष करके सूखे फल, छुहारे, किशमिश आदि। बादाम अखरोट आदि पर विचार किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि इससे उतना ही प्रोटीन मिल सकेगा जितना मांस से। अतएव, यदि हम ताज़े फलों और बादाम अखरोट आदि को मिला कर खाएं तो जितना दाम ख़र्च करके हम शक्ति की मात्रा-विशेष का संग्रह करते हैं उतने ही दाम में उतनी ही शक्ति हमें इन फलों से प्राप्त हो सकेगी।

हमने पिछले पृष्ठों में जो कुछ निवेदन किया है उसका सारांश यही रहा है कि हमें फलों को स्वतंत्र आहार का रूप देना चाहिए। फिर भी अनेक शताब्दियों के अभ्यास ने हमें जिस आहार-पद्धति का प्रेमी बना दिया है वह सहज ही त्यागी नहीं जा सकती, यह हम अच्छी तरह जानते हैं। मनुष्य की समस्त आदतों में, जिन्हें उसने अपनी जीभ के स्वाद के लिए अपना लिया है, सबसे कठिन आदत है अपना आहार पकाकर खाने की। किन्तु, इसमें सन्देह नहीं कि जितनी ही मात्रा में यह बात सही है उतनी ही मात्रा में यह भी सच है कि इससे उसके स्वास्थ्य और बल का बहुत अधिक ह्रास हुआ है ; उसके शरीर को अधिक दृढ़ता के साथ रोगों ने अपना अड्डा बना लिया है, और अपनी प्राकृतिक अवस्था को प्राप्त करने के लिए उसे इस आदत से पिण्ड छुड़ाना ही पड़ेगा।

"यह स्मरण रखने योग्य बात है कि प्रत्येक प्रकार फलाहार, मनोरंजन या स्वाद के लिए नहीं, बल्कि ... आहार के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। सब प्रकार पकाया हुआ भोजन, वह कितने ही अच्छे ढंग से क्यों पकाया जाय, पेट की, बिना पकायी हुई वस्तुओं की की, शक्ति का ह्रास कर देता है। इसलिए जब तक हम ... हुआ भोजन ग्रहण करने के आदी हैं तब तक फलों ... चीज़ों को—जिन्हें हम उनकी प्रकृत अवस्था में ग्रहण ... हैं—खाते समय हमें सावधान रहना चाहिए।"

मैहम महोदय की उक्त चेतावनी का अर्थ यही है कि ... मांसाहारी है वह क्षण भर ही में फलाहारी हो जाने ... न करे, क्योंकि इस तरह के प्रयत्न में कुछ कष्ट अवश्य ही ... सकता है, जो शायद आगे चलकर फलाहार की ... को व्यर्थ सिद्ध करने की कोशिश करे। जितनी भी ... आदतें हैं, उन्हें त्यागने में आकस्मिकता से काम न ... चाहिए; वे धीरे धीरे छुड़ायी जायँगी तभी स्थायी रूप ... हमसे पृथक हो सकेंगी।

नमक तथा मसाले

यदि शाकाहार और अन्नाहार दोनों का त्याग कर ... जाय तो मसालों के व्यवहार की शायद कोई ... न पड़े। लेकिन संभव है, मसालों के व्यवहार की ... जान लेने से उक्त दोनों प्रकार के आहारों को त्याग देने की प्रवृत्ति स्वभावतः उत्पन्न हो, इस दृष्टि से मसालों की हानियों का यहाँ उल्लेख कर देना भी आवश्यक जान पड़ता है। ...

जाता है कि मसाले साधारण भोजन को रुचिकर और स्वादिष्ट बना कर भूख बढ़ा देते हैं। किन्तु यदि आहार उत्तम हो और मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक दशा में हो तो आहार को ग्रहण-योग्य बनाने की आवश्यकता ही न रह जाय। आहार-विज्ञान से कुछ दिलचस्पी महात्मा गांधी को भी रही है। मसालों आदि के द्वारा भोजन का आकर्षण बढ़ाने के सम्बन्ध में उन्होंने इस प्रकार अपना मत प्रगट किया है :—

"मैं अभी विक्टोरिया होस्टल देखकर आ रहा हूँ। मुझे यह देखकर बहुत ही दुःख हुआ कि वहाँ बहुत सी पाकशालाएँ हैं। ये पाकशालाएँ इसलिए नहीं बनी हैं कि उनमें भिन्न भिन्न जातियों के लोग भोजन करें, बल्कि उनके बनने की आवश्यकता इसलिए हुई है कि जिन जिन देशों या प्रान्तों से लोग आते हैं वहाँ उन्हें बिलकुल वैसे और उतने ही मसाले मिलें। स्वयं ब्राह्मणों के लिए वहाँ कई विभाग और कई पाकशालाएँ हैं जिनमें भिन्न भिन्न वर्गों के लिए रुचिकर पदार्थ बनते हैं। मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि यह रसना का स्वामी होना नहीं है, बल्कि उसका दास होना है। हमारे शरीर के स्वास्थ्य की उचित रक्षा के लिए जिन खाद्य पदार्थों की आवश्यकता है, जब तक हम केवल उन्हीं से सन्तुष्ट न हों और जब तक कि हम उन मसालों से अपना पीछा छुड़ाने के लिए तैयार न हों जो खाद्य पदार्थों में बल, गरमी, या उत्तेजना आदि उत्पन्न करने के लिए डाले जाते हैं, तब तक हम उस बहुत अधिक और अनावश्यक उत्तेजक शक्ति पर अधिकार नहीं रख सकते जो हममें हो सकती है। खाने, पीने और वृत्तियों को संतुष्ट करने में हम पशुओं ही के समान हैं, लेकिन क्या आपने कभी किसी घोड़े या गौ में उतना अधिक चटोरापन देखा है जितना

अधिक चटोरापन हम लोगों में होता है ? क्या आप सम हैं कि अपने खाद्य पदार्थों की संख्या को उस सीमा पहुँचा देना कि जहाँ हमें स्वयं अपनी दशा का भी ज्ञान न वास्तविक जीवन और सभ्यता का चिन्ह है ?"

गाँधी जी का उक्त मत ही जीभ की विलासिता से सम्ब रखनेवाले मसालों के उपयोग को व्यर्थ प्रमाणित कर देने लिए काफ़ी है, किन्तु हम पाठकों के सन्तोष के लिए इस कुछ विचार करना भी आवश्यक समझते हैं। किन्तु प नमक पर विचार कर लेना चाहिए और समझ लेना चाहि कि उसके उपयोग की कितनी मर्य्यादा है।

हमारे भोजन की सहायक सामग्रियों में नमक का बि महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोगों का ख़याल है कि नमक के बि काम ही नहीं चल सकता। नमक खाने के पक्ष में जो दली पेश की जाती हैं वे निम्नलिखित हैं :—

१—नमक मनुष्य का स्वाभाविक आहार है, और उस प्रचलन विश्व भर में है।

२—नमक जीवन के लिए अनिवार्यतः आवश्यक व है। उसके अभाव में मनुष्य अपने जीवन की रक्षा नहीं सकता।

३—जंगली और पालतू पशु भी इसके शौक़ीन होते हैं

४—शरीर के ठोस और द्रव पदार्थों का एक निर्मा तत्व नमक भी है।

५—नमक शरीर के क्षय में रुकावट डालता है और प्रकार जीवन को सुदीर्घ बना सकता है।

६—राल और पित्त का प्रवाह जारी रखने के लिए नमक आवश्यक है।

—नमक का सेवन कराने से पशुओं का वज़न बढ़ है।

:—भोजन को अधिक रुचिकर बना कर यह भूख को देता है।

नमक के व्यापक प्रचार की बात यथार्थ नहीं है। केवल व्यक्ति भी यदि नमक खाये बिना स्वस्थ और पुष्ट बना तो भी नमक के अनिवार्य्य उपयोग का सिद्धान्त खंडित ाता है, किन्तु हमारे पास इससे भी सबल प्रमाण हैं यह सिद्ध किया जा सकता है कि पूरी की पूरी जातियाँ : के बिना अपना जीवन सुरक्षित बनाये हुए हैं। तीरिया के निवासी तथा कोलम्बिया नदी के तट पर वाली हिन्दुस्तानी जातियाँ ऐसी ही हैं। प्रशान्त सागर के बीच में स्थित द्वीपों के निवासी, अंगरेज़ों से चित होने के पहले तक, नमक का व्यवहार नहीं करते इसके अतिरिक्त न जाने कितने शिकारियों और विष्कारकों आदि ने, समय पड़ आने पर, नमक के अभाव ो काफ़ी समय तक अपनी जीवन-रक्षा, तथा स्वास्थ्य- में भी, सफलता पायी है। संयुक्त राज्य अमरीका में ऐसे कयों की कमी नहीं है जिन्होंने बीस बीस वर्षों तक नमक सेवन नहीं किया और फिर भी यही नहीं कि उन्हें कोई र नहीं हुई बल्कि उनका स्वास्थ्य पहले की अपेक्षा बहुत ड़ा बना रहा; उनकी कार्य्य कारिणी शक्ति और स्फूर्ति में ी तरह की कमी नहीं आयी। यदि आप नवजात शिशुओं प्रवृत्ति को ध्यान से देखेंगे तो उसे उनके पक्ष में नहीं

पाएंगे। इससे प्रगट होता है कि नमक का व्यवहार भायिक है।

नमक के पक्ष में कही जाने वाली पहली और घात के सम्बन्ध में इतना कथन पर्य्याप्त समझा चाहिए। तीसरी बात के महत्त्व पर विचार हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि पालतू पशु की इच्छा से अधिकांश में प्रभावित होते हैं। रहे सो नमक के प्रति उनके अनुराग की प्रचलित की हुई में कल्पना अधिक और वास्तविक तथ्य कम ज्ञान पड़ता नमक के समर्थकों का कहना है कि शिकारी कर ऐसी जगहों पर अपनी घात लगाते हैं जहां खारे के सोते हैं, और वहाँ नमक ही से आकर्षित होकर और भैंसें पहुँचती हैं। यह अनुमान अत्युक्तिपूर्ण है। यह नहीं हो सकता कि हरिणी और भैंसों को जिस प्रकार की वनस्पतियों की आवश्यकता होती की खोज में वे वहाँ पहुँच जाती हैं?

जंगली और पालतू पशुओं से अलग होकर जब जीवधारियों को देखते हैं तो चिड़ियों को उसके पाते हैं; मुर्गियों और पालतू चिड़ियों के लिए घातक है। इसके अतिरिक्त शूकर, जो एक पुष्ट पशु है, के सेवन से रोगग्रस्त हो जाता है और ऐसा कि शायद उसका बचना कठिन ही हो। इस प्रकार यह पूर्णांश में मान्य नहीं हो सकता कि नमक समस्त जीवधारियों के लिए हितकर है। वास्तव में वह प्रकृत नहीं, एक आवश्यकता है।

मनुष्य मात्र द्वारा नमक के अनिवार्य्यतः आवश्यक योग के सिद्धान्त का समर्थन करने के लिए कुछ लोगों यह कहना है कि मृत शरीर की जाँच करने पर उसमें क का एक हिस्सा पाया जाता है, इसलिए यह स्पष्ट है नमक मनुष्य का एक आवश्यक आहार है। इस विचित्र कर्ष को तो ज़रा देखिए। शरीर में, जाँच करने पर अफ़ीम र विषैला द्रव्य भी मिलता है, किन्तु क्या इससे यह प्रमाणित या जा सकता है अफ़ीम और विषैला द्रव्य भी मनुष्य का वश्यक आहार है।

कहा जाता है कि नमक के सेवन से वज़न बढ़ जाता है। न्तु वज़न किस प्रकार बढ़ता है, यह भी जान लेना चाहिए। सी मृत शरीर अथवा मांस पर जब कभी नमक का प्रयोग या जाता है तब उसका प्रत्यक्ष प्रभाव यही होता है कि उस स के कणों में से नमी निकलती है; वे सूखे, कड़े, और र-युक्त हो जाते हैं। जो प्रभाव मृत शरीर पर होता है, क्या वित शरीर में उससे भिन्न अन्य कोई प्रभाव हो सकेगा? न होने का कोई कारण तो नहीं समझ में आता। इस ाव का एक परिणाम तत्काल यह होता है कि मांस के जो ग शरीर के बाहर अपना मार्ग चाहते हैं वे अपने आपको रुद्ध पाते हैं; सूक्ष्म नलियों के भीतर से वे निकल नहीं कते। ऐसी अवस्था में वे जहाँ के तहाँ ही जम जाते हैं, और प्रकार वज़न बढ़ाने में सहायक होते हैं जिस पदार्थ को हर निकल ही जाना चाहिए उसे शरीर के भीतर बने ने देकर यदि शरीर का वज़न बढ़ाया गया तो इससे लाभ क्या?

जो कुछ ऊपर निवेदन किया गया है उससे यह तो स्पष्ट

ही है कि नमक का व्यवहार हमारे लिए अनिवार्यतः ... श्यक नहीं है। फिर भी हमारा यह अभिप्राय नहीं है नमक की बिलकुल ही आवश्यकता नहीं है, अथवा हमारे किसी काम का नहीं है; वास्तव में हम ... प्रकार लोहा, पोटाश, गंधक, चूना तथा दूसरे ... का सेवन करते हैं वैसे ही हमें नमक का भी उपयोग ... चाहिए। हम नमक का स्वतंत्र उपयोग ... हैं, किन्तु जैसे अपने किसी आहार पर सोडियम ... पोटाश, या गंधक नहीं छिड़कते वैसे ही नमक को भी ... साथ मिलाकर खाने की आवश्यकता नहीं है।

हमारे दैनिक आहार में नमक के बाद दूसरा ... मसालों का है। भोजन में मिला कर हम उसे स्वादिष्ट ... हैं। मसालों के मिश्रण से, भोजन अधिक पौष्टिक हो ... ऐसी बात नहीं। किन्तु वह रसना को रुचिकर ... हो जाता है। आध्यात्मिक चिंतन में रत रहने वाले ... ने सरल जीवन व्यतीत करने वाले ज्ञान के प्यासे ... को जो मसालों से बचने की व्यवस्था आवश्यक ... की है, उसका प्रधान कारण यही है कि मसालों से ... उत्तेजक आहार को ग्रहण करने के बाद मनुष्य की ... अपनी सहज कार्य्य-शक्ति को खो देती है। भारतवर्ष के ... विशारदों ही ने मसालों का निषेध किया हो, यह ... पश्चिमी विचारकों ने भी इसके विरोध ही में ... उठाई है। विद्वान् सिलवेस्टर ग्रैहम का इस ... कहना है :—

"सच बात यह है कि यदि मनुष्य निरंतर उत्तेजक आ... ग्रहण करता जायगा तो उसके इस कार्य्य से उसकी ... को क्षति पहुँचे बिना नहीं रहेगी।"

ग्रैहम महोदय के उक्त मत का समर्थन पीरीरा महाशय ने भी किया है। उसका कथन है :—

"हर एक व्यक्ति में चटपटी ज़ायकेदार वस्तुओं के प्रति राग से यह भ्रम हो सकता है कि वे हमारी रसना को तृप्त करने के अतिरिक्त कोई उपयोगी सेवा भी कर सकती हैं। वर्तमान समय में तो हमारे सामने उनकी उपयोगिता का कोई प्रमाण नहीं है। वे हमारी इन्द्रियों को उत्तेजना भले ही पहुँचावें, किन्तु हमारा पोषण नहीं करतीं। उनमें कपूर की तरह शीघ्रता से उड़ने वाला जो तेल रहता है वह आत्मसात् कर लिये जाने के बाद कोष्ठ में से बहिष्कृत कर दिया जाता है और तब भी उसकी स्वाभाविक गंधि उसमें विद्यमान पायी जाती है।"

डाक्टर बोमेंट ने भी इस विषय में यही सम्मति दी है :—

"भोजन की अनेक सहायक सामग्रियाँ, विशेष कर मसाले, किसी शरीर की स्वस्थ अवस्था में उसके पाचन-कार्य्य में कोई सहयोग नहीं करते। उनसे किसी प्रकार का पोषण नहीं प्राप्त होता। वे अत्यन्त दुर्बल उदर की क्रिया में भले ही थोड़ी सहायता कर सकें, किन्तु उनका अनवरत प्रयोग उनकी अप्रत्यक्ष निष्क्रियता का एक सबल कारण हो जाता है। उनका प्रभाव प्रायः वैसा ही होता है जैसा मदिरा या अन्य उत्तेजक पदार्थों का होता है। उनसे जो कुछ आराम थोड़ी देर के लिए मिलता है उसके बदले में भविष्य में बहुत से कष्ट सहने पड़ते हैं।"

मसालों में मिर्च को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। लेकिन इसे विष से कम न समझना चाहिए। एक चम्मच भर पिसी मिर्च पीकर देख लीजिए, परिणाम यह होगा कि पेट और अंतड़ियों में उससे बहुत अधिक उत्तेजना बढ़ेगी और

जब रक्त-प्रवाह से उसका सम्बन्ध होगा तब हृदय की में भी व्याघात पड़ेगा। लाल और काली मिर्च के सेवन रक्त-कोष्ठक बड़े हो जाते हैं, जिससे आगे चलकर हृदय रोग हो जाता है।

आदी, जायफल, दालचीनी आदि मसालों में भेद भले ही हो, किन्तु इन सब का एक मात्र प्रभाव पहुँचाना ही है। अतएव किसी भी स्वास्थ्यकर पद्धति में इन्हें आदरपूर्ण स्थान नहीं मिल सकता।

नमक और मसालों का व्यवहार दिन प्रति ही जा रहा है। इससे यह भले ही कहा जा सके कि पाक-विज्ञान उन्नत हो रहा है, किन्तु यदि हमारी अस्वस्थता और उदर-विकारों के मूल कारणों का पता की कोशिश की जायगी तो अधिकांश में हमारा यह उत्तरदायी पाया जायगा। महात्मा गांधी के मत करते हुए हमें चाहिये कि हम अपनी रसना के स्वामी बनें कि गुलाम। चटपटी चीज़ों के प्रति आकर्षित होकर हम आवश्यक आहार का अंग समझना छोड़ दें, उन्हें मानने की ग़लती न करें। हमारे इस विचार में यदि गयी, यदि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक अपना सर्व-प्रधान लक्ष्य बनाकर हमने अपने आप में उन को तोड़ने का साहस उत्पन्न किया—जिनके अस्तित्व इसके सिवा दूसरा कोई कारण नहीं रह गया है कि वे अधिक समय से चली आ रही हैं—तो निस्सन्देह फलों उपयोगिता और उत्तम आहार के क्षेत्र में फलों के उच्च को स्वीकार करने की ओर हम अवश्य ही प्रवृत्त होंगे।

दूसरा अध्याय



फल और भारतवर्ष

यह संसार बहुत बड़ा है, इतना बड़ा कि उसे अनन्त कहना । उचित होगा। वास्तव में उसका कहीं अन्त नहीं है— सका कहीं ओर-छोर नहीं है। इस अनन्त संसार का, भारत- र्ष एक खण्ड मात्र है। भारतवर्ष की भाँति अनेक देशों और देशों से मिलकर संसार बना है।

सम्राट्, एक विस्तृत साम्राज्य का स्वामी होता है, वह मस्त साम्राज्य तथा उसके अन्तर्गत समस्त भाग और उप- ाग, उस सम्राट के रहने के लिए होते हैं किन्तु वह भी स्थानों में रहते हुए भी अपने रहने का एक ही स्थान ता है। साम्राज्य में वह स्थान जिस नाम से प्रसिद्ध होता , उस नाम को स्कूल के विद्यार्थी और अध्यापक राजधानी नाम से पुकारते हैं। यह राजधानी, सम्राट के रहने के लिये, थायी रूप से स्थान होता है। साम्राज्य में जो स्थान अथवा गर, राजधानी होने का गौरव प्राप्त करता है, वह स्थान थवा नगर, समस्त साम्राज्य की अपेक्षा कुछ विशेषता रखता । समूचे साम्राज्य में, उसकी मान-मर्यादा, उसका गौरव- ड़प्पन कुछ और ही होता है। इस विस्तृत संसार में बहुत से साम्राज्य हैं और उनके भिन्न-भिन्न सम्राट हैं। सभी सम्राटों : रहने के लिए, उनके साम्राज्य में राजधानी होती हैं।

इस पृथ्वी पर अनेक साम्राज्य और उनमें अनेक
किन्तु समस्त संसार स्वयं एक साम्राज्य है, इस
साम्राज्य की एक मात्र अधिकारिणी स्वामिनी प्रकृति है
अनन्त विस्तृत साम्राज्य में सर्वत्र उसका अस्तित्व है।
साम्राज्य में कोई एक नगर राजधानी होता है।
उसकी राजधानी है! आदि काल से लेकर, इस
हां प्रकृति का निवास-स्थान रहा है। संसार का जो स्थान
से प्रकृति का निवास स्थान रहा हो उस स्थानके प्रकृति
और नैसर्गिक रहस्यों के लिए क्या कहा जा सकता
किस प्रकार उनकी प्रशंसा की जा सकती है?

फलों का विवरण लिखने के समय, भारतवर्ष के
जीवन का स्मरण होता है। जिस जीवन में भारतवर्ष
कोटि लोग आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करते थे, जिस
में इस प्रदेश के प्रायः समस्त स्त्री-पुरुष सात्विक
सुखोपयोग करते थे और जिस जीवन में भारत के
मुनि रहकर अमर पद प्राप्त करते थे, वह जीवन, प्रकृति
था, वह जीवन सात्विक जीवन था। इस जीवन में
का आदर था, इस जीवन में फलों का ही महत्व था।
जीवन ही, उन सब के जीवन का एक आधार था।
भारतवर्ष में फलों का अधिकार था। यहाँ पर भांति-भां
फल और एक-एक फल की सैकड़ों क़िस्में होती थीं।
वर्ष के ये दिन, वे दिन नहीं हैं। अब तो समय ही
का युग ही और है। जिस देश का फल ही प्राण था,
उसी देश को फलों के गुण बताने की आवश्यकता है!

इस युग में भी फलों के लिए, भारतवर्ष संसार में प्र
है। यहाँ के-से फल और इतने अधिक फल, संसार के

न्य देश में न मिलेंगे। इसीलिए तो भारतवर्ष, प्रकृति के प के नाम से प्रसिद्ध है! हमारे देश में आज भी, इतने धिक फल होते हैं और वे इतने सुन्दर होते हैं जो मनुष्य वन के लिए सुधा के समान हैं! एक-एक फल का गुण था उसका रंग रूप, मोहित करने का गुण रखता है!

आम

आम का फल बड़ा उपयोगी और सर्वप्रिय होता है। यह सार के गर्म देशों में अधिक पैदा होता है। भारतवर्ष तो आम की पैदावार के लिए प्रसिद्ध ही है। यहाँ पर, प्रायः सर्वत्र यह दा होता है। इस में सब से बड़ी विशेषता यह है कि वर्ष की प्रत्येक ऋतु में यह किसी न किसी रूप और परिमाण में प्राप्त हो सकता है।

छोटे से लेकर बड़ों तक, ग़रीब से लेकर अमीर तक, सभी का आम बहुत प्यारा है और सभी लोग, इसको बड़ी रुचि तथा स्वाद के साथ खाते हैं। यह वर्ष में एक बार फलता है और बसन्त ऋतु के पश्चात् इसका फलना आरम्भ हो जाता है। गर्मी के दिनों में यह बढ़ता है किन्तु उन दिनों में प्रायः कच्चा रहा करता है। वर्षा काल के आते-आते, आम पकने लगते हैं। बरसात के दिनों में आमों की बहार होती है। शहरों से लेकर देहातों तक आमों की फसल में, सब के दिन बड़े सुख से कटते हैं। देहातों में तो उन दिनों में सर्वसाधारण का, आम ही आहार होजाता है।

भारत में, प्रान्तों के अनुसार आमों के विभिन्न नाम हैं। हिन्दी-भाषा-भाषी, उसको आम कहते हैं, और भारत-भर में वह आम के ही नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसकी अनेक

जातियाँ होती हैं। उनमें दो प्रधान हैं, कलमी और
कलमी आम का पेड़ छोटा होता है लेकिन उसका आम बड़ा-बड़ा होता है। देशी आम का पेड़ बहुत बड़ा परन्तु उसके आम छोटे-छोटे होते हैं।

आम जब फलने लगता है और उसका कच्चा बहुत छोटा होता है, उस समय से लेकर, उसके पकने आख़िरी अवस्था तक आम के सैकड़ों प्रयोग होते हैं। कच्चे फल को लोग अमिया कहते हैं। जब अमिया छोटी होती है, उसी समय उसमें खटाई आ जाती है, इसलिए उसको दाल में डालते हैं और चटनी बनाते हैं। कच्चे को फाटकर लोग सुखा लेते हैं और उसका अमचूर बना यह अमचूर, साल-भर बराबर खटाई का काम देता है। सूखा अमचूर, जब तक नये वर्ष का, नया आम नहीं आ सभी लोग दाल और तरकारी में डालते हैं, और उसके तरह-तरह की खटाइयाँ बनाई जाती हैं। इसकी खटाई, खटाइयों से अच्छी और स्वादिष्ट होती है। नमक और मिलाकर कच्चे आमों का अमचूर बनाया जाता है। वह बड़ा अच्छा होता है। आम की गुठली सख़्त हो जाने पर उसको निकाल कर और सुखाकर रख छोड़ते हैं। पुरानी जाने पर उस गुठली को लोग फोड़कर, बड़े चाव से खाते सोंधेपन के कारण यह खाने में बड़ी अच्छी लगती है। कुछ लो इस गुठली को उबालकर खाते हैं। भारत के कुछ हिस्सों में यह गुठली इतनी अधिक खाई जाती है कि उसके द्वारा उन कुछ दिनों तक निर्वाह होता है। फ़सल में वे लोग ये गुठलि बहुत-सी इकट्ठा कर लेते हैं और फिर उनकी गुठलियाँ निक लकर तथा उसका आटा बनाकर उसकी मोटी-मोटी रो तैयार करते हैं और बड़ी ख़ुशी के साथ खाते हैं।

इसके द्वारा लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यापार भी करते हैं। ीब लोग, कच्चे आमों को काटकर बहुत-सा अमचूर बनाते और अपनी आवश्यकता के लिए निकालकर, बेच लेते हैं। म पक जाने पर इतना अधिक पेड़ों से गिरने लगता है कि ग उसको खा नहीं सकते। इसलिए बहुत-से लोग उसको ःकर और रस निकालकर पूड़ियों की तरह उसको सुखा लते हैं जो अमरस कहलाता है। ग़रीब तथा निर्धन व्यक्ति ना अधिक तैयार करते हैं जिसको वे अपने खाने के अति-क बेचने के काम में भी लाते हैं और कुछ रुपये प्राप्त कर ते हैं। इस अमरस को लोग अनेक प्रकार से खाते हैं, यह ने में बड़ा स्वादिष्ट और रुचिकर होता है। आम एक वर्ष न और एक वर्ष अधिक फलता है। जिस वर्ष इसके अधिक ल़ने की बारी होती है, उस वर्ष लोग उससे बहुत कुछ आशा ःते हैं और उसकी फ़सल के दिनों में तो लोग तरह-तरह के ञ-कष्ट की बात ही भूल जाते हैं। आमों के अनेक प्रकार से चार और मुरब्बे बनाये जाते हैं।

गुण—

कच्ची अमिया—कषैली और खट्टी होती है किन्तु खाने में चिकारक तथा वात और पित्त को बढ़ाने वाली होती है। छ और बढ़ जाने पर किन्तु कच्ची अवस्था में ही, उसकी टाई अधिक होजाती है, वह रूखी होजाती है और रुधिर के ाकारों को उत्पन्न करती है।

कच्ची अमिया—गर्म, खट्टी और कषैली होती है, किन्तु ःसी क्षार के साथ होने से रुचिकारक, मल को रोकनेवाली ःत, पित्त और कफ़ बढ़ाने वाली होती है किन्तु उससे

कण्ठ के रोग, फोड़े, फुन्सी, अतिसार और प्रमेह को होता है।

अमचूर—खाने में खट्टा और स्वादिष्ट होता है, कषैला होने के साथ-साथ कफ और वात को दूर करने बड़ा लाभकारी होता है।

पका हुआ आम—खाने में सुगन्धित और मधुर उसका रस स्निग्ध होता है, खाने में अत्यन्त रुचिकर होता है और शरीर को पुष्ट करता है। वात का नाश है और हृदय को बलवान करता है। यह भारी होता है मल को रोकता है। शीतल होने के साथ-साथ प्रमेह को विशेष कर लाभ पहुँचाता है। शरीर को कान्ति इससे व्रण, श्लेष्म तथा रुधिर के रोगों को लाभ होता।

पका हुआ आम—खाने में मीठा, वीर्य को बढ़ाने स्निग्ध तथा बलवर्द्धक होता है। इसके खाने से सुख है, वात का नाश होता है, हृदय को शक्ति मिलती है, शरीर रंग गोरा होता है, अग्नि और कफ बढ़ता है। इसके से शरीर में मांस और बल बढ़ता है और शरीर का दूर होता है।

जो आम वृक्ष पर पकता है, वह खाने में भारी होता वात का नाश करता है, किञ्चित खटाई के साथ-साथ होता है, इसके खाने से पित्त बढ़ता है।

पाल में पकाया हुआ आम—पित्त का नाश करता है, में खटाई का अंश नहीं रहता और खाने में अत्यन्त मालूम होता है। पका हुआ आम बासी हो जानेपर खाने में स्वादिष्ट और मीठा होता है, बल को बढ़ाता है, वीर्य को करता है, खाने में हलका तथा शीतल होता है, बहुत

...ता है, वात-पित्त का नाश करता है, किसी-किसी को दस्त ...ता है।

आम का निचोड़ा रस—बल बढ़ाता है, खाने में भारी ...ा है, वात का नाश करता है और कुछ दस्तावर होता है। ...य को हानिकारक होता है, खाने में तृप्ति करता है, किन्तु ...फ को बढ़ाता है।

आम का निचोड़ा हुआ रस—यदि दूध के साथ खाया ...ता है, तो वह अत्यन्त स्वादिष्ट हो जाता है, और अत्यधिक ...र्य पैदा करता है, एवम् शरीर को सौन्दर्य तथा कान्ति ...ान करता है।

चूसकर खाया हुआ आम—जो आम चूसकर खाया जाता ... उससे शरीर में बल और वीर्य बढ़ाता है और खाने में रुचि ...त्पन्न होती है। यह हलका और शीतल होता है और खाने में ...ीघ्र पचता है। यह वात-पित्त का नाश करता है और मल ...ा रोकता है।

काटकर खाया हुआ आम—जो आम काट कर खाये जाते ..., वे चूसकर खाये जाने वालों की अपेक्षा कुछ जड़ होते हैं, ...किन खाने में मीठे तथा शीतल होते हैं। वे रुचिकारक और ...ीघ्र पचने वाले होते हैं, ये धातु और बल को बढ़ाते और ...ात-पित्त का नाश करते हैं।

धूप में सुखाया हुआ आम का रस—आमों को निचोड़ ...कर अथवा कूट कर जो रस निकाल लिया जाता है और उस ...ो धूप में सुखा दिया जाता है, वह अमरस या आम्बट कह-...लाता है। इसके खाने से तृषा शान्त होती है, कै को लाभ ...होता है और वात-पित्त को फ़ायदा पहुँचाता है। यह खाने में ...बड़ा रुचिकर किन्तु कुछ दस्तावर होता है। सूर्य की धूप में ...सुखाये जाने के कारण वह हलका हो जाता है।

आम की गुठली—किञ्चित खट्टी कषैली और सौंधी है वमन, अतिसार और हृदय की दाह में फ़ायदा करता।

उपयोग—

आमों को अधिक खाने से मन्दाग्नि होती है, आने का डर रहता है, रुधिर के विकार उत्पन्न हो सकते और नेत्र-रोग उत्पन्न होता है। किन्तु आम के ये दोष, आम के खाने से ही होते हैं। मीठा आम कभी हानि करता। विशेषकर मीठा आम, नेत्रों को हितकारी और गुण देने वाला है। अधिक आम खाने के बाद सोंठ या का जल पी लेने से कोई हानि नहीं होती।

मधु के साथ आम—आम को मधु के साथ खाने से यक्ष्मा, प्लीहा, वात और श्लेष्मा का नाश होता है।

घृत के साथ आम—आम के साथ घृत खाने से का नाश होता है, अग्नि बढ़ती है, बल की अधिक वृद्धि है और शरीर की कान्ति तेज़ होती है।

दूध के साथ आम—दूध के साथ आम को खाने से, पित्त का नाश होता है, रुचि बढ़ती है और बल तथा बुद्धि होती है।

बादाम

बादाम के पेड़, एशिया में, ईरान, मक्का, मदीना, शीराज आदि स्थानों में बहुत पाये जाते हैं। भारतवर्ष काश्मीर, अफ़ग़ानिस्तान और बिलोचिस्तान आदि प्रान्त नगरों में भी बादाम के वृक्ष होते हैं। इसके वृक्ष, नीम के की भाँति बड़े होते हैं। बादाम की दो जातियाँ होती है, और मीठी। कड़ुवा बादाम हानिकारक होता है, इसलिए

उपयोग नहीं किया जाता। मीठा बादाम, कई प्रकार से
ने के काम में आता है। वह गर्म और अत्यन्त पुष्टिकारक
ता है। जो लोग उसका सेवन करते हैं, वे उसकी बहुत
ड़ी संख्या से उसका खाना प्रारम्भ करते हैं। और उत्तरोत्तर
की संख्या बढ़ाते जाते हैं। ऐसा न करके यदि वह अधिक
लिया जाय तो उसका हज़म हो सकना कठिन हो जाय।

जो लोग भङ्ग अथवा ठण्डाई पीते हैं, वे उसमें बादाम
श्य डालते हैं। कुछ लोग बादाम को भिगोकर और फिर
डाई की भाँति पीस कर नित्य नियमानुसार, उसका सेवन
ते हैं। इस प्रकार का सेवन प्रायः व्यायामशील व्यक्ति या
पहलवानी करते हैं, वे अवश्य करते हैं। इसके सेवन से
ीर में रक्त बढ़ता है, बल की वृद्धि होती है और शरीर में
तन्य जागृत होता है। कुछ विद्वानों ने, बादाम को दूध के
ान पर सेवन करने की सम्मति दी है। इसी प्रकार की सम्मति
े हुए महात्मा गाँधी ने भी लिखा था कि आज कल शहरों
दूध अच्छा नहीं मिलता। एक तो मिलता नहीं और जो
लता भी है, वह ख़ालिस नहीं होता। बल्कि यह भी देखा
ाता है कि बाज़ारू दूध लाभ के स्थान पर हानिकारक होता
, ऐसी अवस्था में यदि दूध के बजाय, बादाम का प्रयोग
क्या जाय तो अधिक लाभ होगा।

गुण—

बादाम—सारक और गर्म होता है। इसकी प्रकृति भारी
ौर अम्लप्रद होती है। खाने में स्वादिष्ट स्निग्ध और कफ़
ो बढ़ाने वाला होता है। कषैला होने के साथ-साथ वात का
ाश करता है और वीर्य को पैदा करने वाला है। इसके खाने
े शरीर में बल और पुरुषार्थ उत्पन्न होता है।

कच्चा बादाम—सारक और भारी होता है। यह पित्त पैदा करता है, कफ़ तथा वात के विकारों का नाश करता

पक्का बादाम—खाने में मीठा और वृष्य होता है। अत्यन्त पुष्टिकारक और बल बढ़ाने वाला होता है। सेवन से वीर्य की वृद्धि होती है। कफ़ की उत्पत्ति होती रक्त-पित्त और वात-पित्त का नाश होता है।

सूखा बादाम—खाने में मीठा और धातु का बढ़ाने होता है। यह स्निग्ध और वृष्य होता है। इसके खाने शरीर में बल बढ़ता है, बदन पुष्ट होता है, यह कफ़ को करता है और वात-पित्त को दूर करता है। शक्ति और वीर्य बढ़ाने के लिए बड़ा उपयोगी है।

बादाम का तेल—मस्तक के रोगों को दूर करने के यह बड़ा उपयोगी तेल होता है। बदन में मालिश करने पित्त का नाश होता है वात को शान्त करता है। इसका के साथ-साथ जलन को भी शान्त करता है। इसकी शीतल होती है और शरीर में मलने से सौन्दर्य बढ़ता इसमें बाजीकरण का गुण भी होता है।

औषधि के रूप में भी बादाम बहुत काम आता आयुर्वेद शास्त्र में तो उसके अनेकानेक उपयोग हैं, तथा उसका निम्नलिखित उपयोग करते हैं—

मिलावें से पैदा हुए छालों पर—बादाम की मींगी घिस कर लगाने से तुरन्त आराम पहुँचता है। जलन को जल्दी शान्त कर देता है।

खनखजूरे के काँटे चुभ जाने पर—यह अवस्था बड़ी होती है, ऐसे समय पर बादाम का तेल लगाना च इससे लाभ होता है।

दांतों को पुष्ट करने के लिए—दांतों की शक्ति को उत्पन्न ने के लिए बादाम के छिलकों में बड़ी शक्ति होती है। इस-ए इसके मोटे और सख्त छिलके को जलाकर और उसकी व में नमक मिलाकर, खूब महीन-महीन पीसकर रख लेना हिए और नित्य उसी से दांतों को मलना चाहिए।

मस्तक के रोगों पर—सिर में किसी प्रकार पीड़ा हो अथवा तक का कोई भी रोग हो, बादाम और केसर को गाय के में मिलाकर नास लेने से तुरन्त लाभ होता है। यदि कोई प्रकार का रोग बहुत दिन से चल रहा हो तो कई दिनों क बादाम की खीर खाना चाहिए। मस्तक-पीड़ा में बादाम र कपूर को दूध में घिसकर लेप करने से भी तुरन्त लाभ ता है।

धातु की बीमारी में—डेढ़ तोला गाय का घी लेकर उसमें क तोला गाय का मक्खन या हाल का बनाया हुआ खोवा ला देना चाहिए और उसमें बादाम, शक्कर, शहद और इला-ची मिलाकर प्रति दिन सुबह-शाम बराबर सात दिन तक ना चाहिए। इससे बड़ा लाभ होता है, और उसके विकारों ा नाश होकर धातु की वृद्धि होता है।

उपयोग—

बादाम कई प्रकार से सेवन किया जाता है, किन्तु प्रायः ोग यह करते हैं कि पहले उसे पानी में भिगो देते हैं स पर लगी हुई लाल परत को निकाल कर बहुत बारीक स डालते हैं कि, छानने पर वह बिलकुल दूध के समान यार होता है, बस छान कर और उसमें थोड़ी-सी शक्कर और ाली मिर्च मिलाकर पी जाते हैं।

बादाम सूखा खाने के काम में भी आता है, और मींगी निकालकर उसका हलुवा बनाया जाता है। बनाने का नियम यह है कि पहले बादामों को पानी में कर और उनके भीग जाने पर, उनका छिलका निका पीस डाले जाते हैं और गाढ़ा-गाढ़ा पिसा हुआ लेकर साथ भूना जाता है, अन्त में कुछ शक्कर मिलाकर जाता है, बस हलुआ बन जाता है। यह बड़ा श पुष्टिकारक होता है।

चावलों की खीर में बादाम छोड़े जाते हैं। अर्थात् खीर बनाई जाती है तो बादाम कतरकर उस खीर में दिये जाते हैं, इससे खीर बड़ी स्वादिष्ट और जाती है।

√ बादाम की खीर भी बनाई जाती है, उसके बनाने की यह है कि बादाम को फोड़कर गर्म जल में भिगो देते हैं उसके ऊपर का लाल छिलका बड़ी जल्दी और आसानी निकल जाता है। इसके बाद बादामों को पीस तत्पश्चात् उसे दूध में पकाना पड़ता है। कुछ लगता है तो शक्कर और घी डाल कर उसे उतार लेते हैं। खीर खाने में स्वादिष्ट तो होती ही है, पुष्टिकारक और वर्द्धक भी होती है।

√ बादाम का तेल—इसका तेल निकालने के लिये को फोड़कर उनको पानी में भिगो देते हैं और उनके पतला-सा छिलका निकाल कर उन्हें पीस डालते हैं। समय उसमें थोड़ी-सी मिश्री भी मिला देते हैं। उसे मल-मलकर दबाने से तेल निकलता है। यह तेल को ठंढा रहता है, कानों की प्रत्येक बीमारी को पहुँचाता है।

अमरूद

अमरूद का पेड़ प्रायः सभी देशों में पाया जाता है। परन्तु न्य देशों को देखते हुए भारतवर्ष में इसकी उत्पत्ति सब से धिक होती है। अपने देश में इसकी पैदावार लखनऊ और लाहाबाद में बहुत अधिक होती है। देश-भर में इलाहाबाद का मरूद मशहूर है और उसके बेचनेवाले इलाहाबादी अमरूद हकर बेचते हैं।

अमरूद की दो जातियाँ होती हैं। एक लाल और दूसरी फ़ेद। जो अमरूद बड़े होते हैं, उनका वज़न कभी-कभी आधा र से भी अधिक होजाता है। फसल के दिनों में यह बहुत स्ता बिकता है। इसको ग़रीब और अमीर सभी खाते हैं। ीब आदमी तो अमरूदों की फसल में पेट भर-भरकर को खाते हैं।

अमरूद कच्चा से लेकर पका तक—दोनों हालतों में खाया ता है। अमरूद जब से फलने लगता है और कुछ बड़ा हो ता है उसी समय से लोग उसका खाना आरम्भ कर देते हैं र अन्त तक उसको खाते हैं लेकिन अमरूद पकने के पहले ज़ारों में नहीं बिकता। इसको बेचने वाले उसी समय बेचने लिए निकलते हैं जब यह पक जाता है अथवा पकने के लग- र हो जाता है। कच्चा अमरूद, लोग उनके बगीचे में जाकर ड़-तोड़कर खा आते हैं।

पक्के अमरूद की अपेक्षा कच्चा अमरूद सख्त होता है। र पके हुए के बनिस्बत कच्चे अमरूद के खाने का स्वाद भी छ भिन्न होता है। लेकिन खाने में वह किसी प्रकार अप्रिय र अरुचिकारक नहीं होता। बच्चों से लेकर बूढ़ों तक, जिनके ाँत होते हैं बड़ी रुचि से खाते हैं। जितने भी फल खाने के

काम में आते हैं उनमें अमरूद ही एक ऐसा है कच्चा और पक्का समान रूप में उपयोग में लाया फल-वैज्ञानिकों का कहना है कि पके फल की अपेक्षा कच्चे में जीवन-शक्ति अधिक होती है परन्तु सभी फल अवस्था में अधिक नहीं खाए जा सकते। इसलिए कि प्रकृति भिन्न-भिन्न होती है और कुछ तो अधिक खाने कारक भी हो सकते हैं।

गुण—

अमरुद—इसको कुछ लोग सफरी अथवा साफरी कहते हैं। अमरूद खाने में स्वादिष्ट और कषैला होता है। खाने से कफ की वृद्धि होती है, वात-पित्त का नाश और वीर्य की उत्पत्ति होती है। अमरूद शीतल होते हैं।

अमरूद—खाने में तेज़, भारी और कफ के हैं। इनके खाने से वात की वृद्धि होती है, उन्माद होता है। वीर्य बढ़ता है। यह खाने में स्वादिष्ट और होते हैं। यदि शरीर को इनके ठण्डे होने से उत्पन्न हो तो ये लाभकारी होते हैं।

कच्चे अमरूदों की तरकारी बनाई जाती है। स्वादिष्ट और सुरुचिपूर्ण होती है। उसके बनाने की वि है कि अमरूद को काटकर पहले सुखाया जाता है। तब तक बराबर सूखा करता है जब तक कि वह नहीं जाता। उसके बाद अन्य तरकारियों की भाँति तरकारी बनाई जाती है।

उपयोग—

अमरूदों का रायता बहुत अच्छा बनाया हुए अमरूद पेट-भर खाए जा सकते हैं परन्तु उनकी

[श]ीतल होती है अतएव ठण्ढे होने के कारण अधिक खा लेने से [बु]खार आसकता है, पेट में दर्द पैदा हो सकता है और कभी-[क]भी खांसी आने लगती है। इसलिए जिनका शरीर स्वस्थ [न]हीं है और निर्बलता के कारण जो उसको पचा सकने में अस-[म]र्थ हैं उन्हें अधिक अमरूद न खाने चाहिए. जो स्वस्थ और [नि]रोग होते हैं उनको कुछ भी हानि नहीं होती। अमरूद को [का]टकर यदि उसमें कालीमिर्च, नमक और नीबू का रस मिला [लि]या जाय तो उसका विकार नष्ट हो जाता है और फिर वह [प्र]ायः हानि नहीं करता।

नीबू

यह अत्यन्त लोकप्रिय और उपयोगी फल है। यह सर्वत्र [पा]या जाता है। नीबू दो प्रकार का होता है, खट्टा और [मी]ठा। मीठे की अपेक्षा, खट्टा नीबू ही अधिक मिलता है और [व]ही बाज़ार में अधिकतर बिका करता है।

डाक्टर हेग नाम के एक विद्वान् का कथन है कि गँठिया [में] नीबू के रस से बहुत अधिक लाभ पहुँचता है। मैलेरिया [रो]ग से छुटकारा दिलाने में भी यह दवा का सा काम करता [है]। गले की सूजन में आराम पहुँचाने के कारण यह प्रायः [ग]ले की बीमारियों में भी दिया जाता है। यद्यपि नीबू के [से]वन से तत्काल जो प्रभाव पड़ता है वह है रक्त में एसिड की [वृ]द्धि कर देना, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह बहुत अधिक [मा]त्रा में मल-निवारक और कृमि-नाशक है।

नीबू की खटाई बडी स्वादिष्ट और रुचिकारक होती है, [इस]में विशेषता यह है कि और जितनी खटाइयाँ हैं, कभी-कभी [हा]नि भी करती हैं, रोगी या बीमार आदमी दूसरी खटाइयाँ

कभी नहीं खा सकते, किन्तु नीबू की खटाई कभी किसी
नुक़सान नहीं पहुँचाती। बीमार आदमियों के लिए तो
बड़ी ही उपयोगी वस्तु है। नीबू कई प्रकार का होता
कागजी नीबू, जम्भीरी नीबू, बिहारी नीबू, कर्ना
आदि।

गुण

साधारण नीबू—खाने में खट्टा होता है, बात का
करता है, अग्नि को उद्दीप्त करता है। खाने में पाचक
हलका होता है, क्रिमि-समूह का नाश करता है। पेट के
का शमन करता है। शरीर के परिश्रम को दूर करता है।
और पित्त में लाभकारी है, रुचि को बढ़ाता है। और प
में तीक्ष्ण होता है।

नीबू—रोचक तथा अग्नि उद्दीपक होता है। पित्त को
करता है। वात-रक्तकारक है। नेत्रों के लिए अहितकारी है,
को बढ़ानेवाला और खाये हुए भोजन को पचानेवाला है।

नीबू—त्रिदोष में लाभकारी है, क्षय तथा बात रो
पीड़ित मनुष्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है। मंदाग्नि
कोष्ठबद्धता को दूर करने के लिए तो बड़ी अच्छी औषधि
विषूचिका के रोग में भी नीबू फ़ायदा करता है।

नीबू—गर्म, पाचक और खट्टा होता है, पाचन-शक्ति
बढ़ाता है। नेत्रों को लाभ पहुँचता है। अरुचि को दूर करता
प्रकृति में कटु, कपेला और हलका होता है। कफ, बात
वमन को मिटाता है। खांसी में फ़ायदा करता है। कण्ठरोग
लाभ पहुँचाता है। पित्त और शूल को दूर करता है। मल
खारिज करता है। विषूचिका आदि अनेक बीमारियों में

लाभ पहुँचता है। आमवात का नाश करता है। पक्का नीबू सर्वोत्तम होता है।

जम्भीरी नीबू—किञ्चित मीठा किन्तु खट्टा बहुत होता है। पित्त को बढ़ाता है। खाने में भारी और सुगन्धित होता है। अग्नि को तेज़ करता है। वायु को शुद्ध करता है।

जम्भीरी नीबू—खट्टा और मीठा होता है, वात का नाश करता है, पित्त को पैदा करता है। खाने में पथ्य होता है, प्रकृति में पाचक होता है। बल को बढ़ाता है और अग्नि को तेज़ करता है।

पका जम्भीरी नीबू—खाने में मीठा होता है, कफ़ का नाश करता है। रक्त-पित्त को निवारण करता है। खाने वालों के शरीर का सौन्दर्य बढ़ाता है। यह नीबू वीर्य की वृद्धि करता है और रुचि को सुन्दर करता है। इसके द्वारा शरीर की पुष्टि और इच्छा की तृप्ति होती है।

जम्भीरी नीबू—गर्म, भारी और अम्लकारक होता है। वात-कफ़ का नाश करता है। पीड़ा और खाँसी को दूर करता है। वमन और तृषा को शान्त करता है। मुख की अरुचि को मिटाता है, हृदय का पीड़ा को दूर करता है। मन्दाग्नि और कृमि का नाश करता है। छोटी और बड़ी जम्भीरी नीबू के गुण प्रायः समान होते हैं।

कन्ना नीबू—कफ़ और वात-रक्त को दूर करता है, मेद-रोगों का नाश करता है और पित्त को बढ़ाता है।

साधारण नीबू—स्वाद में खट्टा और पित्त को पैदा करने वाला होता है। अग्नि को तेज़ करता है। सब प्रकार की पीड़ाओं को शान्त करता है। अरुचि का नाश करके रुचि पैदा करता है। विषूचिका तथा कृमि-रोग को दूर करता है।

बड़ा जम्मीरी नीबू—खट्टा, कपेला और कड़ुवा होता है। प्रकृति इसकी सारक और गर्म होती है। यह पित्त और कफ को नाश करता है, खाने में पाचक होता है। छोटे जम्मीरी नीबू के गुण भी इसी प्रकार होते हैं।

मीठा जम्मीरी नीबू—प्रकृति में शीतल होता है, कफ बढ़ाता है। मुख को शुद्ध एवम् निर्मल करता है। रुचि बढ़ाता है। खाने में स्वादिष्ट होता है। इसके साथ भारी, स्निग्ध और वात-पित्त का नाश करने वाला होता है।

मीठा नीबू—खाने में स्वादिष्ट और भारी होता है। वात पित्त का नाश करता है। विष रोग को दूर करता है। विष शान्त करता है। कफ और रुधिर के विकारों में लाभ करता है। शोष, अरुचि और तृषा को मिटाता है। वमन बन्द करता है। शरीर का बल बढ़ाता है और पुष्ट करता है। मीठा नीबू बड़ा लाभकारक होता है।

चकोतरा नीबू—खाने में स्वादिष्ट और रोचक होता है। प्रकृति में शीतल और भारी होता है। रक्त-पित्त को दूर करता है। क्षय और श्वास तथा खांसी में फायदा करता है। हिचकी और भ्रम को दूर करता है।

उपयोग—

नीबू अनेक प्रकार के रोगों में चिकित्सा का काम करता है और वैद्य लोग उसका अनेक प्रकार से उपयोग करते हैं। किन्तु उसकी छोटी छोटी बातें, साधारण लोगों के बड़े काम की होती हैं, जिनका दिग्दर्शन नीचे दिया जाता है—

वमन पर—सूखे हुए मीठे नीबू को भूनकर और उसमें शहद में मिलाकर देने से वमन बंद हो जाता है।

अरुचि पर—प्रायः बीमारी में अथवा साधारण अवस्था में मुख का स्वाद बिगड़ जाता है, उस दशा में नीबू का रस चूसने से सुरुचि की उत्पत्ति होती है।

भूख न लगने पर—अक्सर बीमारी के पश्चात् भूख रुक जाती है और खाना अच्छा नहीं लगता। ऐसी अवस्था में नीबू को काटकर और उसमें नमक-मिर्च लगाकर, आग में सेंक-भून लेना चाहिए और फिर धीरे-धीरे उसी का रस चूसना चाहिए। इससे स्वाद अच्छा होता है, भूख लगती है और भोजन पचता है। पेट की वायु शुद्ध होती है।

नीबू के द्वारा खाने-पीने की अनेक चीजें बनाई जाती हैं। उनमें से दो-चार का यहाँ पर वर्णन कर देना आवश्यक है। जो चीज़ें उससे बनाई जाती हैं, उनके नाम और तरीके नीचे लिखे जाते हैं—

नीबू का अचार—एक-एक नीबू के जुड़े हुए चार-चार फाँकें करने चाहिए, उसके पश्चात् उनमें गर्म मसाला पिसा हुआ भर देना चाहिए और फिर नीबू का रस ऊपर से डाल कर धूप में सुखाना चाहिए।

दूसरी विधि—एक सेर नीबू छीलकर पानी में धो डालना चाहिए और उनको पोछकर पीतल के अतिरिक्त बर्तन में रखने चाहिए। उनमें तीन छटाक नमक डालकर उसमें रस खूब भर देना चाहिए।

तीसरी विधि—किसी मिट्टी के बर्तन में एक सेर नीबू रखकर पाव-भर पिसा हुआ नमक छोड़ देना चाहिए और रोज़ उसको हिला देना चाहिए।

मीठे नीबू का अचार—नीबुओं के चार-चार फाँके करके,

एक सेर नीबू में पाव भर गुड़ और आधपाव नमक चाहिए और नित्य हिलाकर धूप में सुखाना चाहिए।

दूसरी विधि—पचास नीबुओं का रस निकाल कर लेना चाहिए। उसमें सवा सेर बूरा और पाव-भर नमक, आधा पाव काली मिर्च, एक छटाक इलायची पीस डाल देना चाहिए और अमृतवान में रख देना चाहिये। महीने के पश्चात् ये नीबू खाने के योग्य हो जाते हैं।

नीबू का मुरब्बा—एक सेर नीबुओं को भावे से रग चूने के पानी में डाल देना चाहिए और दो दिनों के निकाल कर धो डालना चाहिए। इसके बाद आग पर चढ़ा जोश देना चाहिए। नरम पड़ जाने पर उसको चार सेर की चाशनी में डाल देना चाहिए।

नीबू के सम्बन्ध में बहुत-सी बातें लिखी जा सकती किन्तु अधिक लिखना अनावश्यक जान पड़ता है। नीबुओं उपयोग चतुर गृहस्थों के घरों में तरह-तरह से होता है। पर उनके सम्बन्ध में जो थोड़ी-सी बातों का वर्णन कर गया है उतना ही पर्याप्त है।

नारंगी

नारंगी के पेड़ अधिकतर सभी देशों में पाये जाते भारतवर्ष में, खान देश, धूंलिया और पूना में नारंगी के अधिक हैं। मोज़ाबीक द्वीप से जो नारंगी आती है, वह अच्छी और उपयोगी कही जाती है।

नारंगी का रस और छिलका—दोनों ही बड़े काम के हैं। उसका रस खाने के काम में आता है और उसका छिलका

के मुँहासों आदि को दूर करने के लिए, लगाया
ता है।

नारंगी का रस इनफ्लुएंज़ा के रोगियों को विशेष लाभ-
द होता है। रोगी चाहे तो अनेक सप्ताहों तक नारंगी ही
सेवन करके काम चला ले। नीबू के रस में तो एसिड
न करने की भी प्रवृत्ति होती है, किन्तु नारंगी में वह दोष
नहीं पाया जाता।

नारंगी दो प्रकार की होती है, मीठी और खट्टी, दोनों के
गों में अधिक अन्तर नहीं होता। हाँ कोई अधिक खट्टी होती
उसमें कुछ अन्तर पाया जाता है दोनों प्रकार की नारंगियों
गुण इस प्रकार है—

गुण—

मीठी नारंगी—इसकी गंध मनोहर होती है, भारी होने
कारण कुछ कठिनाई में पचती है। उसका स्वाद कुछ खट्टा-
लिए मीठा होता है। नारंगी का गुण वीर्य का बढ़ाना
र वात का नाश करना है।

खट्टी-मिट्ठी नारंगी—यह कफ को बढ़ाती है, पित्त को
उत्तेजना देती है। खाने पर कठिनाई से पचती है। कुछ दस्ता-
भी होती है। स्वाद इसका खट्टा-मिट्ठा मिला हुआ होता
यह वात को शान्त करती है, इसकी प्रकृति उष्ण और
र होती है।

खट्टी नारंगी—खट्टी नारंगी हृदय के लिए शक्ति वर्द्धक
शरीर को बल प्रदान करती है। प्रकृति में विशद, भारी
र रुचिपूर्ण होती है। यह सारक कुछ उष्ण और सुस्वादु
होती है। साधारणतया वात, श्रम और पीड़ा का नाश
ती है।

उपयोग—

जो नारंगी बहुत खट्टी होती है, वह खटाई का सी देती है। लोग नीबू के स्थान पर खट्टी नारंगी का रस डालते हैं। खट्टी होने के कारण ही कुछ लोग उसकी बनाते हैं। उसके द्वारा कढ़ी बनाने की रीति निम्न

नारंगी की कढ़ी—पहले कुछ खट्टी नारंगियों का निचोड़ लिया जाता है। उस रस में, आधा छटाक बुरा, तोला अदरख, दो आना-भर जीरा, चार बड़ी इलायची लेकर महीन पीसकर और छान कर डाल देना चाहिए पीछे से दालचीनी, हींग का बघार दे देना चाहिए। एक आ जाने पर उसे उतार लेना चाहिए।

अखरोट

अखरोट के वृक्ष चीन ईरान और हिमालय के अधिक होते हैं। इनकी पैदावार उत्तरी भारतवर्ष में होती है। पैंतीस-चालीस वर्ष के उपरान्त अखरोट के फल लगने आरम्भ होते हैं। इसका फल कच्चा दोनों अवस्थाओं में खाया जाता है। कच्चे फल का नमक के संयोग से अचार बनाते हैं। यह अचार बड़ा और खाने में रुचिकर होता है।

पिछले पृष्ठों में हम अनेक बार बादाम और चर्चा कर चुके हैं और यह बता आये हैं कि इनमें प्रोटीन मात्रा विशेष होती है। खूब अच्छी तरह चबाकर ये बहुत पोषक और लाभकारी आहार प्रमाणित हो सकते यदि एक मात्र इन्हीं का आहार किया जाय तो इन्हें कठिन नहीं होता। इनकी यह विशेषता उस अवस्था में

रहती है जब इनका संयोग केवल फलों के साथ होता किन्तु यदि ये अन्य किसी आहार के सहायक अंग बना जाते हैं, तब इनसे पूरा पूरा लाभ नहीं मिलता। अखरोट और इनके साथ बादाम में—सर्वांश में उपयोगी आहार भी विशेषताएँ मौजूद हैं—प्रोटीन, चर्बी, कारबोहाइड्रेट नमक इन सब का जितना अंश आवश्यक है उतना इनमें रा है। यदि केवल इस बात का ध्यान रक्खा जाय कि साथ कुछ फलों का सेवन भी आवश्यक है, तो इसमें नहीं कि मनुष्य के लिए ये बहुत उत्तम आहार प्रमाणित ।

का हुआ अखरोट खाने के काम में आता है। यह एक है और सूखा खाया जाता है। इसकी प्रकृति गर्म होती है, लए लोग जाड़े के दिनों में, शुष्क मेवों के साथ अखरोट लाकर खाते हैं। इसके खाने से शरीर में शक्ति उत्पन्न है, कान्ति की वृद्धि होती है। पके हुए अखरोट का तेल ला जाता है, यह तेल खाया जाता है, जहाँ पर इसके क वृक्ष होते हैं, वहाँ लोग इसका तेल निकलवाकर जलाने सिर में डालने के काम में लाते हैं। इसका तेल गर्म शक्ति- क और उपयोगी होता है।

गुण—

अखरोट—खाने में मीठा और कोई-कोई किञ्चित खट्टा है। इसकी प्रकृति स्निग्ध और शीतल होती है। अखरोट और रुचिकारक होता है। यह कफ और पित्त को उत्पन्न ता है। खाने में भारी और प्रिय होता है। शरीर में बल न्न करता है। मल की वृद्धि करता है। वात को शान्त ता है। हृदय के रोगों को दूर करता है। रुधिर के दोषों

को मिटाता है और रक्त को शुद्ध करता है। बात को करता है।

उपयोग—

पेट को साफ़ करने के लिए—अखरोट की छाल का घनाकर पीने से पेट का मल साफ़ हो जाता है और हो जाता है।

दूसरी विधि—पेट को साफ़ करने के लिये तेल बड़ा लाभकारी होता है। आवश्यकता पड़ने पर का तेल दो-तीन तोला पीने से अत्यधिक लाभ होता है।

अर्श के रोग पर—अखरोट के तेल में कपड़ा रखने से अर्श बड़ा को फायदा होता है। लगातार प्रयोग करने से अर्श के रोग का अन्त हो जाता है।

व्याधि, कृमि और गुल्म पर—इन रोगों के लि अखरोट का रस बड़ा उपयोगी होता है। इस प्रकार की भी बीमारी में उसका रस पीने से रोग का नाश होता है।

स्त्रियों के स्तनों में दूध पैदा करने के लिए—अखरो पत्तों को कूट कर और महीन करके सूजी आटे में चाहिए और उस मिले हुए की पूड़ियाँ बना कर साथ कम से कम सात दिनों खिलाने से स्त्रियों में दूध होता है।

वायु से उठी हुई सूजन पर—सर्दी पाकर शरीर कहीं न कहीं सूजन पैदा हो आती है, उसके लिये उपयोगी है। जहाँ कहीं शरीर में इस प्रकार का कष्ट हो, पर अखरोट को पानी में घिस कर लगाने से सूजन जाती है।

विपाविल

विपाविल के पेड़ कोंकण, कर्नाटक और गोवा की ओर
ाक होते हैं। इसके फल नारङ्गी के सामान होते हैं और
ने में बड़े सुन्दर मालूम पड़ते हैं।

विपाविल के बीजों का तेल निकाला जाता है। वह तेल
और औषधियों में डालने के काम में आता है। इसका
बड़ा उपयोगी और गुणदायक होता है। खाने में अत्यन्त
दिष्ट होता है। विपाविल में खटाई होती है, इसलिए भारत
क्षिण, गुजरात और कर्नाटक में, जहाँ इसकी उत्पत्ति होती
खटाई के लिये दाल और शाक में डाला जाता है। इससे
ई आ जाने के कारण ये चीज़ें बड़ी स्वादिष्ट बन जाती हैं।
की जो मोमबत्तियाँ बनाई जाती हैं, वे, मोम में इस तेल
मिलाने से ही बनाई जाती हैं।

गुण—

कच्चा विपाविल—यह खाने में खट्टा और गर्म होता है,
ा का नाश करता है। कफ़ को बढ़ाता है और पित्त को
ान करता है। खाने में फीका किन्तु रुचिकारक होता है।
ग्न को उद्दीप्त करता है। वातोदर, वात और अतिसार में
यदा करता है।

पक्का विपाविल—भारी और मलरोधक होता है। खाने
चरपरा, कपैला और हलका होता है। इसकी प्रकृति खट्टी
उष्ण और रोचक होती है। कफ़ को बढ़ाता है और वात
उत्पन्न करता है। प्यास और बवासीर को शान्त करता
संग्रहणी, गुल्म और शूलादि रोगों पर लाभ करता है।
ृदय के रोगों को मिटाता है, और कृमि को दूर करता है।
ग्न का उद्दीपन करता है, खट्टा और फीका होता है।

उपयोग—

विपाविल और उसका तेल—दोनों ही बड़े काम के हैं। ये शरीर के भिन्न-भिन्न व्याधियों और बीमारियों में आते हैं और बड़ा लाभ पहुँचाते हैं। उसके उपयोग की कुछ बातें नीचे दी जाती हैं।

अजीर्ण हो जाने पर—प्रायः अधिक घी खा लेने अन्य किन्हीं कारणों से अजीर्ण हो जाता है तो विपावि लोग प्रयोग करते हैं, इसका काढ़ा बनाकर पीने से तुरन्त होता है।

जलन होने पर—हाथ की हथेली और पैर के जलन होने पर विपाविल का तेल लगाने से बड़ा लाभ है और जलन शान्त हो जाती है। इस प्रकार के कामों में विपाविल का तेल अत्यन्त प्रसिद्ध और उपयोगी होता है।

होठों के फटने पर—सर्दी के दिनों में और तेज़ चलने पर प्रायः होठ और मुख फटने लगते हैं, लोगों को तो शीतकाल में इससे बड़ा कष्ट होता है। लिए विपाविल का तेल बड़ा उपयोगी और तुरन्त फायदा पहुँचाने वाला होता है। इसका तेल लगाने से हाथ-पैर, और मुख का फटना बन्द हो जाता है। सर्दी के दिनों में लोग इस तेल को लगाते रहते हैं, उनको यह कष्ट नहीं यह बदन को चिकना और मुलायम रखता है।

हड्डियों की पीड़ा पर—हड्डियों की पीड़ा बड़ी बुरी है। इस पीड़ा में किसी प्रकार चैन नहीं मिलती। इसके विपाविल के पत्तों को पीस कर गर्म करना चाहिये और गर्म बाँधना चाहिये, इससे हड्डियों की पीड़ा बहुत अच्छी हो जाती है।

शीत-पित्त पर—विषाविल के फलों को पाव-भर पानी में लकर और उसमें ज़ीरा और शक्कर मिलाकर पीने से लाभ ता है।

आलूबुख़ारा

आलुबुख़ारा के पेड़ फ़ारस, ग्रीस और अरब की ओर हुत अधिक होते हैं। हमारे देश में भी आलूबुख़ारा होता है न्तु उतना नहीं। ऊपर से देखने पर आलूबुख़ारा मुनक्का की ति मालूम पड़ता है किन्तु भीतर से पीला होता है। हमारे में यह बुख़ारा की ओर से अधिक आता है, इसीलिए सका नाम आलूबुख़ारा है।

आलुबुख़ारा, बादाम की तरह का ही होता है परन्तु उससे कुछ छोटा होता है। यह खाने में मधुर और रुचिकर ता है और पाचक भी होता है। साधारणतया लोग इसको टनी आदि बनाने में, प्रयोग करते हैं। वैद्य लोग उससे षधि का भी काम लेते हैं। आलुबुख़ारा उपयोगी और भकारक फल है।

गुण—

आलुबुख़ारा—इसको खाने से भोजन पचता है और मल फ़ हो जाता है। यह कषेला और हृदय के लिए लाभकारक ता है। प्रकृति इसकी भारी और शीतल होती है। यह मल र बाँधता है और दस्तावर होता है। इसकी तासीर गर्म ौर कफ पित्त को नाश करता है। स्वाद में कुछ खट्टा किन्तु खाने में मधुर, मुख-प्रिय और रुचि को उत्पन्न करने ाला होता है। प्रमेह, गुल्म बवासीर और रक्त-वात में आलुबुख़ारा फ़ायदा करता है।

पका हुआ आलूबुख़ारा—खाने में मधुर और भारी है।

यह कफ को उत्पन्न करता है। पित्त को बढ़ाता है। में यह गर्म और रुचिकारक होता है। खाने में बड़ा लगता है। यह धातु की वृद्धि करता है। प्रमेह बवासीर लाभ करता है और ज्वर तथा वात को शान्त करता है।

उपयोग—

मलबद्धता पर—इसकी प्रकृति दस्तावर होती है। लिए मल साफ़ न होने पर वैद्य आलूबुख़ारा को पानी घिसकर पिलाते हैं। इससे टट्टी साफ़ होती है और हलका हो जाता है।

मुँह के सूखने पर—मुख के सूखने पर आलूबुख़ारा को में रख कर उसका रस चूसने से मुँह में सूखापन नहीं रहता

आलूबुख़ारे की चटनी—पहले इसको पानी में भिगो हैं और भली भाँति भीग जाने पर उसको मसल कर गूदा निकाल लेते हैं तथा उसकी गुठली फेंक देते हैं। बाद नमक, सूखा पुदीना और काली मिर्च को पीस कर मिला देते हैं।

दूसरी विधि—आलूबुख़ारा, लालमिर्च, ज़ीरा, धनियाँ और नमक को नीबू के रस में पीसते हैं। ज़ीरा, हींग को भूनकर मिलाते हैं। यह चटनी बड़ी स्वादिष्ट जाती है।

आलूबुख़ारे की चटनी बड़ी उपयोगी और होती है। इसके खाने से मुख का स्वाद अच्छा होता है, बढ़ती है और खाने के पश्चात् खाना हज़म हो जाता है।

ह विशेषता है कि यह किसी को हानि नहीं पहुँचाती। यहाँ
क कि बीमारों तथा बीमारी से उठे हुए स्त्री-पुरुषों को भी
जाती है।

अनन्नास

अनन्नास का रस क़ब्ज़ दूर करने के लिए बड़ी अकसीर
ाज़ है। गले की बहुत सी बीमारियों में भी यह बहुत ही
भकारी सिद्ध हुआ है। गले की (Diptheria) बीमारी में
बहुत प्रभावशाली औषधि का काम करता है। रोग-ग्रस्त
ंत पर भी इसका अच्छा प्रभाव देखा गया है। साथ ही,
स्थ आँत पर भी, यदि इस रस का सेवन परिमित मात्रा
किया जाय तो, इसकी शक्ति बढ़ाने ही की प्रवृत्ति देखी
ती है, इससे किसी तरह की हानि नहीं पहुँचती। इसके
रण में यह कहा जा सकता है कि यह रस एक बरस से भी
अवस्था के बच्चों को दिया गया है और किसी तरह की
नि नहीं हुई है।

सेव

फलों में सेव को बादशाह की पदवी मिली है। उनमें
टाश, सोडा, मैग्नेशिया और फासफोरस प्रचुर मात्रा में
प्रमान रहते हैं। इस कारण, स्नायु और मस्तिष्क के लिए
त हितकारक आहार माना जाता है। यह रोग कीटाणुओं
मारता और शरीर के भीतर निर्मलता का संचार करता
सेव के सेवन से पेट में एसिड की वृद्धि नहीं होती,
तव में उससे वह घटता है। वे साधारण आहार का स्थान

लेने के साथ साथ पौष्टिक विशेषता से सम्पन्न पाये जा
सेब खाने से कब्ज़ दूर होता है। अन्य फलों की अपेक्षा
मनुष्य के शरीर की आवश्यकताओं की अधिक
करता है। सेब की उपयोगिता को देखते हुए यदि हम
मात्र उसी पर कुछ दिन तक निर्भर रहने का
यह भी विचारणीय बात है। विशेष करके गर्मियों में
प्रयोग सुविधापूर्वक किया जा सकता है। सेब
बहुत ही लाभकारी वस्तु है।

केला

केला देर में पचनेवाली भारी चीज़ है। इसलिए
सेवन में हमें सावधानी करनी चाहिए। लोगों ने इसे
प्रदेशों की रोटी' की उपाधि दी है। यदि हम अधिक
इसका व्यवहार करना चाहें तो अवश्य ही हमको
स्मरण रखनी चाहिए। केला खाते समय यह तो देख ही
चाहिए कि वह अच्छी तरह पका है या नहीं।
छिलकों को खाने का उद्योग नहीं करना चाहिए,
अत्यन्त कठिनता से पचता है। जिन लोगों को केला
नहीं होता, उन्हें ज्यों ही यह बात मालूम हो जाय
खाना त्यागकर देना चाहिए। केला का किसी अन्य
साथ मेल नहीं खाता; इसलिए इसे अकेला ही खाना

अंगूर

अंगूर की उपयोगिता का इसी से अनुमान
सकता है कि अनेक स्थानों में अंगूर के आहार-द्वारा

रने का उद्योग किया जाता है। ऐसे स्थानों में यह तो अनु-व किया जा चुका है कि अंगूर खाकर अनेक सप्ताहों तक नुष्य रह सकता है। विशेष करके क्षयरोग तथा इस तरह की र बीमारियों में अंगूर-औषधि को सफलता भी प्राप्त हुई

आहार के रूप में मीठे अंगूर बहुत मूल्यवान हैं। उनके दर जो जल विद्यमान रहता है उससे अधिक शुद्ध जल कहीं त नहीं सकता। उनमें चीनी का अंश भी यथेष्ट रहता है, तका मानव आहार में एक भाग रहना अत्यंत आवश्यक हमारे अनेक आहारों में स्टार्च मौजूद रहता है, उससे उक्त वांछित चीनी का अंश प्राप्त होता है। लेकिन हमारे ार-द्वारा उसके रक्त में ग्रहण किये जाने के योग्य बनने के ले उसको अनेक अवस्थाओं में पार होना पड़ता है। अंगूर विद्यमान चीनी के अंश में यह कठिनाई भी नहीं, वह अपने त रूप ही में शरीर द्वारा स्वीकृत कर लिया जाता है। ऐसी स्था में अंगूर का सेवन तो सर्वथा अनुमोदनीय है।

अंगूर अपने देश में तो पैदा होता ही है, अन्य देशों बहुत अधिक आता है। विदेशों से जितने भी फल अपने ा में आते हैं, उनमें सब से अधिक अंगूर ही आता है। पने देश में प्रान्तिकता के अनुसार अंगूर के भिन्न-भिन्न नाम परन्तु हिन्दी में हो अंगूर के कितने ही नाम लिए जाते अथवा यों कहा जाय कि उसकी अनेक क़िस्में हैं। किशमिश, मुनक्का, अंगूर, बेदाना आदि उसके कई एक नाम थवा उसकी क़िस्में हैं।

अंगूर अपने देश में, कश्मीर, पंजाब और बिलोचिस्तान ान्त के क्वेटा आदि में बहुत पैदा होता है। अंगूर की पैदावार

ऊँचे स्थानों में ही होती हैं। किन्तु काश्मीर का अंगूर सब से उत्तम होता है।

अंगूर दो प्रकार का होता है, एक तो दानेदार और दूसरा बिना दानेदार। बिना दाने का, अंगूर सूखकर किसमिस हो जाता है और दानेदार अंगूर सूखकर दाख हो जाता है। इस प्रकार किसमिस, दाख, मुनक्का और अंगूर में साधारणतया एक ही गुण होता है। अंगूर ताज़ा खाने में बड़ा स्वादिष्ट और रुचि पूर्ण होता है। इसका रस मीठा और लाभकारी होता है।

साधारणतया लोगों का विश्वास होता है कि अंगूर से मनुष्य की शक्ति बढ़ती है किन्तु यह विश्वास ग़लत है। अंगूर से शरीर की शक्ति नहीं बढ़ती। वरन् उसके रस से यकृत शुद्ध होता है और उसकी क्रिया को सहायता मिलती है। इसलिए अंगूर के द्वारा क्षुधा वृद्धि होती है अंगूर खाने से शरीर में रक्त बढ़ता है, रुधिर शुद्ध होकर गति में स्फूर्ति प्राप्त करता है। इसके खाने से किसी रोग की नहीं होती। बालकों से लेकर बूढ़ों तक सभी बड़ी रुचि के साथ अंगूर खाते हैं। इससे स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। का सौन्दर्य बढ़ता है।

अंगूर के द्वारा खाने की अनेक चीज़ें बनाई जाती हैं। मुरब्बा बनता है, जो बड़ा रुचिपूर्ण, शक्तिवर्द्धक और खाने में पाचक होता है। अंगूरों का शरबत बनाया जाता है यह शरबत शीतल और रक्त बढ़ाने वाला होता है। गर्मी के दिनों में इसके सेवन से बड़ा लाभ होता है। शरीर की गर्मी शान्त होती है, बदन पर प्रत्येक समय स्फूर्ति रहती है। हर समय हँसता हुआ दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त अंगूर से शराब तैयार की जाती है। यह शराब, सभी प्रकार

शराबों में अत्युत्तम होती है। शराबों में अंगूरी शराब का नाम प्रसिद्ध है।

अंगूरों की चटनी भी बनाई जाती है, जो बड़ी ज़ायकेदार और उपयोगी होती है। उसके खाने से अन्य भोज्य पदार्थ भी रुचिपूर्ण और स्वादिष्ट जान पड़ते हैं। खाना हज़म होकर फिर शीघ्र ही भूख लगती है।

शरीर के पालने में अंगूर से अधिक उपयोगी और कोई फल नहीं होता। जहाँ पर यह पैदा होता है, वहाँ पर मानो, मनुष्य के जीवन के लिए सुधा उत्पन्न होती है। यू० पी० में उत्पन्न न होने के कारण अंगूर तेज़ बिकता है फिर भी यह इतना लाभकारक होता है कि पैसे वाले, तथा समर्थ व्यक्ति इसे खरीद कर खाते हैं। बिना मौसिम जो अंगूर मिलता है वह भाव में बहुत तेज़ होता है किन्तु फसल पर अंगूर सब जगह करीब-करीब सस्ता हो जाता है।

गुण—

पका हुआ अंगूर—कुछ दस्तावर होता है, प्रकृति में शीतल और नेत्रों के लिए हितकारी होता है। इससे स्वर शुद्ध होकर, तीव्र होता है। इसका स्वाद मीठा, अत्यन्त मनोहर और रुचिकारक होता है। इसके खाने से मल और मूत्र साफ़ होता है। वीर्य की वृद्धि होती है। किञ्चित कफ़ उत्पन्न करता है। शरीर को पुष्ट करता है। रुचि को बढ़ाता है। तृष्णा और ज्वर को शान्त करता है। श्वास-रोग और वात-रोग का नाश करता है। मूत्र कृच्छ, रक्त-पित्त का दमन करता है। मोह और दाह का शमन करता है और शोष आदि रोगों में बड़ा लाभ पहुँचाता है।

कच्चा अंगूर—भारी और खट्टा होता है। रक्त-पित्त उत्पन्न करता है। कड़ुवा और कुछ उष्ण होता है। साधारणतः रुचिकारक होता है। अग्नि को बढ़ाता है।

अंगूर—खाने में मीठा और कोई-कोई कुछ खट्टापन होता है। तृषा और रक्त-पित्त का नाश करता है। भ्रम मिटाता है। खाने से तृप्ति होती है और शरीर पुष्ट होता है।

अंगूर—धातु को बढ़ाता है। शोष का नाश करता, श्वास को हरता है। वात को दूर करता है। वमन को करता है। अंगूर सुरस मधुर और वीर्य प्रद होता है। और कफ को दूर करता है। मल को शुद्ध करता है।

अंगूर—कुछ स्थानों का अंगूर मीठा और कुछ होता है। किसी क्षार के साथ खाने से, पित्त, वात और का नाश करता है। रक्त से उत्पन्न हुए रोगों को, जलन शोष को मिटाता है। श्वास और खाँसी को दूर करता है।

अंगूर—प्रकृति में शीतल और हृदय के लिए हितकारी है। अंगूर के खाने से वीर्य की वृद्धि होती है। आत्मा को शांति मिलती है। श्रम और दाह का शमन होता है। श्वास, खांसी के लिए लाभ-प्रद होता है। कफ, पित्त और ज्वर मिटाता है। हृदय की व्यथा को शान्त करता है।

किसमिस—खाने में मधुर और शीतल होती है। वीर्य वृद्धि करती है। रुचि को बढ़ाती है, किंचित खट्टी होती है। स्वास, खाँसी, ज्वर और हृदय की पीड़ा में फायदा करती है। रक्त-पित्त, स्वर-भेद, तृषा, वात और मुख के कड़ुवेपन को करती है।

उपयोग—

प्यास के रोकने में—बुखार में जब प्यास अधिक होती और पानी पीने से शान्त नहीं होती तो काली मिर्च और नक के साथ मुनक्का देने से प्यास रुक जाती है।

मल की रुकावट में—जब किसी मरीज़ या निर्बल आदमी ा कोष्ठबद्धता की शिकायत होती है, और उसे दस्त नहीं ाता, उस अवस्था में उसकी बीमारी और कमज़ोरी के कारण सको कोई जुलाब नहीं दिया जा सकता। इसलिए मुनक्का ख़िलाकर ऊपर से दूध पिला दिया जाता है। अथवा दूध में ुनक्कों को कुछ देर तक पकाकर, वह दूध पिला दिया जाता ै। इससे पेट हलका हो जाता है और दस्त भी साफ़ हो ाता है।

अंगूर का मुरब्बा—धुले हुए अंगूरों को बाँस की बहुत तली तीलियों से छेद डालते हैं और उसके बाद शक्कर की ाशनी में उन अंगूरों को छोड़ देते हैं। अंगूर का मुरब्बा ानाते समय इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि अंगूर गल ा जायँ।

अंगूर की चटनी—इसकी चटनी बड़ी सुन्दर और स्वादिष्ट होती है। इसके बनाने में कोई कठिनाई नहीं होती। अंगूरों को पीसकर उसमें ज़ीरा, काली मिर्च, पुदीना और नमक मिला दिया जाता है।

इमली

इमली भारतवर्ष में तो होती ही है, अमेरिका, अफ्रीका और एशिया के अन्यान्य देशों में भी बहुतायत से पाई जाती है। इसके वृक्ष बहुत बड़े-बड़े होते हैं और आठ-दस वर्ष के

बाद इसमें फल लगने आरम्भ हो जाते हैं। इमली चैत्र महीने में पककर गिरने लगती है। इसके पहले यह रहा करती है। फागुन के दिनों में वह कुछ भीतर से जाती है और उसका कचापन मिट जाता है। उन दिनों में यह खाई जाती है। कच्ची इमली बहुत अधिक खट्टी होती गद्दर होने पर उसकी खटाई कम हो जाती है।

पकी हुई इमली सूखी खाई जाती है। वह खाने में होने के साथ-साथ खट्टी भी होती है। कुछ वृक्षों की इमली पक जाने पर बहुत कम खट्टी मालूम होती है लेकिन कुछ की इमली पकने पर भी काफ़ी खट्टी रहती है।

इमली के पेड़ देहात में अधिक होते हैं। गाँव के वाले लोग जब इमली कच्ची होती है तभी से उसका आरम्भ कर देते हैं। खट्टी होने के कारण, दाल, आदि में डाली जाती है। गद्दर इमली की खटाई स्वादिष्ट और रुचिकारक होती है। इसकी चटनी बड़ी बनती है।

पकी हुई इमली खाने में बड़ी ज़ायकेदार होती है। होने के कारण वह अधिक नहीं खाई जाती। फिर किसान और मज़दूर सूखी खाकर कभी-कभी अपनी मिटाते हैं। पकी हुई इमली से खाने की बहुत-सी चीज़ें हैं। फसल के दिनों में बहुत-सी इमली इकट्ठा करके अपने घरों में रख छोड़ते हैं और उसके भीतर का जिसको चिया कहते हैं निकाल कर गूदे के बड़े-बड़े लड्डू बाँध लेते हैं। लड्डू बाँधते समय बारीक पिसा हुआ मिला लेने से इमली में कीड़े नहीं लगते।

पकी हुई इमली का पना बड़ा अच्छा बनाया जाता है।
ा स्वाद बड़ा मनोहर होता है। यह पना रोटी और भात
थ खाया जाता है। इमली के बीज, चिया खाने के भी
में आते हैं। ग़रीब लोग उनको सेंककर खाते हैं। इसके
चियों का तेल भी निकाला जाता है। यह तेल कहीं-कहीं
ाम में भी लाया जाता है किन्तु प्रायः लोग उसे बेकार
ते हैं। किन्तु लोगों का यह समझना बहुत अधिक सही
है।

गुण—

कच्ची इमली—वात का नाश करती है। खाने में बहुत
क खट्टी होती है। कफ़ को बढ़ाती है और पित्त को उत्पन्न
ो है। कमज़ोर तथा बीमार आदमियों को कच्ची इमली
ाने से खाँसी आने लगती है।

पकी इमली—खाने में पाचक होती है। मन्दाग्नि को
ती है। भूख पैदा करती है। इसकी प्रकृति बहुत गर्म
है। इसके खाने से कफ़ और वात शान्त होता है।
ा स्वाद खट्टा मिला हुआ मिट्ठा होता है।

नई इमली—पकने के पहले जो इमली होती है उसमें
ई बहुत अधिक होती है। नई इमली और कच्ची इमली
न्तर होता है। नई इमली से मतलब बड़ी इमली से होता
नवीन इमली बहुत अधिक खट्टी और कषैली होती है।
के खाने से वात और कफ़ बहुत उत्पन्न होता है।

इमली का क्षार—यह इमली को जलाकर बनाया जाता
इसका यह गुण है कि मन्दाग्नि को मिटाता है और शूल
ाश करता है। इमली का क्षार बड़ा उपयोगी होता है।

पकी इमली का रस—यह खाने में खट्टा और मीठा है। रुचि उत्पन्न करता है। ज़ायकेदार और मधुर ... यह व्रण का नाश करता है और शरीर में किसी प्रकार ... तथा शूल में इसके रस का लेप करने से बहुत लाभ होता

इमली का सार—यह खाने में जलन पैदा करता है। ... को बढ़ाता है। वात को नाश करता है। बहुत अधिक ... होता है। यदि उसके सार में बराबर शक्कर ... तो यह जलन, पित्त और कफ़ को नाश करता है।

पुरानी इमली—वात और पित्त को बढ़ाती है। ... खटमिट्ठी और ज़ायकेदार होती है।

सूखी इमली—यह हलकी और पाचक होती है। ... स्वाद खट्टा और मिट्ठा होता है। यह श्रम, प्यास और ... को नाश करती है।

इमली का पत्ता—जलन और कफ़ पैदा करता है। ... खट्टा होता है किन्तु वात का नाश करता है। शक्कर ... कर खाने से दाह, पित्त और कफ़ को मिटाता है। ... स्वादिष्ट और रुचिकारक हो जाता है।

उपयोग—

आँखें दुखने पर—इमली की हरी पत्तियों को ... पत्ते में बाँधकर ऊपर से कपरौटी करके अग्नि में गरम ... चाहिए। उसके पश्चात् इन पत्तियों का रस निकालकर ... भूनी हुई फिटकरी और चना-भर अफ़ीम ताँबे के ... घोंटना चाहिए और इस प्रकार तैयार हो जाने पर ... भिगोकर आँखों पर रखना चाहिए।

भूख कम लगने पर—इमली के पत्तों की चटनी बनाकर से रुचि बढ़ती है। भूख लगती है और खाना हज़म होता

भंग के नशे पर—इमली को पानी में गलाकर और उसका उसमें मसलकर भंग के नशे में पिलाने से बहुत जल्दी र जाता है।

अरुचि और पित्त पर—जो इमली अन्दर से पक गई हो जिनका गूदा मोटा-मोटा हो, उस प्रकार की इमली र पानी में भिगो देना चाहिए और उनके भीग जाने पर हो मसल कर उसमें शक्कर, इलायची के दाने, लौंग, र और काली मिर्च मिलाकर बार-बार उसका कुल्ला ना चाहिए। इससे अरुचि का नाश होता है और पित्त होता है। अरुचि को मिटाने के लिए यह बड़ा लाभकारी ा है।

कब्ज़ और पित्त पर—एक सेर इमली को लेकर दो सेर ी में भिगो देना चाहिए और कम से कम चार पहर तक जाने के बाद, उसे चूल्हे पर चढ़ा देना चाहिए। जब ा पानी जल जाय तो उसमें दो सेर शक्कर की चाशनी कर मिला देना चाहिए। इस प्रकार बन जाने पर दो ा से लेकर पाँच तोला तक इसका शर्बत बनाकर पीना हिए। कब्ज़ वालों को रात के समय और पित्त वालों को ःकाल पीना चाहिए।

इमली की चटनी—पकी इमलियों को भिगो देना चाहिए भीग जाने पर हाथ से उनको मसल लेना चाहिए। के बाद पोदीना, मेथी, धनिया, ज़ीरा और हींग भूनकर क तथा लाल मिर्च को पीसकर उसमें मिला देना चाहिए। चटनी बड़ी स्वादिष्ट बनती है।

इमली का मुरब्बा—पकी हुई इमली आध सेर लेक बीज निकाल देना चाहिए। फिर उन इमलियों को उबाल कर बूरे की चाशनी में मुरब्बा बना लेना खाने में पाचक और स्वादिष्ट होता है।

इमली की पकौड़ी—इमली को भिगोकर उसका पना लेना चाहिए। इसके बाद उसमें बेसन की डाल देना चाहिए और नमक लाल मिर्चा और भुना जीरा पीसकर मिला लेना चाहिए।

अनार

भारतवर्ष में अनार सर्वत्र पाया जाता है किन्तु का होने वाला अधिक प्रसिद्ध है। अरब में भी अनार हुए हैं। यह तीन प्रकार का होता है। मीठा, खटमिट्ठा और अनार खाने में अत्यन्त रुचिकर और शरीर को बल होता है। इसमें यह विशेषता है कि निर्बल और ही खा सकते हैं। रोगी मनुष्यों को भी अनार लाभ है और किसी प्रकार की हानि नहीं करता। सबल और मनुष्य भी इसको खाकर लाभ उठाते हैं।

अनार के खाने से शरीर में रक्त बढ़ता है। स्फूर्ति होती है और बल प्राप्त होता है। जो लगातार अनार खा उनके शरीर का रंग लाल हो जाता है और मुखाकृत पर आ जाता है। यह खाने में अत्यन्त रसीला और स्व मालूम होता है। इसको बच्चे से लेकर बुड्ढे तक बड़ी और प्रेम के साथ खाते हैं। अनार के रस का पुष्टि कारक नाया जाता है। इस पाक को लोग अनार-पाक कहते हैं।

गुण—

मीठा अनार—त्रिदोष नाशक होता है, प्यास, जलन
र को दूर करता है। हृदय के रोगों को लाभ पहुँचाता है।
और मुख के सभी रोगों को दूर करता है। इसके खाने से
त मिलती है। वीर्य बढ़ता है। यह हलका कुछ कषेला
मल को रोकने वाला होता है। शरीर का बल और उत्ते-
प्रदान करता है।

अनार—हृदय के लिए लाभकारी होता है। यह खट्टा
कुछ गरम होता है। वात को नाश करता है। मल को
ना है, अग्नि को तेज करता है। प्राकृति में कषेला तथा
और पित्त को दूर करने वाला है।

अनार—मीठा अनार, शक्तिवर्धक और त्रिदोष नाशक
है और खट्टा अनार, वात-पित्त का नाश करता है,
र को शान्त करता है, खाने में रोचक होता है, प्रकृति में
क और हलका होता है। अग्नि को तेज करता है।

पक्का अनार—बल बढ़ाता है, पित्त को नाश करता है।
को शान्त करता है, खाने में हलका और शीतल होता
त की ख़राबी, किसी प्रकार की जलन, मूर्छा और प्यास
करता है। अनार शरीर की निर्बलता को दूर करता
जीर्ण को मिटाता है, भूख को पैदा करता है, रुचि को
है। ज्वार, वमन में फायदा करता है। यह खाने में
त मीठा और वीर्य को बढ़ाने वाला होता है किन्तु कफ
द्धि करता है।

नारियल

नारियल को गरी और खोपरा भी कहते हैं। कालीकट और बंगाल में अधिक पैदा होता है। नारिय पेड़ चालीस-पचास हाथ तक ऊँचा होता है। सात के बाद इसमें फल लगने आरम्भ होते हैं। नारियल के का जितना अंश खाने योग्य होता है वह गरी या जाता है। इसका छिलका बहुत सख्त होता है उसके पर एक बड़ा गोला-सा निकलता है, यही गरी का गोला जाता है। छिलके के सहित लोग उसको नारियल कहते

गरी खाई जाती है। इसको बारीक कतर कर और पकवानों में भी डाला जाता है। गरी गोले निकाला जाता है। उसको लोग खाते हैं, चिराग में और सिर के बालों में लगाते हैं। इसका तेल लकड़ी की हुई चीज़ों में लगाया जाता है। साबुन बनाने के काम इसका प्रयोग होता है। तेल निकाल लेने के बाद जाती है वह जानवरों को खिलाई जाती है।

गुण—

नारियल—यह खाने में मीठा, भारी, चिकना और होता है। इससे हृदय को बल प्राप्त होता है। शरीर को पुष्ट करता है और रक्त-पित्त को दूर करता है।

नारियल—यह वीर्य को बढ़ाता है, कठिनाई से होता है। बस्ति का शोधन करता है। इसके खाने से बलवान् और पुष्ट होता है। नारियल खाने में अत्यन्त दिष्ट किन्तु कफ को बढ़ाने वाला होता है। रक्त के दोष जलन को शान्त करता है।

नारियल—खाने में रुचिपूर्ण होता है। हृदय के शक्ति
। है। पित्त के नाश करता है। पचने में भारी होता है,
न का नाश करता है और कामदेव की शक्ति के बढ़ाता है।

कोमल नारियल—यह चिकित्सा में बहुत काम आता है।
ोषकर पित्त के बुखार के दूर करता है, दूषित रक्त की
ारियों को मिटाता है। प्यास के शान्त करता है। वमन,
(और रक्त-पित्त से उत्पन्न हुए सभी रोगों में फ़ायदा
ता है।

पक्का नारियल—यह जलन के बढ़ाता है। पित्त के
करता है, वीर्य की वृद्धि करता है, मल के रोकता है।
के खाने से रुचि की वृद्धि होती है, अग्नि तेज़ होती है,
र में बल बढ़ता है। यह खाने में मीठा मालूम होता है।

सूखा नारियल—यह खाने से बड़ी कठिनाई में पचता है।
र में दाह उत्पन्न करता है। यह भारी और स्निग्ध होता
मल के रोकता है, शरीर में बल और वीर्य की वृद्धि
ता है। यह रुचि के बढ़ाने वाला होता है।

नारियल का दूध—बल के बढ़ाता है, रुचि के पैदा करता
खाने में भी भारी और पाचक होता है। इससे वीर्य की
द्धि होती है, किन्तु शरीर में जलन उत्पन्न होती है। यह कुछ
म तथा वात, कफ़, गुल्म एवम् खाँसी के लाभ पहुँचाता
।

नारियल का जल—प्यास और पित्त का नाश करता है।
ने में स्वादिष्ट और स्निग्ध तथा शीतल होता है। हृदय
शक्ति देता है, अग्नि के उद्दीप्त करता है, वस्ति का शोधन
ता है। इसके खाने से वीर्य की वृद्धि होती है। नारियल
जल, पित्त के ज्वर के दूर करता है।

नारियल का तेल—इसमें वाजीकरण का गुण होता ... धातु के निर्बल मनुष्यों को लाभ पहुँचाता है। ... नाश करता है। मूत्राघात और प्रमेह की बीमारी में ... योगी होता है। खाँसी और श्वास के रोगियों को ... पहुँचाता है। राजयक्ष्मा जैसे रोगों के लिए भी बड़ा ... होता है।

मीठा नारियल—यह खाने में शीतल, मीठा और ... कारक होता है। इससे बल की वृद्धि होती है, रुचि ... होती है और अग्नि तेज़ होती है। इससे शरीर की ... बढ़ती है। यह कृमि पैदा करने वाला और स्निग्ध होता ... इससे कफ़ की वृद्धि होती है काम की उत्तेजना बढ़ती ... जलन का नाश का होता है। मीठा नारियल तृषा, पित्त, ... श्रम, वात और अतीसार को दूर करता है।

उपयोग—

नारियल या गरी अनेक प्रकार की बीमारियों में ... आती है। चूहे के काटने पर—पुरानी गरी को मूली के ... घिसकर लगाने से तुरन्त लाभ होता है।

भिलावाँ लग जाने पर—गरी को घिसकर ... लगाने से बड़ी जल्दी फायदा होता है और भिलावें का ... दूर हो जाता है।

खुजली पर—गरी के रस में थोड़ा-सा गंधक ... उसको उबालना चाहिए और तेल बन जाने पर उसे ... लेना चाहिए। शरीर में इस तेल के लगाने से दाद ... खुजली का नाश होता है।

खजूर या छुहारा

। खजूर या छुहारा भिन्न-भिन्न पदार्थ नहीं हैं लेकिन फिर भी ग खजूर को छुहारे से भिन्न समझते हैं। दोनों एक होते भी भिन्न-भिन्न हैं। बात यह है कि खजूर के जो फल पकने कुछ पूर्व तोड़कर सुखा लिए जाते हैं वे छुहारे कहलाते हैं। र ईरान में यह फल बहुत होता है और इसीलिए वहाँ के ासी खाली छुहारा खाकर अपने कितने ही दिन व्यतीत ते हैं।

छुहारा सूखे फलों में गिना जाता है। इससे शरीर को स्थ्य मिलता है। जो पुष्टकारक खाने के समान बनाए जाते में अन्याय सूखे फलों (मेवों) के साथ छुहारा भी डाला । है। इसको लोग अलग से भी खाते हैं। इसकी गुठली इसका गूदा दोनों ही काम के होते हैं। गुठलियों से तेल ाला जाता है। यह जलाने और दवाओं में डालने के काम ाता है। इसके सिवा गुठली कई प्रकार से दवा के स्थान योग की जाती है। इसकी गुठली को घिसकर खाने से र की अधिकता तुरन्त रुक जाती है। जब किसी को प्यास अधिकता होती है और बार-बार पानी पीने से भी प्यास बुझती तो लोग इसी गुठली का उपयोग करते हैं।

छुहारा पुष्टकारक होता है। यह सभी लोग जानते हैं। और बड़े, सभी लोग बड़े प्रेम से उसको खाते हैं। निर्बल ां को छुहारा दूध में उबाल कर खिलाने से बड़ा लाभ है।

गुण—

खजूर या छुहारा—खाने में मीठा और स्निग्ध होता है। को बलवान करता है। यह भारी और शीतल होता है।

इसके खाने से तृप्ति होती है, शरीर पुष्ट होता है। वीर्य बल की वृद्धि होती है। वात-ज्वर का नाश होता है। पित्त, क्षय तथा वमन (कै) शान्त होती है। प्यास बुझती खाँसी तथा श्वास की बीमारी में फ़ायदा करता है।

कच्चा खजूर—इसके खाने से त्रिदोष की शान्ति है। प्यास की तृप्ति होती है।

खजूर या छुहारा—जलन को दूर करता है, खाने में होता है रक्त और पित्त का निवारण करता है, करता है। इसकी प्रकृति शीतल और स्निग्ध होती है, और परिश्रम का दमन करता है, शरीर को पुष्ट... इसके खाने से बल और वीर्य बढ़ता है।

उपयोग—

खजूर या छुहारा अनेक प्रकार से दवाओं के... आता है। यहाँ पर उसके सम्बन्ध में कुछ मोटी-मोटी नीचे दी जाती हैं जिनसे सर्वसाधारण को लाभ सकता है।

खाज पर—छुहारे की गुठलियों को निकालकर डालना चाहिए। उसके पश्चात् उसकी राख में कपूर मिलाकर खाज में लगाने से खाज अच्छी होती है... जल्दी फ़ायदा होता है।

आमवात पर—पाव-भर खजूर के फलों को ति... पानी में उबालना चाहिए और उसके बाद उस पानी को आमवात के रोगी को पिलाना चाहिए।

जलन पर—थोड़े-से खजूर के फलों को पानी में देना चाहिए उनके गल जाने पर पानी में उनको मल...

हिए। इस प्रकार तैयार किया हुआ छुहारे का पानी पिलाने लन दूर होती है।

मस्तक की पीड़ा में—चाहे जितनी सिर में पीड़ा होती छुहारे की गुठली को पानी में घिसकर मस्तक में लेप करने मस्तक की पीड़ा शान्त हो जाती है।

प्रदर की बीमारी में—यह बीमारी स्त्रियों के लिए बड़ी कर होती है। छुहारे की गुठलियों को कूटकर और घी में कर, गोपीचन्दन के साथ खाने से प्रदर की बीमारी को न होता है और यदि लगातार इसका सेवन किया जाय सदा के लिए प्रदर की बीमारी अच्छी हो जाती है।

भूख बढ़ाने के लिए—छुहारे का गूदा निकालकर दूध में ाना चाहिए और जब छुआरों का सत दूध में उतर आवे दूध को आग से उतार लेना चाहिए। इसके बाद दूध को ा करके छुहारे के गूदे को निकालकर फेंक देना चाहिए। दूध को पी जाना चाहिए। यह दूध बड़ा पुष्टकारक होता इससे भूख भी बढ़ती है और खाना हज़म होता है।

छुहारे से खाने की कितनी ही चीज़ें बनाई जाती हैं जो स्वादिष्ट और बड़ी रुचिकर होती हैं। आवश्यकता झकर उनकी कुछ बातों का नीचे उल्लेख किया जाता है।

छुहारे का अचार—छुहारे को पानी में भिगोकर गुठली ाल देना चाहिए। इसके बाद पाव-भर किसमिस, आधा अमचूर, पाव-भर सोंठ और तीन छटाक नमक को में मिलाकर बढ़िया सिरके में डाल देना चाहिए और -दस दिन तक धूप में सुखाना चाहिए।

छुहारे का मुरब्बा—छुहारे के गूदे को रात-भर पानी में ोना चाहिए और सबेरे उसको निकालकर बूरे की चाशनी

में डाल देना चाहिए। यह खाने में स्वादिष्ट तो होता है शरीर को भी पुष्ट करता है और बल को बढ़ाता है।

छुहारे का हलुआ—पाव-भर छुहारे को पानी में पीस लेना चाहिए। और एक सेर दूध में उसको आग पर चढ़ा देना चाहिए। उसको चलाते-चलाते जब रवादार होने लगे तो पाव-भर घी और पाव-भर शक्कर देना चाहिए। इसके सिवा दो माशा केसर, इलायची और मेवा डालकर दूध का छींटा देते रहना चाहिए। बस तैयार हो जायगा।

छुहारे की चटनी—आधा पाव छुहारा लेकर पानी में देना चाहिए। उसके भीग जाने पर उसको आधपाव किश आधपाव अदरक, आधी छटाक काली मिर्च, तीन लाल भुनी हुई हींग और जीरा को साथ-साथ पीस कर डाल चाहिए और बाद में नीबू का रस मिला लेना चाहिए।

चिरौंजी

चिरौंजी के पेड़ नागपुर, मलाबार प्रान्त के विभिन्न और कोंकण तथा प्रायः पहाड़ी प्रदेशों में अधिक पाये जाते इसमें बहुत छोटे-छोटे फल किन्तु गुच्छे के गुच्छे लगते फलों के भीतर अरहर के समान छोटे-छोटे बीज निकलते उन्हीं को चिरौंजी कहते हैं।

चिरौंजी एक मेवा है, यह खाने में मीठी और होती है। यह शरीर को पुष्ट करती है। इसको लोग और मिठाइयों में डालते हैं। सर्दी के दिनों में जो लिए लड्डू आदि बनाये जाते हैं, उनमें अन्यान्य मेवों के

लिए .कुवत पैदा करता है। मस्तक पर मलने से मस्ति-
लिए बड़ा उपयोगी होता है।

उपयोग—

शीत पित्त पर—शरीर में शीत-पित्त की अधिकता
पर चिरौंजी को दूध में पीसकर, उसकी मालिश
लाभ होता है।

चिरौंजी का उबटन—चिरौंजी को पानी में पीस
गाढ़ा-गाढ़ा उबटन बनाकर, शरीर में मालिश करने से
लाभ होता है, इससे बदन उज्वल होता है, जलन
है, शरीर में कान्ति बढ़ती है। और आत्मा को
होती है।

चिरौंजी की पट्टी—त्योंहारों में खाने के लिए
के दिन फलाहार करने के लिए, लोग चिरौंजी की पट्टी
करते हैं। यह हलकी और पाचक होती है। इसके
विधि यह है कि पहले कड़ाही को आग पर चढ़ाकर
थोड़ा-सा घी डाल देते हैं और उसके पक जाने पर
साफ़ किये हुए चिरौंजी के दाने छोड़ देते हैं, उसके
देर में उसमें शकर छोड़कर पानी का छींटा देते हैं।
उसे उतार कर थाल में फैला देते हैं उसके
उसकी पट्टी तैयार कर लेते हैं।

चिरौंजी की बर्फी—चिरौंजी का
दाने आधा पाव लेना चाहिए और उसे कड़ाही में
भून लेना चाहिए। इसके पश्चात् आधा सेर
चाशनी करके उसी में डाल देना चाहिए और
चाहिए।

पकवान, मिठाइयाँ और खाने के लिए जो लड्डू आदि
ऐकारक चीजें बनाई जाती हैं, उनमें सर्वत्र चिरौंजी का
रयोग होता है। मेवे की खीर में अन्यान्य मेवों के साथ,
रौंजी को भी डालते हैं। ये चीजें बड़ी रुचिकारक और
ादिष्ट होती हैं। इनके खाने से शरीर पुष्ट होता है और
ल बढ़ता है।

महुआ

महुआ के पेड़ हमारे देश में सभी जगह होते हैं परन्तु
ुजरात में इसके वृक्ष बहुत पाये जाते हैं। इसका पेड़, इमली
पेड़ की तरह बहुत बड़ा होता है।

इसके फल दो प्रकार के होते हैं, एक तो उसका फल
हुआ होता है और दूसरा जो बादाम की भाँति, किन्तु उससे
छ बड़ा होता है, उसको गुल्लू कहते हैं। महुआ खाने के
ाम में आता है और गुल्लू का तेल निकाला जाता है।

महुआ पककर जब पेड़ से गिरता है तो उसका रंग
िलकुल सफेद होता है। उसे लोग बीनकर घरों में लाते हैं
ौर धूप में सुखा डालते हैं। सूख जाने पर उसका रंग लाल
था कुछ श्याम मिश्रित लाल हो जाता है। यह बहुत गर्म होता
, इसलिए देहात में लोग इसको सुखाकर रख छोड़ते हैं और
ाड़े के दिनों में कितने ही तरह से उसको खाने के काम में
ाते हैं।

गुल्लू का तेल भी देहातों में बहुत काम में लाया जाता है।
सके ऊपर का छिलका बड़ा सख्त और पतला होता है।

उसको फोड़कर लोग छिलका निकाल डालते हैं और उ
भीतर की कोमल गुल्लू धूप में सुखा लेते हैं। उसके
सरसों और तिलों की भाँति, सूखे गुल्लुओं को कोल्हू में
कर लोग उनका तेल तैयार कर लेते हैं। यह तेल भी
गर्म होता है, इसलिए ग़रीब लोग उसको जाड़े के दि
खाने के काम में लाते हैं। जो बहुत ग़रीब नहीं होते, वे
तेल को जलाने के काम में लाते हैं। जाड़े के दिनों में यह
घी की भाँति जम जाता है, उस अवस्था में यह तेल ज़रा
कुछ पीलापन लिए हुए मटमैला होता है।

महुआ, भिन्न-भिन्न तरीके से खाने के काम में तो
ही है, उससे शराब भी बनाई जाती है। पहले इसकी
लोग अपने घरों में तैयार कर लिया करते थे, परन्तु अब
समय से इसके प्रतिकूल क़ानून बन आने के कारण,
शराब बनाना मना हो गया है।

गुण—

महुआ—बहुत गर्म और स्निग्ध होते हैं। खाने
अत्यधिक मीठे होते हैं। मल को बाँधते हैं, बल को बढ़ाते
धातु को उत्पन्न करते हैं। वायु और पित्त का नाश करते
खाँसी, क्षत-क्षय तथा राजयक्ष्मा के रोग में फायदा करते हैं

गुल्लू का तेल—इसकी प्रकृति उष्ण होती है। यह खा
शक्ति - वर्द्धक होता है। शुक्र को उत्पन्न करता है। शरीर
कान्ति बढ़ाता है। पुष्टकारक होता है। वायु-जनित रोगों
शान्त करता है। स्वाद में मधुर तथा कुछ कषैला होता
कफ़, पित्त-ज्वर का नाश करता है। कहीं-कहीं पर इस
लोग महुआ का तेल कहते हैं।

उपयोग--

साँप के काटने पर—महुए के बीज अर्थात् गुल्लू को पानी घिसकर अंजन करना चाहिए। इससे विष को शान्ति ती है।

कंठ सर्प पर—महुए के बीज अर्थात् गुल्लू को पानी में सकर पिलाना चाहिए। तुरन्त अपना प्रभाव दिखाता है।

वायु के कारण दर्द पर—शरीर में कहीं पर भी सर्दी-ी के कारण पीड़ा होने पर या किसी गाँठ या जोड़ में दर्द पर गुल्लू के तेल की मालिश करने पर लाभ होता है। की मालिश करके महुए के पत्ते गर्म करके ऊपर से बाँध से और शीघ्र फ़ायदा होता है।

सर्दी के प्रकोप पर—जाड़े के दिनों में सर्दी के लग जाने या शरीर में, कहीं पर शीत का प्रकोप होने पर लोग आ पकाकर खाते हैं, उससे लाभ होता है।

कटहल

कटहल का पेड़ साधारणतया बड़ा होता है। पाँच वर्ष द कटहल के पेड़ में फल आने लगते हैं। भारतवर्ष में यह र पाया जाता है किन्तु पर्वतीय स्थानों में इसकी पैदावार कम होती है। कटहल का फल बहुत बड़ा होता है, यदि कटहल का पेड़ भलीभाँति फला तो उसमें लगभग पाँच कटहल तक एक ही फ़सल में होते हैं।

कटहल का फल कई प्रकार से खाया जाता है, इसका कच्चा तरकारी के काम में आता है इसकी तरकारी लोग बड़ी

रुचि से बनाते हैं और खाने में वह स्वादिष्ट होती है। कच्चा होने पर जब पक जाता है तो वह भीतर होता है। परन्तु जब पक जाता है, तो उसका रंग जाता है। पके कटहल की अपेक्षा कच्चे कटहल अधिक अच्छी होती है।

पके कटहल का खाली गूदा लोग खाते हैं। जहाँ पर हल अधिक पैदा होता है, वहाँ पर लोग, रोटी-दाल की इसको खाकर तृप्ति का अनुभव करते हैं। पक जाने पर तरकारी के काम का तो नहीं रहता परन्तु उसके पके हुए बड़े बीज की तरकारी बनाई जाती है, ये बीजे बड़े स्वा और सोंधे होते हैं। बीजों को आग में पकाते समय, छेद कर दिये जाते हैं, नहीं तो वे बड़े ज़ोर से फूटा

बहुत से लोग कटहल के बीजों में मिट्टी छोड़ते हैं और वर्षा के दिनों में उनको आग में खाया करते हैं। कोंकण की ओर बहुत से आदमी, कुछ तक कटहल पर ही निर्वाह करते हैं। वे लोग अनाज की कटहल के गूदे को धूप में सुखा लेते हैं और बहुत-सा अपने घरों में भर लेते हैं। इसके बाद जब उनको, उसे होता है, तो उसे निकालकर काम में लाते हैं। अनाज को साफ करके पीस लेते हैं और उसके बाद रोटी बनाते हैं, उसी प्रकार सूखे कटहल के गूदे को भी पीस डालते हैं और फिर उसके आटे की रोटी, पूड़ी या जो उनके जी में आता है, बनाते हैं। कटहल के गूदे की लोग खीर और कढ़ी भी बनाते हैं। और ग़रीब-अमीर लोग उसको खाते हैं। कटहल का छिलका कोई करता। अपने यहाँ तो लोग प्रायः उसको फेंक देते हैं

हाँ पर यह पैदा होता है, वहाँ लोग इसको बहुत उपयोगी
मझते हैं और इसके छिलकों को जानवरों को खिलाते हैं
ससे, जानवर पुष्ट होते हैं। कटहल खाने के पश्चात् पान
हीं खाना चाहिए। लोगों का कहना है कि पान खाने से
ादमी का पेट फूल जाता है।

कटहल की दो जातियाँ होती हैं। एक जाति तो यह है
ासके गुणों का उल्लेख ऊपर किया गया है और दूसरी
ाति का जो कटहल होता है, वह खाने के काम में नहीं
ाता। उसके पेड़ की लकड़ी बड़ी मज़बूत होती है।

गुण—

कच्चा कटहल—यह मल को बाँधता है, यह खाने में स्वा-
दृ होता है। त्रिदोष उत्पन्न करता है। रक्त को बढ़ाता है।
ृति में भारी कषेला और बादी होता है। कफ़ बढ़ाता है।
ाह और पित्त का नाश करता है।

पक्का कटहल—कुछ शीतल होता है, खाने से तृप्ति होती
। यह धातु को बढ़ाता है। स्निग्ध और स्वादिष्ट होता है।
रीर में मांस बढ़ाता है, कफ़ उत्पन्न करता है। वीर्य की वृद्धि
रता है शरीर को पुष्ट करता है। वात तथा रक्त पित्त का
ाश करता है। इसका बीज खाने में मधुर होता है किन्तु
ड़ और विष्टम्भक होता है।

पक्का कटहल—मधुर और पुष्टकारक होता है। इसकी
कृति भारी और शीतल होती है। वह वात और पित्त का नाश
रता है कफ़ को बढ़ाता तथा वीर्य और बल की वृद्धि
रता है शरीर को पुष्ट करता है और आत्मा को तृप्ति करता
। खाने में स्वादिष्ठ तथा मांसवर्द्धक होता है।

कच्चा कटहल—वादी, कपैला और भारी होता है। ... उत्पन्न करता है किन्तु बल को बढ़ाता है। ... करता है।

कटहल के बीजों की मींगी—वीर्य को बढ़ाती है, ... का नाश करती है। कफ़ को दमन करती है और शरीर ... पालती है। खाने में स्वादिष्ठ और रुचिकारक होती है।

हरा और पुराना कटहल—मल को ... खाने में मधुर और बलकारक होता है। प्रकृति में दोषज और वातल होता है।

कटहल का पानी—पुष्प किन्तु मधुर होता है, त्रिदोष नाश करता है।

उपयोग—

कटहल की तरकारी—इसकी तरकारी बड़ी स्वादिष्ट लाभकारी होती है, उसके बनाने का तरीका यह है कि ... के ऊपर का छिलका छीलकर निकाल डालना चाहिए। फिर उसके गूदे को काटकर छोटे-छोटे टुकड़े कर ... चाहिए। उसके पश्चात् उसको उबाल डालना चाहिए। किसी बटलोही में घी डालकर हींग डालना चाहिए, महक मालूम होने पर गर्म मसाला डालकर उसे भून ... चाहिए और उसके पश्चात् उबले हुए कटहल को ... कर छौंक देना चाहिए। उसके घी में भुनजाने पर थोड़ा-सा पानी छोड़ देना चाहिए, अन्त में पक जाने ... लेना चाहिए।

कटहल का अचार—कटहल का छिलका निकाल कर ... बड़े-बड़े टुकड़े कर लेना चाहिए और फिर उसको ...

त लेना चाहिए। फिर उसको ठंडा करके हलदी, धनियां, मिर्चा, और नमक पीस कर उसमें गवड़ देते हैं। उसके उसको एक मिट्टी के अच्छे वर्तन में भरकर उसमें कड़ुवा इतना डाल देते हैं कि कटहल के टुकड़े बिल्कुल डूब जाते इसके बाद उसको नित्य धूप में रखकर गर्मी पहुँचाई जाती जितने ही अधिक दिन बाद उसको खाना आरम्भ किया ा है, उतना ही वह स्वादिष्ट बनता है। यह अचार बहुत ों तक रहता है।

कटहल का अचार साधारणतया एक वर्ष तक चलता है तु कुछ लोग और भी अधिक समय तक उसका प्रयोग ते हैं। कटहल के गूदे को कुछ लोग उबाल कर और कुछ ा बिना उबाले ही उसको मसाले में मिलाकर तेल से डुबो हैं। दोनों में अंतर यह होता है कि जो कटहल उबाला नहीं ा, उसका अचार बहुत दिनों में खाने के योग्य गलकर ार होता है। पीले कटहल का अचार सब से बढ़िया ता है।

केला

भारतवर्ष में जितने भी फल होते हैं, उनमें आम सर्वोत्तम ना जाता है और आम के बाद लोग केला को स्थान देते हैं। ला प्रायः सभी जगहों में पाया जाता है। लेकिन गोमांतक, ाटक और बसई प्रान्त में केले बहुत पैदा होते हैं। इसकी ाभग बीस जातियाँ होती हैं। जंगलों में जो केले के वृक्ष ाने आप उगते हैं, उनको जंगली केला कहा जाता है। ा और पक्का दोनों तरह से केला खाया जाता है। कच्चे

केले की तरकारी बनती है। और पके हुए केले खाए जाते हैं। इसके सिवा पके केलों का रायता भी बनाया जाता है। ये खाने में बड़े स्वादिष्ट होते हैं। इनके खाने से शरीर पुष्ट होता है। भूख शान्त होती है।

जहाँ पर केला बहुत होता है, वहाँ पर लोग इसको सुखा बहुत-सा केला जमा कर लेते हैं और उसको अनाज की पर काम में लाते हैं। सूखे हुए केलों को पीसकर आटा लेते हैं। उसकी रोटी तथा अन्यान्य चीजें बनाते हैं।

इस प्रकार जो केला सुखाया जाता है, वह कच्चा कर ही सुखा लिया जाता है। इसमें शरीर के लिए शक्ति होती है। और वह प्रायः गोल आलू के समान अंश में होता है। केले को खाकर संतोषपूर्वक कोई भी अपने दिन काट सकता है।

केला की भिन्न-भिन्न जातियाँ होती हैं और उनमें भिन्न परिणाम में खाद्य अंश होता है। बाज़ार में जो बिकते हुए देखे जाते हैं, उनमें चिनिया केले और चटगाँ केले बहुत होते हैं। इनमें चटगाँव का केला बहुत प्रसिद्ध उसमें खाद्य अंश दूसरों की अपेक्षा अधिक होता है। लोग उसी को पसन्द करते हैं केले के फलों में प्रति सत्तर से लेकर अस्सी भाग तक खाद्य अंश होता है।

केला जब सब्ज़ रंग का होता है उसी समय लोग काटकर और सुखाकर अपने घरों में भरने लगते हैं। कच्चा केला काटना और सुखाना अच्छा नहीं होता। क्यों कि अधिक कच्चा होने के कारण सुखाने पर उसमें

ले के फलों में काले रंग का कुछ सख़्त हिस्सा होता है।
केले में यह काला हिस्सा बना रहता है उसको देख
ह मालूम हो जाता है कि केला अच्छी तरह पका नहीं
था बहुत कच्ची अवस्था में ही काटा गया है।

तो लोग केला को अनाज की भाँति काम में लाते हैं, वे
केलों का छिलका निकालकर उसके भीतर के हिस्से को
-टुकड़े कर डालते हैं और उसके बाद उसको धूप में
सुखाते हैं। जब कभी उनको आवश्यकता होती है तो
को पीसकर और छानकर आटा तैयार कर लेते हैं।

कच्चे केले को कई प्रकार से लोग खाते हैं, उसकी तरकारी
पुष्टकारक और आमाशय के लिए अत्यन्त उपयोगी
है। कच्चे केले को टुकड़े-टुकड़े करके जल में पहले धोते
र उसके बाद उसको आग में भूनते हैं। उनके पक जाने
उसका छिलका निकालकर फेंक दिया जाता है और भीतर
खाने वाला हिस्सा मट्ठा, दही, शक्कर और नमक आदि
ने रुचि के अनुसार भिन्न-भिन्न चीज़ों के साथ खाया जाता
यदि इसके साथ ज़ीरा को भूनकर मिला दिया जाय तो
और भी उपयोगी और लाभदायक हो जाता है।

पके हुए केले खाने में बड़े स्वादिष्ट और मीठे होते हैं।
-बड़े सभी लोग बड़ी रुचि के साथ उसको खाते हैं। केले
प्रकृति भारी होती है और प्रायः कुछ कठिनता से हज़म होता
इसलिए जिनकी पाचन-शक्ति कुछ निर्बल होती है, उनके
ए उसका व्यवहार करना प्रायः हानिकारक हो जाता है।
नका स्वास्थ्य अच्छा है और पाचन-शक्ति निर्बल नहीं है
के लिए केला अत्यन्त उपकारी और सुखाद्य है।

पके हुए केले से काफ़ी तैयार की जाती है और ... लिए पहले केले को सुखाया जाता है और उसके बाद ... यह तैयार की जाती है। इसका स्वाद बड़ा अच्छा ... और यह काफ़ी की भाँति हानिकारक नहीं होती है।

पके केले को खाने के पहिले कुछ लोग उसमें नींबू ... मिला लेते हैं जिससे उसका खाद्य अंश और भी अधिक ... योगी हो जाता है। एवम् उसका अपाचन-अंश परिवर्तित ... जाता है। इसको निर्बल मनुष्य भी बड़ी आसानी से ... सकता है।

गुण—

केले की साधारण फली—यह मधुर और वीर्य को ... वाली होती है। कुछ कषेला और शीतल होती है। यह रक्त ... का नाश करती है। हृदय को फ़ायदा पहुँचाती है। ... रुचिपूर्ण होती है। कफ को उत्पन्न करती है और पचने ... भारी होता है।

केले की कोमल फली—इसकी प्रकृति शीतल और ... होती है। कषेली होने के साथ-साथ रुचिकारक होती ... अम्ल और पित्त का नाश करती है।

केले की मध्यम अवस्था का फल—यह प्यास को ... करता है। रक्त-पित्त को शान्त करता है। नेत्र-रोग को ... पहुँचाता है और प्रमेह, रक्तातिसार तथा ज्वर को दूर ... है। इसकी प्रकृति ग्राही, कड़वी कषेली और रूखी होती है।

कच्चा केला—मल को रोकता है। यह शीतल और ... होता है। वात और कफ उत्पन्न करता है। इसके खाने से ... की वृद्धि होती है। शरीर पुष्ट होता है।

पक्का केला—कपेला और मधुर होता है। बल को बढ़ाता रक्त-पित्त का नाश करता है। मन्दाग्नि पैदा करता है। के खाने से वीर्य की वृद्धि होती है, प्यास की शान्ति होती शरीर में कान्ति पैदा होती है, कफ़ का नाश करता है, न्तु कठिनता से हज़म होता है।

पक्का केला—खाने में मधुर और रुचिकारक होता है। न का नाश करता है। यह कोमल और शीतल होता है। ।, दाह और रक्त-पित्त को शान्त करता है। प्रदर के रोग में यदा करता है। पथरी के रोग को दूर करता है। बल को ाता है। भोजन से पहले खा लेने से हानि करता है।

पक्का केला—बल को बढ़ाता है। कपेला और मधुर होता वीर्य की वृद्धि करता है। इससे शरीर की कान्ति बढ़ती खाने में स्वादिष्ट होता है। शरीर में मांस बढ़ता है। कफ़ उत्पन्न करता है। पित्त-रक्त को दूर करता है। प्रमेह के में फ़ायदा करता है। क्षुधा और नेत्र के रोगों को दूर ता है।

उपयोग—

पागल कुत्ते के काटने पर—जंगल के पके हुए केलों के खाने और उनको पीसकर काटे हुए पर लगाने से बड़ा होता है। कुत्ते के विष को दूर करने के लिए इन चीज़ों ड़ा गुन होता है।

प्रदर और धातु के रोग में—एक पका हुआ केला, आधा ा घी के साथ, सुबह-शाम आठ दिनों तक लगातार खाना हिए और यदि इससे सर्दी मालूम हो तो उसमें चार-पाँच शहद की भी मिला लेनी चाहिए।

होती है। पिश्ता रक्त को शुद्ध करता है। स्वाद को बढ़ाता है। पित्त को उत्पन्न करता है। कुछ दस्तावर होता है। कफ़ का नाश करता है। वात, गुल्म तथा त्रिदोष को दूर करता है।

उपयोग—

पुष्टई के लिए—शरीर को पुष्ट करने के लिए पिश्ता बड़ा उपयोगी होता है। गर्म होने के कारण इसका उपयोग जाड़े के दिनों में अधिक किया जाता है। पिश्ता जहाँ पर नहीं होता, वहाँ पर यह बहुत तेज़ बिकता है। अमीर लोग सर्दी के लिए इसके द्वारा तरह-तरह की चीजें बनवाकर खाते हैं।

शरीफ़ा

शरीफ़ा के वृक्ष भारतवर्ष में सर्वत्र पाये जाते हैं। इसको हिन्दी बोलने वाले सीताफल या सरीफ़ा कहते हैं। इसके पेड़ में चार-पाँच वर्ष के बाद फल आने लगते हैं।

गुण—

शरीफ़ा—इसके खाने से तृप्ति होती है, रक्त बढ़ता है। खाने में स्वादिष्ट होता है। प्रकृति में अत्यन्त शीतल और हृदय के लिए हितकारी है। बल की वृद्धि करता है, माँस को बढ़ाता है। दाह को शान्त करता है। रक्त-पित्त और वात को शान्त करता है।

शरीफ़ा—यह मधुर और शीतल होता है, हृदय की बल-वृद्धि करता है। बल को बढ़ाता है और कफ़ उत्पन्न करता है। खाने में स्वादिष्ट तथा पुष्टकारक होता है। यह पित्त का नाश करता है।

उपयोग—

जलन को शान्त करने के लिए—शरीर की जलन तथा दाह होने पर शरीफ़ा को रात में ओस में रख देना चाहिए और सवेरे उठकर उसे खा लेना चाहिए। इससे जलन और दाह शान्त हो जाती है।

सिर में जुएँ पड़ जाने पर—शरीफ़े के बीजों को बारीक पीसकर सिर में लगाना चाहिए और रात को सोते समय एक मोटा कपड़ा सिर में कसकर बाँधकर सोने से, सिर के जुएँ सब मर जाते हैं। इसका प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह दवा आँखों में न लगने पावे, क्योंकि यह आँखों को नुकसान पहुँचाती है।

शरीफ़ा अधिकतर खाने के ही काम में आता है। उससे स्वास्थ्य और बल की वृद्धि होती है, परन्तु इसके अतिरिक्त उसका और कोई अधिक उपयोग नहीं होता।

अनन्नास

अनन्नास का पेड़ प्रायः खेतों की मेड़ों तथा सड़कों के किनारे पैदा होता है। इसके पेड़ में यह बात होती है कि फल इसके बीच हिस्से में लगते हैं अनन्नास का रंग कुछ पीला और लाल रंग का होता है।

अनन्नास खाने में बहुत स्वादिष्ट होता है, खाली खाने के सिवा इसका मुरब्बा भी बनाया जाता है। यह खाने में अत्यन्त रुचिकारक और लाभ पहुँचाने वाला होता है। अनन्नास के बीच का हिस्सा खाने के योग्य नहीं होता। इसलिये इसको खाते समय, निकालकर फेंक देना चाहिए और यदि भूल से,

कभी कोई उसे खा जाय, तो उसके बाद, तुरन्त प्याज दही और शक्कर मिलाकर खा लेना चाहिए। उपवास के दिन अनन्नास का खाना मना है।

जिन स्त्रियों के पेट में गर्भ होता है, उनको अनन्नास कभी न खाना चाहिए, जिनको यह बात मालूम नहीं होती और धोखे से इसको खा लेती हैं, उनको कभी-कभी इससे बड़ी क्षति पहुँचती है। इसलिए उनको यह जानना और इसका परहेज़ करना बहुत आवश्यक है। अन्यथा हानि ही होती है।

गुण—

कच्चा अनन्नास—खाने में रुचिकारक होता है। हृदय को लाभ पहुँचाता है। यह भारी कफ़-पित्त उत्पन्न करने वाला होता है। इसके खाने से श्रम और कृमि का नाश होता है।

पक्का अनन्नास—खाने में स्वादिष्ट किन्तु पित्त पैदा करता है। यह रस-विकार तथा आतप-विकार को दूर करता है

उपयोग—

अजीर्ण होने पर—पहले अनन्नास को लेकर उसमें फाँकें कर देनी चाहिए। उसके बाद, काली मिर्च और सेंधा नमक पीसकर उसमें छिड़क देना चाहिए और फिर आग पर थोड़ा सा भुल-भुलाकर उसे खा लेना चाहिए। इससे अजीर्ण तुरन्त दूर होता है।

कृमि पर—अनन्नास खाने से बड़ा लाभ होता है और इससे उसका नाश भी होता है। कृमि के लिए यह बड़ा उपयोगी है।

पेट में बाल चला जाने पर—धोखे में जब कोई बाल खा जाता है अथवा वह पेट में चला जाता है तो उससे बड़ी

तकलीफ़ होती है। ऐसी अवस्था में अनन्नास खाने से फायदा होता है और उसके खा जाने से जो पीड़ा उत्पन्न होती है, वह अच्छी हो जाती है।

फालसा

फालसे के पेड़ बगीचों के साथ हुआ करते हैं। फालसा, साधारणतया सभी जगह होता है किन्तु उत्तरी हिन्दुस्तान में इसकी पैदावार अधिक होती है इसका फल पीपल के फल के समान बहुत छोटा होता है। फालसा खाने में मीठा होता है।

फालसा खाने में स्वादिष्ट होता है, कच्चा और पक्का दोनों तरह से फालसा काम में लाया जाता है। इसकी प्रकृति शीतल होती है, इसलिए इसका शर्बत बनाकर गर्मी के दिनों में पिया जाता है। ग्रीष्मकाल में जहाँ पर अधिक गर्मी पड़ती है, वहाँ पर फालसे का शर्बत पीने की बहुत रिवाज पाई जाती है और गर्मी को शान्त करने के लिए, फालसे का शर्बत बड़ा लाभकारी तथा शरीर को ठंढा रखने वाला होता है।

गुण—

कच्चा फालसा—कड़ुवा और खट्टा होता है, कफ़ का नाश करता है, वात को मिटाता है और पित्त उत्पन्न करता है। खाने में कषेला किन्तु हलका होता है। उसकी प्रकृति खट्टी होने के साथ-साथ कुछ उष्ण होती है।

पक्का फालसा—खाने में मधुर और रुचिपूर्ण होता है। पित्त का नाश करता है, प्रकृति में शीतल और पुष्टकारक होता है। हृदय को लाभ पहुँचाता है। तृषा, पित्त और दाह को

मिटाता है। रुधिर के विकारों को शुद्ध करता है। ज्वर, क्षय और वात का नाश करता है। इसके खाने से वीर्य की वृद्धि होती है। पचने में मधुर होता है।

उपयोग—

पित्त के विकार और हृदय के रोगों पर—पके हुए फालसों का रस निकालकर थोड़े-से पानी में मिला लेना चाहिए और उसमें थोड़ी-सी सोंठ पीसकर, शक्कर और सोंठ को उस पानी में मिले हुए रस के साथ मिलाकर पिलाना चाहिए। इससे लाभ होता है।

जलन को शान्त करने के लिए—पके हुए फालसों को शक्कर के साथ खाने से तुरन्त लाभ होता है और शरीर की जलन शान्त हो जाती है।

फालसे का मुरब्बा—पहले पानी को गर्म करके आधा सेर पके फालसों को उसमें भिगो देना चाहिये। जब फालसे गल जायँ तो उनको ठंढे पानी से धो डालना चाहिए। फिर एक छटाक बूरा और पाव-भर पानी उसमें डालकर फालसों को फिर उबालना चाहिए। एक उबाल आ जाने पर उनको पानी से निकालकर शक्कर की चाशनी में छोड़ देना चाहिए और ऊपर से केवड़ा डाल देना चाहिए।

फालसे का शर्बत—फालसों को लेकर, पहले उन्हें मसलकर उनका रस निकाल लेना चाहिये। फिर उस रस में शक्कर छोड़कर आग में चढ़ा देना चाहिये और उनकी चाशनी बना लेना चाहिए। यही चाशनी फालसे की शर्बत होगी। यह शर्बत शरीर को ठंढक पहुँचाने के लिए बड़ा उपयोगी होता है और कितनी ही बीमारियों में काम आता है। सुजाक में

यह शर्बत फायदा करता है। पेशाब की जलन को मिटाता है। दिल और दिमाग़ को ताक़त पहुँचाता है और तर रखता है।

कमरख

कमरख के पेड़ तो साधारणतया सभी स्थानों में होते हैं। कोंकण प्रान्त में कमरख बहुत होता है। इसके पेड़ में विशेषता है कि वह सदा हरा-भरा रहता है और हमेशा उसमें फल लगते रहते हैं। उसमें फल आने के लिए कोई एक मौसिम नहीं होता।

कमरख खाने के काम में आता है, उसका स्वाद खट्टा होता है। कच्चा होने पर इसका रंग बिलकुल हरा होता है परन्तु पक जाने पर उसमें पर कुछ पीलापन आ जाता है। पके कमरख यों ही खाये जाते हैं परन्तु खट्टे होने के कारण ये अधिक नहीं खाये जा सकते। कमरख के मुरब्बे, अचार और चटनी आदि खाने की कितनी ही चीज़ें बनाई जाती हैं।

कच्चा कमरख बहुत खट्टा होता है। पक जाने पर उसकी खटाई में वह तीक्ष्णता नहीं रहती। पका हुआ कमरख ज़ीरा भूनकर तथा काली मिर्च के साथ पीसकर और शकर मिला कर खाने से बड़ा स्वादिष्ठ हो जाता है और किसी प्रकार की विशेष हानि भी नहीं करता। कमरख पकने पर बड़ा सुन्दर हो जाता है और उसके खाने से कफ़ का नाश होता है।

गुण

कच्चे कमरख—खट्टे किन्तु कुछ उष्ण होते हैं, वात का नाश करते हैं और पित्त उत्पन्न करते हैं।

पके हुए कमरख—खाने में मधुर और खट्टे होते हैं। इनके खाने से बल उत्पन्न होता है। शरीर पुष्ट होता है और रुचि बढ़ती है।

उपयोग

कमरख का मुरब्बा—एक सेर कमरख को लेकर बाँस की पतली तीलियों से छेद डालना चाहिये और उसके बाद उनको चूने के पानी में डाल देना चाहिये। कुछ समय के पश्चात् उनको निकाल कर दूसरे पानी में आग में चढ़ा कर जोश देना चाहिये। इसके बाद उतार कर शक्कर की चाशनी बना कर, उसी में कमरख डाल देने चाहिये। जब चाशनी गाढ़ी हो जाय तो उनको उतार लेना चाहिये। यह मुरब्बा खाने में बड़ा स्वादिष्ठ और रुचिकारक होता है।

कमरख का अचार—कमरख लेकर उनके टुकड़े-टुकड़े कर डालना चाहिये। इसके बाद, नमक, मिर्च, ज़ीरा, हल्दी, काली मिर्च, इलायची और लौंग पीसकर एक मिट्टी के बरतन में कमरख डाल देना चाहिये और उन पर मसाला पिसा हुआ छोड़ कर मिला देना चाहिये। इसके बाद उस बरतन में तेल छोड़ कर रख देना चाहिए। कमरख के टुकड़ों में मसाला और तेल प्रवेश हो जानेपर वे खाने के योग्य हो जाते हैं। कुछ लोग बिना तेल के भी कमरख का अचार बनाते हैं।

कमरख की चटनी—कमरख में काली मिर्च, ज़ीरा, पुदीना, लौंग, इलायची और काला नमक मिला कर पीस डालते हैं। उसके पीस चुकने पर किसी पत्थर की कटोरी आदि में उठा कर उसमें थोड़ी-सी शक्कर मिला देते हैं। इस प्रकार यह खट-मिट्ठी चटनी बड़ी स्वादिष्ठ बन जाती है।

कमरख की अनेक प्रकार की चीज़ें खाने की बनाई जाती हैं, उसका मुरब्बा, अचार, चटनी अथवा खट्टी खटाई, मीठी खटाई, आदि बनाई जाती हैं। ये चीज़ें खाने में बड़ी रुचिकर, स्वादिष्ठ तथा गुण वाली होती हैं। इनसे भूख बढ़ती है, खाने में स्वाद आ जाता है और भोजन में रुचि उत्पन्न होती है।

अञ्जीर

अंजीर गर्म देशों में अधिक पैदा होता है। तुर्किस्तान, अरब, ईरान ग्रीस और अफ्रीका के दक्षिण भाग में अंजीर बहुत पैदा होता है। हमारे यहाँ बाजारों में जो अंजीर मिलता है, वह प्रायः अरब से आता है।

अंजीर खाने में अधिक स्वादिष्ठ नहीं होता, किन्तु लाभ के लिए बड़ा उपयोगी होता है। कच्चे अंजीर की तरकारी बनाई जाती है और पक्के अञ्जीर का मुरब्बा बनता है। शरीर में रक्त बढ़ने के लिए बड़ा उत्तम मेवा है। जो लोग शरीर से निर्बल होते हैं अथवा किसी बीमारी अथवा किसी संयोग के कारण शारीरिक शक्ति में निर्बल हो जाते हैं, वे लोग नित्य प्रातःकाल इसका सेवन करते हैं।

गुण—

अञ्जीर—अत्यन्त शीतल और तत्काल रक्त-पित्त का नाश करता है। पित्त की समस्त बीमारियों में तथा शिर की पीड़ा में बहुत लाभ पहुँचाता है। नाक से गिरते हुये रुधिर को तुरंत बन्द कर देता है।

अञ्जीर—भारी और शीतल होता है, खाने में मधुर तथा वात का नाश करता है। रक्त-पित्त का दमन करता है। रुचि को बढ़ाता है। स्वाद को पैदा करता है। पाचक होता है किन्तु श्लेष्म तथा आमवात उत्पन्न करता है।

उपयोग—

शरीर से गर्मी के निकालने तथा रक्त की वृद्धि के लिये—रात के समय पके हुए अञ्जीरों को छीलकर दो प्यालियों में बराबर-बराबर रख दे और दोनों प्यालियों में बराबर-बराबर शक्कर डाल दे। इनको ओस में रखा रहने दे और प्रातःकाल उनका सेवन करे, ऐसा करने से पन्द्रह दिनों में ही बहुत लाभ होता है।

पुष्टि के लिये—सूखे हुये अञ्जीर के टुकड़ों को और छिले हुए बादामों को आग चढ़ाकर उबाल लेना चाहिए। उसके पश्चात् उसको सुखा कर दानेदार शक्कर, अधपिसी इलायची, केशर, चिरौंजी, पिश्ता और बादाम बराबर-बराबर लेकर आठ दिनों तक गाय के घी में डाल रखना चाहिये। इसके बाद नित्य प्रातःकाल दो तोला तक का सेवन करे। छोटे बालकों की निर्बलता दूर करने के लिए यह बड़ी उपयोगी चीज़ है।

गले और जीभ की सूजन पर—सूखे हुए अञ्जीर लेकर उन का पानी के साथ पहले काढ़ा बना लेना चाहिए उसके बाद उसका लेप करने से गले और जीभ की सूजन का नाश होता है।

पुल्टिस—ताज़े अञ्जीर कूट कर और पानी के साथ उनको पीस लेना चाहिये, इसके बाद उसको कुछ गर्म करके फोड़ा आदि में बाँधने पर बहुत जल्दी आराम होता है।

———

जामुन

जामुन का वृक्ष बहुत बड़ा होता है। जिन बगीचों में आम के पेड़ होते हैं, वहाँ जामुन के वृक्ष भी होते हैं। जामुन और आम लगभग एक ही मौसम में फलते हैं और बरसात शुरू होने पर दोनों एक ही साथ पकते भी हैं।

जामुन जब कच्ची होती है, तो उसका रंग हरा होता है, और वह जब थोड़ी बहुत पकने लगती है, तो उसका रंग लाल हो जाता है। इसके बाद जितनी ही वह पकती जाती है, उतना ही उसमें श्याम वर्ण आता जाता है। बिलकुल पक जाने पर जामुन कोयले की भाँति काली हो जाती है।

कच्ची जामुन खाने के काम में नहीं आती। जब वह थोड़ी-थोड़ी पकने लगती है और उसका वर्ण लाल हो जाता है, उसी समय से लोग उसका खाना आरम्भ कर देते हैं। परन्तु इस अवस्था में जामुन के खाने का कोई अधिक अच्छा स्वाद नहीं होता। उसमें उसका गूदा तो खाने के लायक मुलायम हो जा जाता है, किन्तु वह खाने में बहुत खट्टी होती है। पूर्ण रूप से पक जाने पर जामुन खाने में बड़ी स्वादिष्ठ और मधुर मालूम होती है।

पकी हुई जामुन खाने के काम में आती है। जामुन की फसल में छोटे और बड़े सभी लोग उसे खाते हैं। निर्बल और सबल अपनी इच्छानुसार उसका प्रयोग करते हैं। जामुन का यह गुण है कि वह किसी को नुक़सान नहीं पहुँचाती। जामुन को नमक और काली मिर्च के साथ खाने से उसका स्वाद बढ़ जाता है और इसके अतिरिक्त जामुन का पौष्टिक गुण भी अधिक हो जाता।

गुण–

जामुन का फल—यह खाने में मधुर और शीतल होता है। रुचि को बढ़ाता है। मल को रोकता है। वात को बढ़ाता है। कफ़ और पित्त का नाश करता है। यह भारी और कषेला होता है। खाने में अत्यन्त स्वादिष्ठ होता है।

बड़ी और अच्छी जामुन—खाने में मधुर और कुछ गरम होती है। इससे गले की आवाज़ शुद्ध और तेज़ होती है। खाने में रुचि कारक होती है। मल का स्तम्भ करती है। खाँसी और श्वास को फ़ायदा करती है। श्रम, अतिसार और कफ़ को मिटाती है।

छोटी जामुन—यह हृदय को लाभ पहुँचाती है। खाने में मधुर होती है। वीर्य को बढ़ाती है। शरीर को पुष्ट करती है। हृदय के रोगों और कंठ की बीमारियों को दूर करती है। मल को रोकती है। कफ और पित्त का नाश करती है।

उपयोग–

पित्त पर—एक तोला जामुन का रस लेकर उस में एक तोला गुड़ मिला देना चाहिये और उसको आग पर गरम होने के लिये रख देना चाहिये। जब उसमें भाफ उठे तो उसको मुँह में लेना चाहिये। भाफ के पेट में जाने से बड़ी जल्दी फायदा होता है और पित्त शान्त हो जाता है।

गर्भिणी के अतीसार पर—जामुन के फल खिलाने से बहुत लाभ होता है। जामुन की फसल न होने पर जामुन और आम की छाल के साथ धान और जौ का एक-एक तोला उस में डालकर काढ़ा बनाना चाहिये और उसके तैयार होने पर उसको खिलाना चाहिए। इससे तुरन्त फ़ायदा होता है।

प्रमेह पर—किसी प्रकार प्रमेह को बीमारी में और विशेष कर मधुमेह की अवस्था में लगातार पन्द्रह दिनों तक जामुन के फल खाने से बहुत लाभ होता है। यदि जामुन की फसल न हो तो सूखे हुए जामुन के फलों का दो तोला चूर्ण नित्य पानी के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

पेट में बाल या लोहे के अंश चले जाने पर—ऐसी अवस्था में बाल खाजाने वाले को बड़ा कष्ट होता है। किन्तु यदि जामुन खाने को मिल जायँ तो उसका कष्ट दूर हो जाता है।

जामुन का सिरका—यह पेट के अनेक रोगों को फ़ायदा पहुँचता है। विशेषकर गुल्म, अतिसार, विशूचिका के लिए यह बहुत उपयोगी चीज़ है। वैद्यक में इसको पेट की पीड़ा के लिए रामबाण लिखा है। इसके तैय्यार करने की विधि इस प्रकार है—

बहुत-सी पकी हुई जामुन लेकर उनको हाथ से ख़ूब मल डालना चाहिए और एक साफ़ तथा महीन कपड़ा लेकर किसी पत्थर के बर्तन में छान लेना चाहिए और इस छने हुए रस को साफ़ बोतल में भरकर रख देना चाहिए। कुछ दिनों में, जब इसमें खट्टापन आ जाता है तो सिरका तैयार हो जाता है।

पेट की पीड़ा में—पक्की जामुन के रस का शरबत बनाकर पीने से पेट की पीड़ा का तुरन्त नाश होता है।

लसोड़ा

कुछ लोग इसको लभेर भी कहते हैं। आम, इमली, और जामुन की भाँति लसोड़े का पेड़ भी बहुत बड़ा होता है। इसका फल बहुत छोटा होता है। लसोड़े की दो क़िस्में होती हैं। छोटा और बड़ा लसोड़ा। छोटे लसोड़े का पेड़ भी छोटा होता

है और फल भी। इसी भाँति बड़े लसोड़े का वृक्ष भी बड़ा होता है और फल भी।

उपयोग—

पुष्टई के लिए—लसोड़े का फल शरीर को पुष्ट करने के लिए बहुत प्रसिद्ध है। जो लोग उसके इस गुण की उपेक्षा करते हैं। वे गलती करते हैं। शरीर को पुष्ट और स्वस्थ बनाने के लिए निम्नलिखित उसका उपयोग किया जाता है—

लसोड़े के फलों को लेकर सुखा डालना चाहिए और सूख जाने पर उसको कूटकर चूर्ण कर लेना चाहिए। इसके बाद, शक्कर की चाशनी बनाकर इसको उसी में छोड़ देना चाहिए और लड्डू बाँध लेना चाहिए।

लसोड़े की तरकारी—कच्चे लसोड़े के फलों को लेकर पानी के साथ उबाल डालना चाहिए। फिर उनकी गुठली निकालकर गूदा अलग कर लेना चाहिये और बटलोही या कड़ाही में थोड़ा-सा घी या तेल छोड़कर, ज़रा-सा हींग या ज़ीरा उसमें छोड़ देना चाहिए, और उसकी महक उठने पर, उस लसोड़े को उसमें छोड़ देना चाहिए और साथ ही हल्दी, धनिया, नमक, मिर्च पीसकर उसमें छोड़ देना चाहिए और भून लेना चाहिए। बस तैयार हो जाने पर उसे उतार लेना चाहिए।

लसोड़े का अचार—लसोड़े के कच्चे फलों को एक सेर लेकर, चार सेर पानी में डालकर उनको धूप में रख देना चाहिए और दस-ग्यारह दिनों के बाद, जब उसमें खटाई आ जाय तब पानी में उसको धो डालना चाहिए इसके बाद, उसको किसी बर्तन में भरकर एक छटाक राई, दो तोला हल्दी, तीन छटाक नमक को पीसकर उसमें मिला देना

चाहिए। फिर उसमें तेल डालकर उसे ढककर रख देना चाहिए। पाँच-छः दिनों के बाद अचार तैयार हो जायगा। यह खाने में बड़ा स्वादिष्ठ और रुचिकारक होता है।

काजू

काजू अफ्रिका और हिन्दुस्तान में पैदा होता है। अपने देश में मलाबार, गोआंतक और कर्नाटक आदि स्थानों में इसके वृक्ष होते हैं। इसके पेड़ प्रायः जंगल और पहाड़ों में अधिक होते हैं। काजू दो प्रकार का होता है, काला और सफ़ेद।

काजू का फल कोमल होता है और उसके आगे उसमें बीज होते हैं। काजू खाने में स्वादिष्ठ होता है परन्तु अधिक खाने से हानि करता है। इसके सूखे फल खाये जाते हैं और उसके सूखे बीजों को शक्कर के पाग में मिलाकर मिठाइयाँ तथा अन्यान्य खाने की चीजें बनाई जाती हैं। इसके बीजों का तेल निकाला जाता है जो अन्यान्य उपयोग के सिवा नावों के नीचे के भाग में लगाया जाता है जिससे उसकी लकड़ी पर पानी का कोई प्रभाव नहीं होता।

गुण—

काजू—खाने में कषैला किन्तु मधुर होता है। कुछ हलका और गर्म होता है। धातु को बढ़ाता है। वात-कफ़ को दूर करता है। गुल्म तथा उदर के रोगों में फायदा करता है। ज्वर, कृमि तथा व्रण में उपयोगी है। मन्दाग्नि का नाश करता है। कुष्ठ और संग्रहणी, ववासीर आदि रोगों को अवश्य दूर करता है।

उपयोग—

पैर की कमज़ोरी में—काजू के बीजों को दूध के साथ पीस कर लेप करने से बड़ा लाभ होता है और कमज़ोरी दूर हो जाती है।

बद को फोड़ने लिए—काजू की कच्ची गरी और तीवर के फल को ठंडे पानी में पीसकर लेप करना चाहिए। इससे बद जल्दी से पक कर फूट जाती है।

सेव और नास्पाती

सेव और नास्पाती, दो मुख़्तलिफ फल हैं। ये फल, ठंडे देशों में अधिक पैदा होते हैं। अपने देश में, काश्मीर में, विलोचिस्तान में इसके वृक्ष पाये जाते हैं। परन्तु काश्मीर के सेव और नास्पाती अच्छी होती हैं।

गुण—

सेव—यह खाने में बड़ा मधुर होता है, बात और पित्त का नाश करता है। शरीर को पुष्ट करता है। कफ़ को बढ़ाता है। इसकी प्रकृति भारी और शीतल होती है। इसके खाने से रुचि बढ़ती है और शुक्र की वृद्धि होती है।

नास्पाती—यह खाने में बड़ी अच्छी होती है, स्वाद में मीठी होती है और धातु की वृद्धि करती है। खाने में रुचि उत्पन्न करती है। यह अम्लकारक और बात-नाशक होती है और त्रिदोष को शान्त करती है।

उपयोग—

सेव का मुरब्बा—एक सेर पके सेव लेकर पहले उनको टुकड़े-टुकड़े कर डालना चाहिए और फिर उनको कांटे से

छेद डालना चाहिए। इसके बाद एक सेर बूरे की शक्कर में उबालकर किसी बरतन में भरकर रख देना चाहिए और उसका मुँह बन्द कर देना चाहिए। तीसरे दिन बूरे की चाशनी बनाकर उसमें उनको डाल देना चाहिये और ऊपर से केवड़ा छिड़क देना चाहिए। यह मुरब्बा खाने में बड़ा स्वादिष्ट होता है और हृदय तथा मस्तिष्क को बलवान करता है।

कैथा

भारतवर्ष में कैथा का पेड़ भी सभी जगह पाया जाता है। परन्तु दक्षिण तथा गुजरात की ओर यह बहुत अधिक होता है। कैथे का फल, जिसको लोग कैथ या कैथा कहते हैं, बेल की बराबर होता है और कोई-कोई तो उससे भी बड़े होते हैं। इसका छिलका मोटा और बहुत सख़्त होता है।

कैथा खाने के काम में आता है। इसका कच्चा फल खटाई में बहुत तीक्ष्ण होता है और खाने में हानिकारक भी होता है। छोटे लड़कों तथा निर्बल स्वास्थ्य के आदमियों को कच्चा कैथा खाने से खाँसी आने लगती है। अधपका कैथा की चटनी बनाई जाती है। जब कैथा भलीभाँति पक जाता है तो उसकी खटाई की तीक्ष्णता दूर हो जाती है। उसे लोग सूखा भी खाते हैं और कुछ लोग नमक पीस कर, कैथे के साथ खाते हैं। पके कैथे की चटनी बनती है और उसका मुरब्बा भी बनाया जाता है।

गुण—

कच्चा कैथा—अत्यन्त खट्टा होता है, कण्ठ का नाश करता है, विष को दूर करता है। मल को रोकता है। वात को

बढ़ाता है। इसकी प्रकृति अम्लपूर्ण, कषेली, और सुगंधयुक्त होती है।

पके कैथे—खाने में रुचिकर और खट्टे होते हैं, फीके और ग्राही होते हैं। कण्ठ का शोधन करते हैं। शीतल और दुर्जर होते हैं। श्वास और क्षय रोग को मिटाते हैं। वायु और रक्त-रोग में लाभ करते हैं। कैथा तृपा और त्रिदोष का नाश करता है। हिचकी और ग्लानि को मिटाता है।

कैथे के बीज—हृदरोग, मस्तक-शूल, विष और विसर्प का नाश करते हैं।

कैथे के बीजों का तेल—इन बीजों का तेल निकाला जाता है, जो फीका, ग्राही और मधुर होता है। पित्त और कफ़ में फायदा करता है। हिचकी और क़ै को मिटाता है। चूहे के विष का नाश करता है।

उपयोग—

पित्त की अधिकता पर—पित्त के अधिक बढ़ जाने पर पके कैथे का गूदा, शक्कर में मिलाकर खाना चाहिए, इससे बहुत लाभ होता है।

चूहे का विष दूर करने के लिए—कैथे के बीजों का तेल लगाने से बहुत शीघ्र फायदा होता है।

हिचकी और श्वास के रोग पर—कैथे का रस शहद और पीपल के साथ खिलाने से तुरन्त लाभ होता है।

अजीर्ण हो जाने पर—कैथे के गूदे में सोंठ, कालीमिर्च, और पीपल का चूर्ण, शहद और शक्कर के साथ मिलाकर पीने से अजीर्ण दूर हो जाता है।

वैद्यक में कैथे का, दवाओं में बहुत जगह प्रयोग किया जाता है। वैद्यक में कच्चे कैथे को दस्तों और पेट के दर्द के

लिए तथा पक्के कैंथे को गले की सूजन के लिए अत्यन्त उपयोगी माना गया है। यूनानी में भी, इसके फलों को शीतल, पाचक और गले की सूजन के लिए बहुत मुफीद कहा गया है। इसके गूदे का शरबत पीने से किसी प्रकार की भी अरुचि क्यों न हो, तुरन्त दूर होती है।

बेर

भारतवर्ष में बेर के पेड़ सभी जगह होते हैं। उसकी बहुत सी जातियाँ होती हैं। उनमें जङ्गली बेर, झरबेरी और पँबदी बेर प्रसिद्ध हैं। सभी प्रकार के बेर खाने के काम में आते हैं। जंगलों में होने वाले जंगली बेर और झरबेरी बहुत छोटे बेर होते हैं। उनमें गदे का अंश बहुत थोड़ा निकलता है। पँबदी बेर बहुत बड़ा और खाने में स्वादिष्ठ तथा मीठा होता है।

गुण—

साधारण कच्चे बेर—पित्त और कफ़ को बढ़ाते हैं। खाने में काफ़ी खट्टे और कषैले होते हैं।

पका बेर—पित्त और वात का नाश करता है। खाने में स्निग्ध और मधुर होता है। कुछ दस्तावर भी होता है। परिश्रम को दूर करता है। वमन का निवारण करता है। बल को बढ़ाता है। तृषा का नाश करता है। खाने में रुचिकर होता है रक्त-दोष और अतिसार के लिए लाभकारी है।

छोटा बेर—खाने में मधुर और खट्टा होता है। किन्तु पक जाने पर वही बेर स्निग्ध और रुचिकर होता है। कीड़ों को उत्पन्न करता है। किसी प्रकार पित्त और जलन तथा वात का नाश करता है।

बेर का गूदा—खाने में मधुर होता है, बल को बढ़ाता है, खाँसी श्वास, को शान्त करता है। तृषा और वायु को मिटाता है। कै, जलन तथा पित्त के लिए लाभकारी है।

खिन्नी

कुछ लोग खिन्नी को खिरनी भी करते हैं। इसके वृक्ष गुजरात की ओर बहुत होते हैं। नीम के फलों की भाँति इसके फल छोटे-छोटे होते हैं। खिन्नी खाने में बहुत मीठी होती है और उसमें दूध भी होता है। इसकी प्रकृति गर्म होती है।

खिन्नी खाने के काम में आती है, यह खाने में मधुर और शीतल होती है। इसके पक जाने पर उसका स्वाद खट्टा हो जाता है। यह शरीर के लिए पौष्टिक भी होती है।

गुण—

खिन्नी—शीतल और स्निग्ध होती है। इसके खाने से शरीर में बल की वृद्धि होती है। यह तृषा को मिटाती है। मूर्छा को शान्त करती है। मद और भ्रान्ति का नाश करती है और क्षय तथा त्रिदोष को दूर करती है।

खिन्नी—यह खाने में मीठी होती है, पित्त का नाश करती है। भारी और तृप्तिकारक होती है। शरीर में वीर्य की उत्पत्ति करती है। स्वास्थ्य और शक्ति बढ़ाती है। हृदय को शक्ति देती है। प्रमेह रोग में लाभ करती है।

खिन्नी—यह मधुर और कषैली होती है। इसकी प्रकृति शीतल, और स्निग्ध होती है। खाने में स्वादिष्ठ और रुचिकारक होती है। मल को अवरुद्ध करती है। वीर्य को बढ़ाती है।

शरीर को पुष्ट करती है। मांस बढ़ाती है। त्रिदोष को नाश करती है। तृषा, दाह और रक्त-पित्त को शान्त करती है।

करौंदा

करौंदे का वृक्ष पहाड़ी स्थानों में अधिक पाया जाता है। इसके फल छोटे-छोटे और गोल होते हैं। कच्चे होने पर उनका रंग हरा होता है किन्तु पक जाने पर उनका रंग काला हो जाता है।

करौंदे का फल खाने के काम में आता है। कच्चे करौंदे का अचार बहुत अच्छा होता है और स्वास्थ्य के लिए भी उपयोगी होता है। शहरों के बगीचे में जो करौंदे के पेड़ होते हैं, वे प्रायः विलायती होते हैं जो वहाँ के बीजों को बोकर पैदा किया जाता है। इसका फल, अपने देश के करौंदों की अपेक्षा अधिक बड़ा होता है और देखने में भी सुन्दर होता है। इस पर कुछ लालिमा होती है। अचार और चटनी के लिए यह अधिक पसन्द किया जाता है। छोटे और बड़े के लिहाज़ से करौंदे की दो जातियाँ होती है, छोटे को करौंदी और बड़े को करौंदा कहते हैं।

गुण—

करौंदे के कच्चे फल—खाने में खट्टे और भारी होते हैं। तृषा का नाश करते हैं। गर्म और रुचिकारक होते हैं। रक्त-पित्त और कफ को बढ़ाते हैं।

पक्के फल—खाने में मधुर और रुचिकारक होते हैं। यह हलके और पाचक होते हैं। प्यास को शान्त करते हैं। पित्त और वात का शमन करते हैं।

दोनों प्रकार के कच्चे करौंदे—स्वाद में कडुवे होते हैं, ये अग्नि को उद्दीप्त करते हैं। भारी और गर्म होते हैं। पित्त को बढ़ाते हैं। मल को रोकते हैं। खट्टे और रुचिकारक होते हैं। रक्त पित्त पैदा करते हैं। कफ़ उत्पन्न करते हैं। एवम् तृषा को शान्त करते हैं।

दोनों प्रकार के पक्के करौंदे—मधुर और रुचिकारी होते हैं। ये हलके, शीतल तथा खाने में उपयोगी होते हैं। पित्त और त्रिदोष का नाश करते हैं। वात को मिटाते हैं।

सूखे करौंदे का गुण पक्के करौंदे के समान होता है।

हरफारेवड़ी

हरफारेवड़ी का वृत्त साधारण होता है। अंगूर की भाँति इसके पेड़ में फलों के गुच्छे लगते हैं, इसके फलों का अचार बहुत बढ़िया बनाया जाता है। इसका फल खाने में खट्टा होता है और कषेला होने के साथ-साथ सुगन्धदार होता है।

गुण—

हरफारेवड़ी—यह रुधिर के विकारों को नाश करने में बड़ा उपयोगी होता है। बवासीर को शान्त करता है। कफ़ और पित्त का नाश करता है। यह भारी और विशद होने के साथ ही रोचक होता है। यह खाने में रूखा, स्वादिष्ट किन्तु कषेला होता है।

हरफारेवड़ी—यह कफ़ और पित्त का नाश करता है। किञ्चित् कडुवा होता है। रुचि को बढ़ाता है। हृदय को लाभ पहुँचाता है। यह सुगन्धित और विशद होता है।

हरफारेवड़ी—यह खाने में कपैला रुचिकारक होता है। इसका स्वाद खट्टा, प्रिय तथा कड़ुवा होता है। यह सूखी, विशद और सुगन्धित होता है। इससे वात की वृद्धि होती है। खाने में स्वादिष्ट होता है। कफ और पित्त का नाश करता है। मूत्राश्मरी और अर्शरोग को मिटाता है।

उपयोग—

शरीर पर पित्ती उछलने पर—हरफारेवड़ी के रस में घी तथा कालीमिर्च का चूर्ण मिलाकर और गर्म करके लेप करने से तुरन्त लाभ होता है और उसके द्वारा उत्पन्न हुआ कष्ट शीघ्र शान्त हो जाता है।

बड़हल

बड़हल का पेड़ बड़ा होता है। कर्नाटक और गोमांतक प्रान्तों की ओर यह अधिक पैदा होता है। इसकी मिट्टी एक विशेष प्रकार की होती है, जिसके कारण यह सब जगह नहीं होता और यदि लगाया भी जाता है तो सूख जाता है।

बड़हल के वृक्ष में कातिक में फल आने आरम्भ हो जाते हैं। इसके फल खाये जाते हैं और विशेषकर अन्यान्य खट्टे फलों की भाँति, खटाई के लिए काम में लाये जाते हैं। पके हुए बड़हलों का रायता और अचार बनाया जाता है जो खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट और लाभकारी होता है।

गुण—

कच्चा बड़हल—गर्म और भारी होता है। यह खाने में खट्टा और मधुर होता है किन्तु रुधिर के विकारों को उत्पन्न करता है। नेत्रों को नुकसान पहुँचाता है। वीर्य को हानि करता है। अग्नि को मन्द करता है।

पक्का बड़हल—खाने में मधुर किन्तु खट्टा होता है। वात और पित्त का नाश करता है। कफ़ उत्पन्न करता है। अग्नि को उद्दीप्त करता है। रुचि को बढ़ाता है। वीर्य की वृद्धि करता है।

बड़हल—भारी और विष्टम्भकारी होता है। यह खाने में स्वादिष्ट और खट्टा होता है। रक्त-पित्त उत्पन्न करता है। कफ़ को बढ़ाता है। वातका नाश करता है। शुक्र तथा अग्नि के लिए नुक़सान पहुँचता है।

वैद्यों और हकीमों ने बड़हल का रस, प्रसूता स्त्रियों के लिए उपयोगी और लाभकर प्रमाणित किया है।

तेंदू का फल

तेंदू का पेड़ बहुत बड़ा होता है और उसमें आँवले के बराबर फल लगते हैं। ये फल खाने के काम में आते हैं। उत्तरी भारतवर्ष में उसको खाने के अतिरिक्त कितनी ही दवाओं की जगह काम में लाते हैं। तेंदू के फल के रस को गर्म करके वे लोग घाव पर लगाते हैं, जिससे घाव बहुत शीघ्र अच्छा होता है। ग़रीब आदमी उसके फलों को खाते हैं और उसके बीजों को सँभालकर रखते हैं। जब कभी किसी को अधिक दस्त लगते हैं, तो इसके बीजों को वे लोग काम में लाते हैं।

अंगरेज़ी डाक्टरों ने भी तेंदू के गुणों को बहुत उपयोगी और काम के योग्य माना है। इसके फलों को हाथ से मसल-कर रस को निचोड़ लेते हैं, उसके बाद उसको उबाल लेते हैं जिससे इसका सत् तैयार हो जाता है। इसका रंग शुद्ध भूरा मिश्रित लाल होता है। यह सत् पानी में डालते ही तुरन्त

उसमें मिश्रित हो जाता है। तेंदू का यह सत् दस्तों और पुराने शूल के लिए बहुत मुफीद होता है। यदि आदमी कहीं से गिर पड़ा हो और चोट खा गया हो अथवा किसी प्रकार के आघात से उसके कहीं पर छिल गया हो तो तेंदू के फलों को पीसकर लेप करने से अधिक कष्ट नहीं होता और न उस जगह पर सूजन ही होती है।

तेंदू का सत् बड़ा उपयोगी होता है, उसको बनाते समय इस बात का ख़ूब ध्यान रखना चाहिए कि उसके लिए लोहे का कोई बरतन काम में न लाया जाय। यदि सत् के तैयार करने में कोई ख़राबी न हो तो तैयार होने पर उसका रंग लाख की भाँति होता है। तेंदू के फलों के बीजों का तेल निकाला जाता है, वह कितनी ही बीमारियों में काम आता है।

वैद्यक शास्त्र में तेंदू के कच्चे फलों को वात और पित्त के लिए अत्यन्त उपयोगी माना गया है। तेंदू के फलों का सत् पुरानी संग्रहणी के लिए रामबाण औषधि है।

गुण—

तेंदू का कच्चा फल—यह स्निग्ध और कषेला होता है, मल को रोकता है और अरुचि उत्पन्न करता है। इसकी प्रकृति शीतल और रूखी होती है। इसके खाने से वात उत्पन्न होता है।

तेंदू का कच्चा फल—कड़ुवा और हलका होता है। यह वात की वृद्धि करता है और मल को रोकता है। यह कषेला और ग्राही होता है। खाने में अरुचि का उत्पादन करता है।

तेंदू का पक्का फल—पित्त और प्रमेह का नाश करता है, रुधिर के विकारों को शुद्ध करता है। खाने में स्वादिष्ट होता है। यह वात को मिटाता है स्निग्ध तथा दुर्जर होता है।

उपयोग—

श्वास के रोग में—तेंदू के फलों का सूखा छिलका चिलम में भर कर पीने से श्वास के रोगियों को लाभ होता है।

गूलर

आम, इमली और जामुन के भाँति गूलर का वृक्ष भी बहुत बड़ा होता है। इसके फल, जिसको लोग गूलर कहते हैं, अंजीर के बनावट के होते हैं। गूलर के पेड़ सभी जगह पाये जाते हैं। देहातों में इसके पेड़ अधिक होते हैं।

प्रायः देखा जाता है कि गूलर का पेड़ जहाँ पर होता है, वहाँ कोई न कोई जलाशय अवश्य होता है। देहातों में, जो पेड़ बस्ती के भीतर होते हैं, प्रायः वहाँ पर, उस पेड़ के नीचे या निकट लोग कुआ या तालाब खोदते हैं। इसका कारण यह है कि गूलर के निकट के जलाशय का पानी अत्यन्त गुणकारी होता है।

गूलर के वृक्ष में बहुत से फल लगते हैं। वे कच्चे और पक्के—सभी तरह से खाये जाते हैं। कच्चे गूलरों की तरकारी बनाई जाती है और पके गूलर खाये जाते हैं। ये खाने में मधुर और स्वादिष्ठ होते हैं। कुछ पेड़ों के गूलर बहुत बड़े-बड़े होते हैं और उनका फल भी मीठा तथा खाने के योग्य होता है।

गूलर का फल कच्ची अवस्था में हरे रंग का होता है और पक जाने पर उसका रंग लाल अथवा कत्थई रंग का हो जाता है। गूलरों के पक जाने पर उनमें छोटे-छोटे कीड़े पैदा हो जाते हैं, ये कीड़े भुनगे कहलाते हैं। इनके पैदा हो जाने से गूलर खाने में खराब नहीं होते। जो लोग गूलर खाते हैं, वे

पक्के गूलरों के बीच से फाड़कर उन भुनगों को उड़ा देते हैं अथवा स्वयं उड़ जाते हैं, इसके बाद, लोग उनको खा जाते हैं। कुछ लोग तो उनके भुनगों को बिना निकाले ही खा जाते हैं, परन्तु ऐसा करना ठीक नहीं होता। देहातों में ग़रीब लोग पेट-भर कर गूलर खाते हैं।

गुण–

कच्चे गूलर—स्तम्भक और फीके होते हैं, ये खाने में गुण कारी होते हैं। तृषा को मिटाते हैं। कफ़ और पित्त का नाश करते हैं और रक्त-विकार को दूर करते हैं।

पके गूलर—खाने में मधुर होते हैं किन्तु कृमि उत्पन्न करते हैं। इनकी प्रकृति जड़ और रुचिकर होती है। ये शीतल तथा कफ़ कारक होते। रक्त-दोष, पित्त और दाह को मिटाते हैं। क्षुधा को शान्त करते हैं। तृषा और श्रम को दूर करते हैं। प्रमेह, शोष और मूर्छा के रोग में लाभकारी हैं।

पुराने गूलर—फीके और खट्टे होते हैं। ये खाने में रुचिकर और अग्नि को उद्दीप्त करते हैं। इनके खाने से मांस की वृद्धि होता है और रक्त-दोष उत्पन्न होता है।

साधारण गूलर—मीठे और शीतल होते हैं। ये पित्त, तृषा और मोह को उत्पन्न करते हैं और वमन, रक्तस्राव एवम् प्रदर का नाश करते हैं।

उपयोग–

रक्त-पित्त पर—पके हुए गूलरों को गुड़ या शहद के साथ खाना चाहिए। इससे रक्त-पित्त नाश होता है। अथवा इस दोष जनित जो विकार उत्पन्न होता है, वह शान्त हो जाता है।

शीतला की गर्मी दूर करने के लिए—जिन बच्चों को शीतला निकलती है उनके शरीरों से बहुत दिनों तक

उनकी गर्मी नहीं जाती, ऐसी अवस्था में, गूलरों का रस निकाल कर और उसमें मिश्री मिलाकर पिलाना चाहिए। इससे बड़ा लाभ होता है।

बेल

हमारे देश में बेल सभी जगह होता है। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है। बेल का फल भी बेल ही कहलाता है और वह कैथे के बराबर होता है। कुछ दरख्तों के फल बहुत बड़े होते हैं। किन्तु बड़े फल देने वाले वृक्ष प्रायः बगीचों में हुआ करते हैं।

कच्चे बेल का शाक बनाया जाता है और कुछ लोग उसका अचार और मुरब्बा भी बनाते हैं। पके हुए बेल में शहद की तरह गाढ़ा-गाढ़ा रस होता है। यह रस खाने में बहुत मीठा और गर्म होता है। यह खाने के काम में आता है। देहातों में ग़रीब आदमी इसे बहुत खाते हैं।

कच्चा बेल बिना पका हुआ खाने के योग्य नहीं होता। इस लिए बहुत से आदमी उसको पका कर खाते हैं। बेल के ऊपर का छिलका बहुत कड़ा होता है। आग में वह जब पकाया जाता है तो उसमें बड़े ज़ोर की आवाज़ होती है। आवाज़ कर के उसका छिलका चिटख़ जाता है।

बेल बहुत-सी बीमारियों में काम आता है और कभी-कभी पके हुए बेल का सूखा गूदा मिलना ही मुश्किल हो जाता है। दस्तों और अतिसार की बीमारी में यह बहुत काम देता है। इसलिए देहातों में लोग पके हुए बेल लाकर अपने घरों में रख लेते हैं और जब कभी उसकी आवश्यकता होती है तो उसका उपयोग करते हैं।

देहातों में दवाखाने, औषधालय और अस्पताल नहीं होते। और न यहाँ पर अच्छे वैद्य, हकीम और डाक्टर ही होते हैं। यहाँ कुछ लोग बीमारियों के सम्बन्ध में फूल, फल, पत्तियाँ और जड़ों का उपयोग करते हैं। इसी आधार पर देहातों में बेल खाने के सिवा दवाओं में भी बहुत काम आता है। यहाँ पर प्रायः प्रत्येक गृहस्थ और बाल-बच्चेदार परिवार में बेल के बहुत पुराने फल रक्खे रहते हैं। उन परिवारों के लोग उनको बहुत सँभाल कर रखते भी हैं।

गुण—

बेल—यह खाने में मधुर और लघु होता है। त्रिदोष का नाश करता है। कै और शूल में फ़ायदा करता है। कफ और वायु का नाश करता है। पित्त का दमन करता है और मूत्र-कृच्छ् में लाभकारी होता है।

कच्चे बेल—स्निग्ध और ग्राही होते हैं। अग्नि को तेज़ करते हैं। प्रकृति में गुरु और पाचक होते हैं। स्वाद में कड़ुये और फीके होते हैं। इनकी तासीर गर्म होती है। शूल और आमवात में फ़ायदा करते हैं। संग्रहणी और कफ़ातिसार को नाश करते हैं।

पक्के बेल—यह जलन पैदा करते हैं। खाने में मीठे किन्तु कुछ फीके होते हैं। इनकी प्रकृति तीक्ष्ण और गर्म होती है। ये ग्राही और कड़ुवे होते हैं। वात को उत्पन्न करते हैं और अग्नि को मन्द करते हैं।

पुराने बेल—मधुर और फीके होते हैं। ये तीक्ष्ण, गर्म और जड़ होते हैं। खाने में पाचक होते हैं। अग्नि का उद्दीपन करते हैं। कफ का नाश करते हैं और वायु को शान्त करते हैं।

उपयोग—

बहरेपन पर—बेल के गूदे को गो के मूत्र में पीस डालना चाहिये और फिर उसको छानकर उसमें थोड़ा-सा तेल मिला लेना चाहिये। इसके पश्चात् उसे थोड़ा-सा गुनगुना करके कानों में डालना चाहिये। इस से कान का बहरापन दूर होता है।

गला दुखने पर—प्रायः गले में एक प्रकार का दर्द-सा होने लगता है, किन्तु उसका कोई कारण नहीं मालूम होता। ऐसे कष्ट प्रायः लोगों को सहने पड़ते हैं। इसके लिए पके बेल का गूदा खाने से बड़ा लाभ होता है।

रक्तातिसार पर—बालक से लेकर बुड्ढों तक जब किसी को रक्त के दस्त आने लगते हैं तो उसमें बेल बड़ा उपयोगी होता है। सूखे हुए बेल के गूदे को पहले चूर्ण कर डालना चाहिये और फिर उसमें थोड़ा-सा गुड़ मिला कर खाना चाहिए। अवश्य लाभ होता है।

सब प्रकार के अतिसार पर—कच्चे बेल का गूदा और आम की गुठली को कूटकर पहले उसका काढ़ा बना लेना चाहिये फिर उस में शक्कर और शहद मिलाकर खाना चाहिए। निश्चय फ़ायदा होता है।

मुंह आने पर—बेल को तोड़ कर उसके गूदे को पानी में उबाल डालना चाहिये और उसके जल से कुल्ला करना चाहिये।

बच्चों की संग्रहणी पर—बेल के गूदा और सोंठ पीस कर चूर्ण कर लेना चाहिये, उसके बाद थोड़ा-सा गुड़ मिलाकर खिलाना चाहिये।

धातु की पुष्टि के लिए—बेल के गूदे का अर्क निकाल कर पीने से बड़ा लाभ होता है और यदि कुछ दिनों तक लगातार

उसका सेवन किया जाय तो धातु के लिए बड़ा गुणकारी होता है।

विसूचिका पर—बेल, सोंठ और कायफल का काढ़ा बना कर पीने से विशूचिका-रोग दूर होता है। बेल और सोंठ का भी यदि काढ़ा बना कर पिलाया जाय, तो भी लाभ होता है।

आँवला

आँवले के वृक्ष हमारे देश में बहुत अधिक हैं। आँवले में इतने गुण हैं और वह इतना अधिक उपयोगी है कि इसके सम्बन्ध में यहाँ पर पर्याप्त रूप से लिखना बहुत कठिन है। आँवला में जो स्वास्थ्य है, जो आरोग्य शक्ति है और शरीर के समस्त रोगों को दूर करने के लिए उसमें जो शक्ति तथा गुण है रोगों को दूर करने के लिए उसमें जो शक्ति तथा गुण है वह किसी भी दूसरे फल में नहीं है, इसीलिए आर्यों के आरोग्य शास्त्र आयुर्वेद में उसको ऊँचा स्थान दिया गया है।

आँवलों की शक्ति और गुण को न केवल हमारे पूर्वजों ने स्वीकार किया है, उसका गुण, उसकी उपयोगिता यूनानी और डाक्टरी में भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार की गई है। यहाँ पर आँवलों के गुण और उसके उपयोग संक्षेप में देने की चेष्टा की जायगी, जिससे सर्वसाधारण उससे परिचित होकर लाभ उठा सकें।

आँवले की दो जातियाँ होती हैं, सफ़ेद आँवला और जंगली आँवला। प्रत्येक आँवला अत्यन्त उपयोगी और लाभकारक होता है। आयुर्वेद में तीन फलों को मिलाकर त्रिफला की व्यवस्था की गई है और उस त्रिफला की सहस्र मुख से

प्रशंसा की गई है, त्रिफला के तीन फलों में आँवला भी एक है जो उन दोनों की अपेक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

गुण—

आँवला—खट्टा और तीखा होता है, खाने में मधुर और फीका जान पड़ता है। आँवला केश्य और भग्नसंधानकारक होता है। इससे वीर्य की वृद्धि होती है। नेत्रों को जीवन-शक्ति प्राप्ति होती है और उनके अनेक रोग नष्ट होते हैं। आँवलों की मालिश करने से शरीर में कान्ति उत्पन्न होती है। यह पित्त का नाश करता है, कफ़ को दूर करता है। प्रमेह को अच्छा करता है। विष तथा त्रिदोष का नाशक है।

कच्चा और पक्का आँवला—खाने में मीठा और खट्टा होता है, आँवले की प्रकृति फीकी और शीतल होती है। यह जरा अवस्था का नाश करता है और शरीर में यौवन का नवाविर्भाव करता है। समस्त व्याधियों को दूर करता है। सभी प्रकार की प्रकृति वाले मनुष्यों के लिए हितकारी है। इसके खाने से अरुचि का नाश होता है, मल साफ़ होता है और मलाशय शुद्ध होता है। यह रक्त-पित्त, प्रमेह, ज्वर का नाश करता है। विष को मारता है। सूजन को मिटाता है। तृषा को शान्त करता है। सैकड़ों-सहस्रों बीमारियों को दूर करने में रामबाण की भाँति काम करता है। प्रत्येक शरीर को स्वास्थ्य पहुँचाने के लिए अमृत के समान है।

इस प्रकार का आँवला—बालकों और युवकों को यौवन प्रदान करता है, वृद्धों को युवक बनाता है। वार्द्धक्य का नाश करता है। जल को शुद्ध करता है। जिन कुओं के पानी में दुर्गन्धि आने लगती है, उनमें आँवले छोड़ने से उनकी दुर्गन्धि नष्ट हो जाती है।

उपयोग—

अरुचि पर—आँवलों को उबालकर पीसे और फिर उसमें ज़ीरा, कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, धनिया, दालचीनी, सेंधा नमक, संचल हर्रे, और सफ़ेद नमक पीसकर मिलावे। इसके उपरान्त उसकी गोलियाँ बना ले। इन गोलियों के खाने से अरुचि का नाश होता है। भूख बढ़ती है और मुख शुद्ध होता है।

खुजली पर—सूखे आँवलों को पीस डाले और उसके चूर्ण को तेल में मिलाकर शरीर में लगाना चाहिए, इससे खुजली मिट जाती है और रक्त शुद्ध होता है।

स्वर के बिगड़ने पर—सूखे आँवलों को पीसकर गाय के दूध के साथ खाने से बिगड़ हुआ स्वर शुद्ध और तीव्र होता है। अधिक उपयोग करने पर आवाज़ में मिठास आती है। गला साफ़ होता है।

सभी प्रकार के ज्वर में—सूखे हुए आँवले, चित्रक की जड़, हर्र, पीपल और सेंधा नमक बराबर-बराबर लेकर चूर्ण कर डालना चाहिए और इस चूर्ण का सेवन करने से सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते हैं।

दूसरी विधि—सूखे आँवले, चित्रक की जड़, छोटी हर्रें और पीपल का काढ़ा बनाकर पिलाने से ज्वर का आना बन्द हो जाता है।

शरीर पुष्ट करने के लिए—एक सेर आँवलों को लेकर उनको गुठली तक चारों ओर से छेद डालना चाहिए, इसके बाद चूने के पानी में छोड़ दे। फिर दो सेर पानी के उबलने पर उनमें इन आँवलों को डाल दे और उबलने दे। इसके पीछे उनको निकालकर और कपड़े से उनका पानी पोंछकर शक्कर

या मिश्री की चाशनी में डाल दे। यह मुरब्बा कई-कई वर्ष चलता है। आँवले का मुरब्बा पित्त को नष्ट करने और पुष्टई के लिए सुधा के समान है।

अशुद्ध अभ्रक खा लेने पर—बिना शुद्ध किया हुआ अभ्रक खा लेने से जो भयंकर विकार उत्पन्न होते हैं उनको शांत करने के लिए आँवलों का रस पीना चाहिए अथवा आँवलों को पानी में गलाकर तबतक प्रयोग करना चाहिए जबतक उसके समस्त विकार पूर्ण रूप से शान्त न हो जायँ।

क़ै और श्वास में—आँवलों के रस में पिसी हुई पीपल और शहद मिलाकर खिलाने से तुरन्त लाभ होता है।

वात-रक्त पर—सूखे हुए आँवलों को अंडी के तेल में तलकर पीस डाले, उसके चूर्ण को शक्कर के साथ सुबह-शाम पानी के द्वारा खाने से बड़ा लाभ होता है और वात-रक्त नष्ट हो जाता है।

वमन पर—यदि ख़ाली क़ै होती हो तो सूखे आँवलों के चूर्ण में चन्दन का चूर्ण मिलाकर शहद के साथ खाने से बहुत शीघ्र वमन होना रुक जाता है। यदि न रुके तो यह कई बार थोड़ी-थोड़ी देर में इसको खिलाना चाहिए।

बुढ़ापे को दूर करने के लिए—सूखे हुए आँवलों को पानी में ख़ूब महीन पीस डाले और उसको सिर से लेकर समस्त शरीर में लगावे और कुछ समय के उपरान्त ठंडे पानी से नहा डाले। इससे शरीर में झुर्रियाँ नहीं पड़तीं और न बाल सफ़ेद होते हैं। अधिक दिनों तक इसका उपयोग करने से बदन में पड़ी हुई झुर्रियाँ जाती रहती हैं और सफ़ेद बाल काले हो जाते हैं।

आँखों की गर्मी दूर करने के लिए—सूखे हुए आँवले और थोड़े से तिलों को लेकर शाम के पानी में भिगो दे और प्रातःकाल उनको पीसकर आँखों में लगावे और थोड़ी देर में स्नान कर डाले। इससे नेत्रों की जलन मिट जाती है और हर समय उनमें ठण्डक रहती है। अधिक दिनों तक उपयोग करने से आँखों की ज्योति बढ़ती है।

दूसरी विधि—आँवला, हर्र, बहेड़ा बराबर-बराबर लेकर सायंकाल उनको पानी में भिगो दे और प्रातःकाल उठते ही पहले आँखों को उसके पानी से खूब छींटे मार-मार कर धोवे। इससे आँखों की जलन तथा गर्मी शान्त हो जाती है। त्रिफला का चूर्ण घी में मिलाकर खाने से भी आँखों की अनेक खराबियां नष्ट होती हैं और उनकी शक्ति बढ़ती है।

पित्त दूर करने के लिए—सूखे हुए आंवलों को पीसकर और उस चूर्ण में घी तथा शक्कर मिलाकर खाने से पित्त शान्त होता है, चित्त प्रसन्न होता है और बदन में स्फूर्ति उत्पन्न होती है।

मुख सूखने पर—आँवलों और अंगूरों को पीसकर और उसकी गोलियां बनाकर मुख में रखने से मुख का सूखना बन्द हो जाता है। और मुख से लेकर तालू तक शीतलता उत्पन्न हो जाती है।

ज्वर के बाद अरुचि होने पर—सूखे आँवले और अंगूर पीसकर शक्कर मिलाकर उनका कल्क बनाले, उसके खाने से अरुचि का नाश होता है। मुख शुद्ध होता है और स्वाद अच्छा हो जाता है।

मूत्रकृच्छ् अथवा गर्मी में—आँवलों के रस में गन्ने का रस मिलाकर पीने से लाभ होता है।

नाक से खून गिरने पर—सूखे हुए आँवलों को घी में तल कर पीस डाले और उसके बाद उसको मस्तक पर लेप करने से नाक से गिरता हुआ खून तुरन्त बन्द होता है।

योनि में दाह होने पर—आँवलों के रस में शक्कर या मिश्री मिलाकर पिलाने योनि की दाह शान्त होती है।

प्रमेह में—पाव-भर आँवलों के रस में मट्ठा मिलाकर पिलाने से लाभ होता है। लगातार सेवन करने से प्रमेह अच्छा होता है।

शरीर की कान्ति बढ़ाने के लिए—सूखे हुए आँवलों और सफेद तिलों को पीसकर शरीर में नित्य मालिश करे और उसके कुछ देर में गर्म पानी के साथ स्नान कर डाले, कुछ दिनों तक इसका उपयोग करने से शरीर की शोभा बढ़ती है और कान्ति उत्पन्न होती है।

बदन में तेज उत्पन्न करने के लिए—आँवलों और असगंध का चूर्ण बराबर-बराबर लेकर घी और शहद के साथ खाने से बड़ा लाभ होता है और लगातार इसका सेवन करने से बदन में तेज उत्पन्न होता है।

मस्तक की पीड़ा में—आँवलों का चूर्ण घी और शक्कर के साथ प्रातःकाल खाने से और ऊपर से गाय का दूध पी लेने से किसी प्रकार की मस्तक की पीड़ा शान्त होती है।

पित्त जनित शूल पर—सूखे आँवलों का चुर्ण करके शहद के साथ खिलाने से आराम होता है।

मूर्छा पर—आँवलों का रस निकाल कर उसमें घी मिलाकर पिलाने से मूर्छा जाती रहती है।

रक्त-पित्त पर—सूखे आँवलों का चूर्ण शक्कर मिलाकर घी के साथ खिलाना चाहिए अथवा आवलों का मुरब्बा खिलाना चाहिए। इससे रक्तपित्त शान्त होता है।

रक्तातिसार पर—आँवलों के रस को शहद, घी और दूध मिलाकर खिलाना चाहिए। रक्तातिसार दूर होता है।

अम्लपित्त पर—एक तोला सूखे आँवलों को लेकर रात के समय पानी में भिगोदे। प्रातःकाल उसमें तीन माशा सोंठ और एक माशा जीरा मिलाकर महीन पीस डाले। इसके बाद उसकी गोलियां बनाले और उसकी एक गोली, दो तोला मिश्री के साथ खाकर ऊपर से थोड़ा-सा दूध पीले।

बालकों के अतिसार पर—सूखे आँवले, चित्रक, छोटी हर्र, पीपल और संचल नमक का चूर्ण करके प्रातःकाल और रात को सोते समय गर्म पानी के साथ, बालक की अवस्था के अनुसार खिलाना चाहिए, इससे उसका अतिसार अच्छा हो जायगा।

पित्त के विकारों पर—कलई के बर्तन में एक तोला सूखा आँवला रात को भिगो दे। प्रातःकाल उसे पीसकर गाय के दूध के साथ पिलाना चाहिए।

पाण्डु रोग पर—सूखे आँवलों, हल्दी और गेरू को महीन-महीन पीसकर जिससे वह काजल की भाँति हो जाय, इसके बाद उसका अंजन करने से पाण्डु रोग नष्ट होता है।

तीसरा अध्याय



शाक-फल

कुम्हड़ा

घरों के बाहर, कुम्हड़ा सर्वत्र बोया जाता है, इसकी बेल होती है। और बेल में ही इसके फल लगते हैं जो बहुत बड़े-बड़े होते हैं। इसके फलों का रंग नीला होता है। जब यह पक जाता है, तब इसके ऊपर श्वेत रंग की धूल-सी जम जाती है।

गुण

कुम्हड़े को कुछ लोग पेठा भी कहते हैं। यह जीर्ण शरीर को सबल बनाता है। वीर्य को उत्पन्न करता है। खाने में स्वादिष्ट होता है। अरुचि को दूर करता है। शरीर में बल बढ़ाता है। पित्त का नाश करता है।

कुम्हड़ा, पित्त का नाश करता है। रक्त-पित्त के रोगों में लाभ पहुँचता है। तृषा का निवारण करता है। वात-पित्त को शान्त करता है। वस्ति का शोधन करता है। स्वादुपाकी किन्तु भारी होता है।

कुम्हड़ा शरीर को पुष्ट करता है, वीर्य को बढ़ाता है और धातु को गाढ़ा करता है। प्रकृति में शीतल, भारी और रूखा होता है। हृदय को शक्ति पहुँचाता है। कफ़ उत्पन्न करता है।

यह मूत्राघात के रोग को लाभ करता है। प्रमेह को शान्त करता है। मूत्रकृच्छ्र और पथरी को दूर करता है। तृषा के द्वारा उत्पन्न हुए कष्ट को दूर करता है। शुक के प्रत्येक विकार में यह अत्यन्त उपयोगी है।

कच्चा कुम्हड़ा, पित्त का नाश करने के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। मध्यम अवस्था का कुम्हड़ा कफ को शान्त करता है। पका हुआ कुम्हड़ा, हलका, गर्म और क्षार होता है। इसमें पाचन-शक्ति उद्दीप्त होती है। यह त्रिदोष-नाशक होता है। हृदय के रोगियों को विशेष रूप से उपयोगी है। कुछ शीतल, हलका और स्वादिष्ट होता है।

कच्चा कुम्हड़ा—अत्यन्त शीतल, दोषकारक, और पित्त उत्पन्न करने वाला है।

उपयोग—

कुम्हड़े या पेठे का उपयोग अनेक प्रकार से किया जाता है, उसकी तरकारी बनाई जाती है, पेठे के द्वारा बरियाँ बनाई जाती हैं। इसका मुरब्बा अत्यन्त स्वादिष्ट और शक्तिवर्द्धक होता है। पेठे की जो मिठाई बनती है, वह स्वादिष्ट होने के साथ-साथ, शरीर को शीतलता पहुँचाने वाली होती है, इसीलिए लोग, गर्मी के दिनों में पेठे की मिठाई खाकर सुबह के समय पानी पिया करते हैं। कुम्हड़ा बड़ा उपयोगी होता है।

काशीफल

काशीफल, रामकोला, सीताफल, लाल पेठा, और गोल कद्दू आदि इसके अनेक नाम हैं। इसके पेड़ की भी बेल होती है। इसका फल बड़ा और कच्ची अवस्था में हरा होता है किन्तु पक जाने पर इसका लाल वर्ण हो जाता है।

गुण--

काशीफल—पाचन-शक्ति को निर्बल करता है। पित्त को उत्पन्न करता है। कफ़ का नाश करता है, और वात को बढ़ाता है। खाने में स्वादिष्ठ होता है।

काशीफल—यह खाने में हलका किन्तु मल को अवरुद्ध करता है। प्रकृति में शीतल होता है। रक्त-पित्त का नाश करता है। कफ़ और वात को शान्त करता है। क्षारयुक्त किन्तु भारी होता है।

उपयोग--

इसकी तरकारी खाने में बड़ी स्वादिष्ठ होती है। कच्ची रसोई और पक्की रसोई, दोनों में इसका प्रयोग किया जाता है। तरकारी के अतिरिक्त इसका रायता भी बनाया जाता है जो मट्ठे या दही के साथ बनने के कारण बड़ा ज़ायकेदार हो-जाता है। खाने के शौक़ीन लोग, इसकी पकौड़ी भी बनाते हैं जो बड़ी रुचिपूर्ण होती है।

पके हुए काशीफल का हलुवा बनाया जाता है। यह शरीर के लिए स्वास्थ्य वर्द्धक और ज़ायकेदार होता है। पहले उसको दूध के साथ उबालते हैं जब वह गल जाता है और दूध पच जाता है तो फिर घी के साथ भूनकर शक्कर मिला देते हैं। यह हलुवा बड़ा स्वादिष्ठ होता है।

लौकी

लौकी का पेड़ भी बेलदार होता है। लौकी सर्वत्र पैदा होती है। गृहस्थ लोग अपने घरों में इसको बो देते हैं, जिससे उसकी बेल पैदा होकर-दीवारों, छप्परों और छतों पर चढ़

जाती है और उससे बहुत-से इसके फल होते हैं जो उनकी तरकारी के काम में आते हैं, इसकी दो क़िस्में होती हैं, मीठी और कडुवी।

गुण—

मीठी लौकी—पित्त और कफ़ का नाश करती है। हृदय को लाभकारी है। वीर्य की वृद्धि करती है, खाने में रुचिकारक होती है। शरीर को पुष्ट करती है।

मीठी लौकी—खाने में मधुर और स्निग्ध होती है। पित्त का नाश करती है। शरीर में बल तथा स्वास्थ्य उत्पन्न करती है। यह अत्यन्त पाचक और पथ्य होती है।

कडुवी लौकी—खाने में कडुवी और तीक्ष्ण होती है। श्वास के रोग में लाभ करती है। वात को शान्त करती है। खाँसी को आराम पहुँचाती है। किसी प्रकार की सूजन, फोड़ा और विष तथा शूल को शान्त करतो है। प्रकृति में शीतल और हृदय के लिए उपकारी है।

उपयोग—

लौकी का उपयोग तरकारी या रायता बनाने में होता है। ःह हलकी, पाचक और दोषों से रहित होती है, इसलिए निर्बल ा किसी बीमार, आदमी को लौकी का साग या उसकी तरःारी दी जाती है।

ककड़ी

ककड़ी कई प्रकार की होती है किन्तु उनमें दो प्रधान हैं, ीठी और कडुवी। इसके सिवा उसके कई भेद होते हैं। सभी ्कार की ककड़ियों में मीठी ककड़ी जो गर्मी की ऋतु में पैदा ोती है सबसे उत्तम होती है। कडुवी ककड़ी भी खाने के

काम में आती है किन्तु उसके बीज कड़ुवे होने के कारण नहीं खाये जाते हैं।

गुण—

कच्ची ककड़ी—शीतल और रूखी होती है। मल को रोकती है, खाने में मधुर और भारी होती है, पित्त को दूर करती है, अत्यन्त स्वादिष्ट होती है। मूत्र रोग का नाश करती है और सन्ताप तथा मूर्च्छा को शान्त करती है।

पकी ककड़ी—गर्म और अग्निवर्द्धक होती है। पित्त को उत्तेजना देती है। वमन को दूर करती है, तृषा को शान्त करती है, और क्लान्ति को मिटाती है। खाने में स्वादिष्ट होती है।

ककड़ी—मधुर और पित्त की नाशक होती है। खाने से तृप्ति होती है। अधिक खाने से वात को उत्पन्न करती है। मल को रोकती है। बादी और भारी होती है। वात ज्वर उत्पन्न करती है। कफ़ को बढ़ाती है। ताप को नाश करती है। पित्त, मूर्च्छा और मूत्रकृच्छ्र रोग को दूर करती है।

कोमल ककड़ी—हल्की और खाने में सुरुचिपूर्ण होती है। बार-बार मूत्र उत्पन्न करती है। अत्यन्त शीतल होती है। रक्त-पित्त, मूत्रकृच्छ्र और रुधिर के विकारों को दूर करती है।

तोड़ने के बाद पकी हुई ककड़ी—जो ककड़ी, उसके पेड़ से तोड़कर रख ली जाती है और रखी हुई पक जाती है, वह गर्म तथा पित्त उत्पन्न करने वाली होती है। कफ़ और वात को नष्ट करती है।

जंगली ककड़ी—गर्म और खाने में तिक्त होती है। पाक में कटु किन्तु कफ और कृमि को नाश करती है।

चीनी ककड़ी—खाने में शीतल और मधुर होती है, रुचि उत्पन्न करती है। कफ को बढ़ाती है, पित्त को शान्त करती है। दाह और शोष को दूर करती है।

सभी प्रकार की ककड़ी—भारी कठिनाई से पचने वाली होती है। वात-रक्त को बढ़ाती है और मन्दाग्नि को उत्पन्न करती है। जो ककड़ियाँ वर्षा और शरदऋतु में उत्पन्न होती हैं, उनके खाने से स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है। हेमन्त ऋतु में जो ककड़ी उत्पन्न होती है, वह रुचिकारक और लाभकारी होती है वह पित्त का नाश करती है और खाने के योग्य होती है। जो ककड़ी भलीभाँति पक जाती है, वह खाने में मधुर और कफनाशक होती है।

उपयोग—

ककड़ी, कच्ची और पक्की, सभी प्रकार खाई जाती है। अन्यान्य शाक-फलों की भाँति उसको पकाकर खाने की आवश्यकता नहीं होती, बिना पकाये भी बड़ी रुचि और स्वाद के साथ खाई जाती है। कच्ची ककड़ी के साथ नमक और कालीमिर्च का उपयोग करने में और भी अधिक उपयोगिता उत्पन्न हो जाती है। इसके सिवा, ककड़ी की तरकारी तथा उसका रायता भी बनाया जाता है, जो खाने में मधुर और रुचिपूर्ण होता है।

खीरा

शाक-फलों में ककड़ी की भाँति यह एक दूसरा फल है, खीरा, क्षीरा और बालमखीरा आदि इसके कई एक नाम हैं। अपनी ऋतु में यह बहुत अधिक पैदा होता है और ककड़ी की भाँति उपयोग में लाया जाता है।

गुण—

ताज़ा खीरा—हलका और ..ने में स्वादिष्ट होता है। इस की प्रकृति शीतल होती है। तृषा को यह दूर करता है। दाह को मिटाता है और रक्त-पित्त को दूर करता है।

पका हुआ खीरा—किञ्चित खट्टा होता है, कुछ गर्म होता है और पित्त को बढ़ाता है। कफ और वात का नाश करता है।

खीरा—साधारणतया खीरा खाने में मधुर होता है, प्रकृति में शीतल और रुचिकारक होता है। इसके खाने से मूत्र अधिक आता है। श्रम और पित्त को शान्त करता है। दाह और वेदना को मिटाता है और वमन दूर करता है।

उपयोग—

कच्चा और पक्का, दोनों प्रकार का खीरा खाया जाता है, ककड़ी की भाँति बिना पकाये हुए खीरा भी खाने के उपयोग में आता है। नमक और कालीमिर्च के साथ खीरा खाने से अधिक रुचिकारण हो जाने के साथ-साथ, वह निर्दोष हो जाता है।

कच्चा खीरा खाने में उसका छिलका निकालने की आवश्यकता नहीं होती। वह स्वयं मुलायम होता है, परन्तु पका हुआ खीरा खाने के पहिले उसका छिलका निकाल डाला जाता है, इसलिए कि वह कठोर हो जाता है। कच्चे खीरे का रंग बिल्कुल हरा और पक जाने पर उसका रंग मटमैला हो जाता है। इसकी तरकारी भी बनाई जाती है किन्तु बिना पकाये हुए ही यह अधिक खाया जाता है।

खरबूज़ा

यह खेतों में बोया जाता है। खरबूज़ा जब कच्चा होता है तो उसका रंग हरा होता है, पक जाने पर उसका छिलका बड़ा सुहावना और मटमैला हो जाता है। पके हुए खरबूज़े की सुगन्ध बड़ी अच्छी होती है। खाने में रुचिकारक होता है।

गुण—

खरबूज़ा—बल को बढ़ाता है। मूत्र अधिक लाता है। कोठे को शुद्ध करता है। प्रकृति में शीतल और वीर्य को बढ़ाने वाला होता है। पित्त और वात को नष्ट करता है। मूत्रकृच्छ्र रोग को उत्पन्न करता है।

कच्चा खरबूज़ा—खाने में कड़ुआ और कुछ मधुर होता है। स्वाद में किसी प्रकार खट्टा होता है।

पका खरबूज़ा—अमृत के समान स्वादिष्ट होता है। खाने से तृप्ति होती है। शरीर को पुष्ट करता है। दाह को दूर करता है। श्रम को मिटाता है। मूत्र की वृद्धि करता है। पित्त और उन्माद का नाश करता है। कफ़ को उत्तेजित करता है और वीर्य को बढ़ाता है।

भली भाँति पका हुआ खरबूज़ा—स्वास्थ्य को बढ़ाता है शरीर को पुष्ट करता है। बल को बढ़ाता है। खाने में स्वादिष्ट होता है। प्रकृति में शीतल और भारी होता है। पित्त और वात को शान्त करता है। स्निग्ध और उदर के रोगों को मिटाता है। इसकी सुगन्धि बड़ी मनोहर होती है।

तरबूज़

तरबूज़ के खेत प्रायः नदी के किनारे और रेतीली मिट्टी में होते हैं। तरबूज़ दो प्रकार का होता है, एक काले बीजों का होता है और दूसरा लाल बीजों का। जिन तरबूज़ों के बीज काले होते हैं, उनका गूदा, गुलाबी और पीले रंग का होता है। जिनके बीज लाल होते हैं, उनका गूदा, लाल, गुलाबी और पीले आदि सभी रंग का होता है।

हमारे देश में पौष और माघ के दिनों में तरबूज़ बोया जाता है। फागुन और चैत में उसमें फूल आते हैं और बैसाख में उसका फल फलता तथा बढ़ता है, जेठ में पक कर वह खाने के योग्य हो जाता है। किसी-किसी देश में तरबूज़ प्रत्येक ऋतु में पैदा होते हैं और वे इतने बड़े होते हैं कि उनकी तौल एक एक मन तक की होती है।

गुण—

कच्चा तरबूज़—मल को रोकता है। पित्त और शुक्र को मिटाता है। इसकी प्रकृति शीतल और भारी होती है। बल को बढ़ाता है, मधुर और तृप्तिकारक होता है। शरीर को पुष्ट करता है। कफ को उत्तेजित करता है और नेत्रों को हानि पहुँचाता है।

पक्का तरबूज़—गर्म और क्षारयुक्त होता है। पित्त को बढ़ाता है, कफ़ और वात का नाश करता है। खाने में स्वादिष्ट तथा मीठा होता है।

तरबूज़—साधारणतया मधुर और शीतल होता है, पित्त का नाश करता है, दाह का निवारण करता है।

तोरई

तोरई अधिकतर तरकारी के काम आती है। इसकी कई एक क़िस्मे होती हैं। तोरई, घियातोरई, मीठी तोरई और कडुवी तोरई आदि। घियातोरई को नेनुवा भी कहते हैं।

गुण—

तोरई—स्निग्ध और मधुर होती है। कफ़ और पित्त का नाश करती है। कोई-कोई तोरई किञ्चित वादी होती है। खाने में पथ्य और रुचिकारक होती है। इससे बल बढ़ता है और वीर्य की वृद्धि होती है।

तोरई—प्रकृति में शीतल किन्तु मधुर होती है। किञ्चित कफ़ पैदा करती है। कुछ वादी होती है। पित्त का नाश करती है। खाने में पाचक होती है। खाँसी को फ़ायदा करती है। ज्वर में उपयोगी होती है, कृमि का नाश करती है।

घियातोरई—स्निग्ध और सारक होती है। पित्त को शान्त करती है, वात को मिटाती है। रक्त-पित्त को दूर करती है।

घियातोरई—खाने में मधुर और स्निग्ध होती है। वात को बढ़ाती है और वृष्य होती है। कृमि उत्पन्न करती है। घाव को भरती है।

कडुवी तोरई—इसको कहीं-कहीं पर जंगली तोरई भी कहा जाता है। यह भेदक और कडुवी होती है। इसकी प्रकृति तीक्ष्ण और शीतल है। खाने में स्निग्ध होती है। हृदय को लाभ पहुँचाती है। अग्नि को तेज़ करती है। खाँसी को फ़ायदा करती है। अरुचि को मिटाती है। प्रमेह की बीमारी में उपयोगी।

परवल

परवल की बेल होती है, उसीमें इसके फल लगते हैं। हरे और कच्चे परवल नीले रंग के होते हैं। पकने पर वे लाल हो जाते हैं। इसकी बेल प्रायः जंगलों में अधिक पैदा होती है। इसकी दो क़िस्में होती हैं, एक मीठा परवल होता है और दूसरा कडुवा।

गुण—

परवल—खाने में अत्यन्त पाचक होता है। हृदय को हितकारी है। हलका और वृष्य होता है। अग्नि को उद्दीप्त करता है। किञ्चित गर्म और स्निग्ध होता है। खाँसी को दूर करता है। रुधिर के विकारों को मिटाता है। ज्वर में लाभ करता है। त्रिदोष का संहार करता है और कृमि का नाश करता है।

परवल—खाने से बल की वृद्धि होती है। यह खाने में स्वादिष्ट होता है। मल को साफ़ करता है पथ्य, पाचक और रुचिकारक होता है। शरीर को पुष्ट करता है। वात को शान्त करता है, पित्त का दमन करता है। ज्वर को मिटाता है। शोष और त्रिदोष का नाश करता है।

कडुवे परवल—खाने में कडुवे और तिक्त होते हैं। इनकी प्रकृति कुछ उष्ण और दस्तावर भी होती है। पित्त को दूर करने में उपयोगी होते हैं। कफ़ और कण्डू को मिटाते हैं। कुष्ठ तथा रुधिर के विकारों को शान्त करते हैं। ज्वर में फायदा करते हैं। दाह को मिटाते हैं। नेत्र-रोग में लाभकारी हैं। विष को शान्त करते हैं।

बैंगन

करेला की भाँति इसका पेड़ भी छोटा-सा होता है। इसको कुछ लोग बैंगन और कुछ लोग भाँटा तथा भंटा कहते हैं। इसकी तरकारी बनती है। कुछ लोग इसे कच्चा भी खाते हैं।

गुण—

बैंगन—कटु किन्तु रुचिकारक होता है। खाने में मधुर है। पित्त का नाश करता है। बल को बढ़ाता है। शरीर को पुष्ट करता है। हृदय को लाभ पहुँचाता है। वात प्रकृति वालों के लिए बहुत हानिकारक है।

बैंगन—नींद लाता है, प्रीतिकारक होता है। खाने में भारी और वादी होता है। खाँसी के विकार उत्पन्न करता है। कफ़ को बढ़ाता है। अरुचि उत्पन्न करता है। मल को रोकता है।

लम्बा बैंगन—अग्निवर्द्धक होता है। शुक्र उत्पन्न करता है। रक्त को बढ़ाता है। हल्लास, खाँसी और अरुचि के लिए विशेष हानिकारक न होते हुए भी किसी प्रकार अपाचक होता है।

कच्चा बैंगन—कफ़ और पित्त का नाश करता है।

पक्का बैंगन—क्षारयुक्त और पित्तल होता है।

मध्यम अवस्था का बैंगन—त्रिदोष नाशक होता है। रक्त-पित्त को शुद्ध करता है।

बैंगन का भरता—किञ्चित पित्तकारक होता है। कफ़, मेद और वात का नाश करता है। सारक और लघुतर होता है।

उपयोग—

बैंगन की तरकारी, उसका भरता, उसकी कलौंजी और पकौड़ी आदि अनेक प्रकार की खाने की चीज़ें बनाई जाती हैं किन्तु बैंगन वादी और अपाचक होने के कारण निर्बल तथा रोगी आदमियों को हानि पहुँचाता है।

सिंघाड़ा

सिंघाड़े की बेल बड़े-बड़े तालाबों में हुआ करती है। इसका फल तिकोनाकार होता है। सिंघाड़े के ऊपर उसके छिलके के तीन बड़े-बड़े काँटे होते हैं। सिंघाड़ा हमारे देश में बहुत पैदा होता है।

गुण—

सिंघाड़ा—प्रकृति में अत्यन्त शीतल और खाने में स्वादिष्ट होता है। इसके खाने से वीर्य की वृद्धि होती है। यह कषेला और मल रोधक होता है। शुक्र को बढ़ाता है, वात की वृद्धि करता है। कफ को उत्तेजित करता है। रक्त-पित्त और दाह को शान्त करता है।

सिंघाड़ा—खाने में हलका और वृष्यतम होता है। त्रिदोष को नाश करता है। ताप का निवारण करता है। श्रम को नाश करता है। रुचि को बढ़ाता है। पुरुषेन्द्रिय को दृढ़ करता है।

सिंघाड़ा—वात और कफ को बढ़ाता है। कषेला, मधुर और शीतल होता है। खाने से तृप्ति होती है। पित्त का नाश करता है। खाने में स्वादिष्ट होता। दाह को शान्त करता है। त्रिदोष को मिटाता है। प्रमेह को लाभ करता है। रुधिर के विकारों को शुद्ध करता है। श्रम, सूजन और सन्ताप को मिटाता है।

उपयोग—

सिंघाड़े को आग में पानी के साथ पका कर खाया जाता है। पक जाने पर उसका स्वाद सुन्दर और सोंधा हो जाता है।

मूली

मूली के पेड़ के दो हिस्से होते हैं, जड़ और पेड़ी। उसकी जड़, ज़मीन में होती है और मूली के पेड़ का शेष हिस्सा ऊपर होता है। उसकी जड़ ही मूली कहलाती है। इसकी जड़ अर्थात् मूली और पत्तियाँ अर्थात् डालियाँ, दोनों ही खाने और तरकारी के काम आती हैं।

गुण—

मूली—प्रकृति में तीक्ष्ण और कटुष्ण होती है। अग्नि को उद्दीप्त करती है। बवासीर की बीमारी में विशेष उपयोगी है। गुल्म और हृदय के रोग को लाभ पहुँचाती है। वात का नाश करती है। खाने में रुचिकारक और भारी होती है।

बड़ी मूली—किञ्चित् गर्म और चर्चरी होती है। खाने में स्वादिष्ट किन्तु कडुवी होती है। कफ और वात का नाश करती है। कृमि का संहार करती है, ग्राही और भारी होती है। प्रकृति में रूखी और त्रिदोष उत्पन्न करती है किन्तु उसी मूली को तेल में सिद्ध कर लेने से त्रिदोष को नाश करने वाली हो जाती है।

छोटी मूली—खाने में रुचिकारक होती है। हलकी और पाचक होती है। त्रिदोष का नाश करती है, स्वर और शुद्ध करती है। ज्वर और श्वास की बीमारी में फायदा करती है। नासिका के रोगों और कण्ठ की बीमारियों में उपयोगी होती है। नेत्र की बीमारी में लाभ करती है।

कच्ची मूली—भारी और विष्टम्भाकारी होती है, खाने में तीक्ष्ण और त्रिदोष उत्पन्न करती है किन्तु इसी को घृत में पका लेने से वात का नाश करती है, पित्त का दमन करती है। कफ को बढ़ाती है।

सूखी मूली—त्रिदोष का नाश करती है। शोथ का निवारण करती है। विष का नाश करती है। हलकी और पाचक होती है।

सब प्रकार की मूली—मूली साधारणतया, कड़ुवी और चरपरी होती है। किञ्चित् गर्म और रुचिकारक होती है। खाने में हलकी तथा पाचक होती है। अग्नि को तेज़ करती है। हृदय को लाभ पहुँचाती है। प्रकृति में मधुर और सारक होती है। शरीर में बल पैदा करती है। मूत्रदोष, बवासीर की बीमारी में फायदा करती है, गुल्म, क्षय श्वास, खाँसी को दूर करती है। नेत्र के रोगों को मिटाती है। नाभि की पीड़ा का नाश करती है। कफ, वात को शान्त करती है। कण्ठ के रोगों में औषधि का काम करती है। दाद, शूल और पीनस के रोगों को मिटाती है।

पुरानी मूली—वीर्य के लिए अहितकारी है, शोथ और दाह पैदा करती है, पित्त को बढ़ाती है और रुधिर के विकारों को उत्पन्न करती है।

उपयोग—

स्वाद और लाभ की दृष्टि से मूली बहुत उपयोगी शाक-फल है। कच्ची मूली से लेकर पक्की तक अनेक प्रकार से उसे खाया जाता है। कितनी ही तरह की उसकी तरकारी बनाई जाती है जो स्वादिष्ट, खाने में दोष-रहित और लाभकारी होती है।

मूली की पकौड़ियाँ बनाई जाती हैं जो विशेष प्रकार के स्वाद का परिचय देती हैं। इसके परेठे भी बनते हैं।

गाजर

गाजर, जंगली गाजर और गोल मूली आदि इसके कई एक नाम हैं। हमारे देश में गाजर की खेती होती है और बहुत-सी गाजर पैदा होती है। अनाज की भाँति इसको खाकर तृप्ति होती है। जो लोग इसकी खेती करते हैं, वे इसको कच्ची और पकी पेट भर-भरकर खाते हैं।

गाजर दो प्रकार की होती है। छोटी और बड़ी। छोटी गाजर जो शहरों में बिका करती है, खाने में अधिक स्वादिष्ट और मीठी होती है। बड़ी गाजर छोटी गाजर की अपेक्षा कम मीठी होती है। गाजर को छोटे और बड़े सभी लोग बड़े चाव से खाते हैं।

गुण—

गाजर—खाने में मधुर और तीक्ष्ण होती है। किंचित् गर्म होती है। अग्नि को तेज़ करती है, मल को रोकती है। रक्त पित्त में लाभ करती है। बवासीर का नाश करती है। कफ़ और वात को दूर करती है। संग्रणी में फ़ायदा करती है।

गाजर खाने में मधुर और रुचिकारक होती है। कफ़ का नाश करती है। शूल में फायदा करती है। दाह को मिटाती है। पित्त और तृषा को शान्त करती है।

गाजर—खाने में चरपरी और हृदय को हितकारी है। दुर्गन्ध का नाश करती है और गुल्म में फ़ायदा करती है। अग्नि को बढ़ाती है। खाने में स्वादिष्ट होती है।

उपयोग—

गाजर कची और पकी तो खाई ही जाती है, उसका मुरब्बा और अचार भी बनाया जाता है जो खाने में अत्यन्त स्वादिष्ट और लाभकारी होता है।

शक्कर और दूध तथा घी के साथ गाजर का हलुवा बनता है। जिसके खाने से शरीर में बल की वृद्धि होती है। रक्त बढ़ता है और मुख पर कान्ति पैदा होती है। जो लोग गाजर की खेती करते हैं वे लोग गाजर को उबालकर गायों, भैंसों और बैलों को खिलाते हैं जिससे वे खूब तगड़े और बलवान हो जाते हैं।

शकरकन्द

शकरकन्द रतालू, पिण्डालू और काँदू आदि इसके कई एक नाम हैं। गाजर की भाँति इसकी भी खेती होती है। और ज़मीन के भीतर मिट्टी में पैदा होती है।

गुण—

शकरकन्द—खाने में मीठी और मधुर होती है। श्रम का नाश करती है। पित्त को शान्त करती है। दाह का निवारण करती है। शरीर में बल उत्पन्न करती है। बदन को पुष्ट करती है। यह वृष्य और भारी होती है।

शकरकन्द—इसकी प्रकृति शीतल होती है मूत्रकृच्छ्र रोग का नाश करती है। जलन को शान्त करती है। प्रमेह में फ़ायदा करती है। इसके खाने से वीर्य की वृद्धि होती है। क्षुधा की तृप्ति होती है। शकरकन्द, शोषनाशक और भारी होती है। इससे कफ़ की वृद्धि होती है और वात कुपित होता है।

शकरकन्द कच्ची और पक्की दोनों तरह से खाई जाती है। कच्ची शकरकन्द खाने में कठोर होती है उसके गूदे में दूध का-सा अंश होता है। छोटे-छोटे लड़के और लड़कियाँ पेट-भर कर कच्ची शकरकन्द खाती हैं।

मुद्रक — रामस्वरूप गुप्त, अग्रवाल प्रेस, इलाहाबाद।

छात्रहितकारी पुस्तकमाला

दारागंज, प्रयाग ।

की

अनुपम पुस्तकें

१—ईश्वरीय-बोध

परमहंस स्वामी रामकृष्णजी के उपदेश भारत में ही नहीं, संसार भर में प्रसिद्ध हैं। उन्हीं के उपदेशों का यह संग्रह है। श्रीरामकृष्ण जी ने ऐसे मनोरञ्जक और सरल, सब की समझ में आने लायक बातों में प्रत्येक मनुष्य के। ज्ञान कराया है कि कुछ कहते नहीं बनता। प्रत्येक उपदेश पढ़ते समय ऐसा मालूम होता है मानो कोई कहानी पढ़ रहे हैं, छोड़ने को जी नहीं चाहता, परन्तु वही उपदेश हमारे जीवन को ईश्वर के एक हाथ और निकट पहुँचा देता है। सचमुच मनुष्य ऐसी पुस्तक पढ़कर अपने को उच्च बना लेता है। परिवर्द्धित संस्करण का मूल्य सिर्फ ॥।)

२—सफलता की कुंजी

अमेरिका, जापान आदि देशों में वेदान्त का डंका पीटने वाले तथा भारत माता का मुख उज्ज्वल करने वाले स्वामी रामतीर्थ को सभी जानते हैं। यह पुस्तक उन्हीं स्वामी जी के Secret of Success नामक अपूर्व लेख का अनुवाद है। पुस्तक क्या है जीवन से निराश और विमुख पुरुषों के लिये संजीवनी और नवयुवकों के लिये संसार में प्रवेश करने की वास्तविक कुंजी है। मूल्य ।)

३–मनुष्य जीवन की उपयोगिता

मनुष्य जीवन किस प्रकार सुखमय बनाया जा सकता है? इसकी उत्तम से उत्तम रीति आप जानना चाहते हैं तो एक बार इसे पढ़ जाइये। कितने सरल उपायों से पूर्ण सुखमय जीवन हो जाता है, यह आपको इसी पुस्तक से मालूम होगा। यह मूल पुस्तक तिब्बत के प्राचीन पुस्तकालय में थी, जहाँ के एक चीनी ने इसका अनुवाद चीनी भाषा में किया। फिर इसका योरुप की अँग्रेज़ी, फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं में अनुवाद हुए। आज दिन योरुप की प्रत्येक भाषा में इस हज़ारों संस्करण हो चुके हैं। हिन्दी अनुवाद का तीसरा संस्करण अभी हाल ही में छपा है। डेढ़ सौ पेज का पुस्तक का मूल्य ॥=)

४–भारत के दशरत्न

यह जीवनियों का संग्रह है। इसमें भीष्म पितामह, श्रीकृष्ण, पृथ्वीराज, महाराणा प्रतापसिंह, समर्थ रामदास, श्रीशिवाजी, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ के जीवनचरित्र बड़ी खूबी के साथ लिखे गये हैं। मूल्य ।=)

५–ब्रह्मचर्य ही जीवन है

इसको पढ़कर सच्चरित्र पुरुष तो सदैव के लिये वीर्य नाश से बचता ही है किन्तु पापात्मा भी निःसंशय पुण्यात्मा बन जाता है। व्यभिचारी भी ब्रह्मचारी बन जाता है। दुर्बल भी तथा दुरात्मा भी साधु हो जाता है। जो पुरुष अपने औषधियों का दास बनाकर भी जीवन लाभ नहीं कर सका है, उसे इस पुस्तक में बताये सरल नियमों का पालन कर अनन्त जीवन प्राप्त करना चाहिये। कोई भी ऐसा गृहस्थ या भारतपुत्र न होना चाहिये जिसके पास ऐसी उपयोगी पुस्तक की एक प्रति न हो। थोड़े ही समय में इसके आठ संस्करण हो चुके हैं। मूल्य ॥)

६—वीर राजपूत

यह उपन्यास एक ऐतिहासिक घटना को लेकर बड़े मनोरंजक ढंग से लिखा गया है। यदि राजपूताने के वीर राजपूतों के सच्चे पराक्रम और शूरवीरता की एक अपूर्व झलक आपको देखनी है, यदि आप यह जानना चाहते हैं कि एक सच्चा सदाचारी वीर पुरुष कैसे अपने उच्च-जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है तो उपन्यास को एक बार अवश्य पढ़ जाइये। सुन्दर तिरंगा कवर वाली पुस्तक का मूल्य १)

७—हम सौ वर्ष कैसे जीवें ?

भारतवर्ष में औषधालयों और औषधियों की कमी नहीं, फिर भी यहां के मनुष्यों की आयु अन्य देशों की अपेक्षा सबसे कम क्यों है ? औषधियों का विशेष प्रचार न होने हुये भी हमारे पूर्वजों की आयु सैकड़ों वर्ष की कैसे होती थी ? एक मात्र कारण यही है कि हमारे नित्य के खाने पीने, उठने बैठने के व्यवहारों में बर्तने योग्य कुछ ऐसे नियम हैं जिन्हें हम भूल गये हैं "हम सौ वर्ष कैसे जीवें ?" को पढ़ कर उस अनुसार चलने से मनुष्य सुखों का भोग करता हुआ १०० वर्ष तक जीवित रह सकता है। हिन्दी में इस विषय की आज तक कोई भी ऐसी पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई मूल्य १)

८—महात्मा टाल्स्टाय की वैज्ञानिक कहानियाँ

विज्ञान की शिक्षा देने वाली तथा अत्यन्त मनोरंजक पुस्तक मूल्य ।)

९—वीरों की सच्ची कहानियाँ

यदि आपको अपने प्राचीन भारत के गौरव का ध्यान है, यदि आप वीर और बहादुर बनना चाहते हैं, तो इसे पढ़िये।

इसमें अपने पुरुषाओं की सच्ची वीरता-पूर्ण यश गाथायें पढ़ कर आपका हृदय फड़क उठेगा, नसों में वीर रस प्रवाहित होने लगेगा, पुरुषाओं के गौरव का रक्त उबलने लगेगा। स्कूल में बालकों को इतिहास पढ़ाने में अपने पुरुषाओं की वीरतापूर्ण घटनाएं नहीं पढ़ाई जातीं। विदेशी पुरुषों की प्रशंसा के ही पाठ पाये जाते हैं। आवश्यकता है देश का कोई बालक ऐसे समय इस पुस्तक को पढ़ने से चूके। मूल्य केवल ॥=)

१०—आहुतियाँ

यह एक बिलकुल नये प्रकार की नयी पुस्तक है। देश और धर्म पर बलिदान होने वाले वीर किस प्रकार हँसते हँसते मृत्यु का आवाहन करते हैं? उनकी आत्मायें क्यों इतनी प्रबल हो जाती हैं? वे मर कर भी कैसे जीवन का पाठ पढ़ाते हैं? इत्यादि दिल फड़काने वाली कहानियाँ पढ़नी हों तो "आहुतियाँ" आज ही मँगा लीजिये। हिन्दी में ऐसा संग्रह कभी नहीं निकला था। एक एक कहानी वीर रस में सराबोर है। सभी पत्र-पत्रिकाओं ने मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा की है। मूल्य केवल ॥।)

११—जगमगाते हीरे

प्रत्येक आर्य संतान के पढ़ने लायक यह एक ही नयी पुस्तक है। इसमें राजा राममोहन राय से लेकर आज तक के भारत के प्रसिद्ध महापुरुषों की संक्षिप्त जीवनी दी गई है। यदि रहस्य-मयी, मनोरंजक, दिल में गुदगुदी पैदा करने वाली महापुरुषों की जीवन घटनाएं पढ़नी हैं यदि छोटी छोटी बातों से ही महापुरुष बनने की ज़रा भी अभिलाषा दिल में है तो एक बार अवश्य इस सचित्र पुस्तक को आप खुद पढ़िये और अपने स्त्री बच्चों को पढ़ाइये। मूल्य केवल १)

१२—पढ़ो और हँसो

विषय जानने के लिये पुस्तक का नाम ही काफ़ी है। एक एक लाइन पढ़िये और लोट पोट होते जाइये। आप पुस्तक अलग अकेले में पढ़ेंगे; पर दूसरे लोग समझेंगे कि आज किससे यह कहकहा हो रहा है। पुस्तक की तारीफ़ यह है कि पूरी मनोरंजक होते हुए भी अश्लीलता का कहीं नाम नहीं। यदि शिक्षा-प्रद मनोरंजक पुस्तक पढ़नी है तो इसे पढ़िये। मूल्य केवल ॥)

१३—कुसुम-कुञ्ज

कविवर गुरु भक्तसिंह 'भक्त' कृत कमनीय कविताओं का संग्रह है। ये कवितायें अपने ढंग की एकही हैं। मूल्य ।=)

१४—चारुचिन्तामणि कोष

इस पुस्तक में श्री गोस्वामी तुलसीदास जी के सब ग्रन्थों से उन भागों का संग्रह किया गया है जिनका सम्बन्ध श्री रामनाम से है। संग्रहकर्ता राम के परम भक्त श्री जयरामदास जी हैं। पुस्तक अपने ढंग की एक ही है। मूल्य ।-)

१५—मनुष्य शरीर की श्रेष्ठता

मनुष्य के शरीर के अंगों और उनके कार्य इस पुस्तक में बतलाये गये हैं। इसके पढ़ने से आपको पता चलेगा कि हम अपनी असावधानी, अपनी अनियमित रहन सहन से शरीर के अंगों को किस प्रकार विकृत कर डालते हैं। प्रत्येक मनुष्य के लिये इस पुस्तक का रखना आवश्यक है। मू० ।=)

१६—अनमोलरत्न

इसमें भारत के महात्मा बुद्ध से लेकर महाराजा रणजीत सिंह तक के १७ महापुरुषों के संक्षिप्त जीवनचरित बड़े ही

मनोरंजक ढंग से लिखे गये हैं। इस एक ही पुस्तक के पढ़ने से आप उन महात्माओं के संवन्ध की बहुत सी बातें जान जायँगे। यह पुस्तक 'गागर में सागर' वाली कहावत चरितार्थ करती है। ढाई सौ पृष्ठ के लगभग पुस्तक का मूल्य १।)

१७—एकान्तवास

नवयुवकोपयोगी कहानियों का अनुपम संग्रह है। एक २ कहानी से युवकों को सदाचार, सत्यता निर्भीकता, त्याग आदि अनेक गुणों की शिक्षा मिलती है। कहीं पर अश्लीलता नाम मात्र को भी नहीं है। इसे स्त्री, पुरुष, बच्चे, बुड्ढे सभी निस्संकोच भाव से पढ़ सकते हैं। हम दावे के साथ कहते हैं कि कहानियों का ऐसा पवित्र, निर्दोष साथ ही रुचिकर संग्रह अभी तक हिन्दी में नहीं निकला। अधिक क्या कहें, इसकी उत्तमता पढ़ने से ही ज्ञात होगी। टाइटिल पेज सुन्दर चित्र से भूषित है, डेढ़ सौ से पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य ॥)

१८—पृथ्वी की अन्वेषण की कथायें

इस पुस्तक में संसार के कठिन स्थलों की खोज करने वाले वीर अन्वेषकों की भीषण और रोमांचकारी यात्रायें बड़ी सजीव और रोचक भाषा में लिखी हैं। इनको पढ़कर प्रत्येक नवयुवक का हृदय फड़क उठता है। इस विषय पर हिन्दी में पुस्तकों का सर्वथा अभाव है। इस पुस्तक को अपनाना प्रत्येक साहित्य-प्रेमी का कर्त्तव्य है। लगभग २०० पृष्ठों की इतनी सुन्दर पुस्तक का मूल्य १)

१९—फल उनके गुण तथा उपयोग

पुस्तक का विषय नाम ही से प्रकट है। अभी तक इस विषय पर हिन्दी में क्या भारत की किसी भाषा में भी कोई

पुस्तक आज तक प्रकाशित नहीं हुई। यह बात निर्विवाद है कि फलाहार सब से उत्तम और निर्दोष आहार है। महात्मा गांधी फल पर ही रहते हैं। भारतीय ऋषि फलाहार ही से हज़ारों वर्ष जीवित रहते थे, रोग उनके पास नहीं फटकता था। परन्तु आज तक कोई ऐसी पुस्तक न थी जिससे लोग यह जान सकें कि कौन फल लाभकारी हैं और कौन विकार करनेवाले हैं। बहुत से रोग ऐसे हैं जो फलों के सेवन से ही अच्छे हो जाते हैं। अस्तु आप अपने तन मन और आत्मा को नीरोग रखना चाहें तो यह पुस्तक अवश्य पढ़ें। ब्रह्मचर्य की रक्षा करने वालों को तो यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिये। पुस्तक के लेखक ऐसे महानुभाव हैं जिन्होंने वर्षों के अनुभव, अध्ययन तथा अनुशीलन के बाद लिखी है। ढाई सौ से अधिक पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य केवल १।)

२०–स्वास्थ्य और व्यायाम

यह अपने ढंग की हिन्दी में एक ही पुस्तक है। आज दिन व्यायाम के अभाव से नवयुवकों के स्वास्थ्य और शरीर का किस प्रकार ह्रास हो रहा है, यह किसी से छिपा नहीं है परन्तु नवयुवकों को बतलाने वाली कोई ऐसी पुस्तक नहीं थी कि किस प्रकार के कसरत करके वे अपने शरीर को सुदृढ़ और स्वस्थ बनायें। इस पुस्तक के लेखक ने अपने निज के अनुभव तथा संसार प्रसिद्ध पहलवान सैंडो, मूलर तथा प्रो० राममूर्ति के अनुभवों के आधार पर लिखा है। इसमें लड़कों और स्त्रियों के उपयुक्त भी व्यायाम बतलाये गये हैं। व्यायाम की विधि बताने के साथ ही साथ चित्र भी दिये गये हैं जिससे व्यायाम करने में सहूलियत हो जाती है। यदि आप भी सैंडो और राममूर्ति की तरह हट्टे कट्टे मज़बूत बनना चाहते हैं तो इस पुस्तक

को पढ़ें और अपने मित्रों को भी पढ़ायें। मूल्य सजिल्द का १॥)

२१—धर्मपथ

प्रस्तुत पुस्तक में महात्मा गाँधी के ईश्वर, धर्म तथा नीति सम्बन्धी लेखों का संग्रह किया गया है जिन्हें उन्होंने समय समय पर लिखे हैं। यह सभी जानते हैं कि महात्मा गाँधी केवल राजनीतिक नेता ही नहीं, वरन् वर्तमान युग के धार्मिक सुधारक तथा युगप्रवर्तक हैं। ऐसे महात्मा के धार्मिक विचारों से परिचित होना प्रत्येक धर्मावलम्बी का परम कर्तव्य है। इसमें माहात्मा जी के लिखे निम्न लिखित लेख हैं :—

१—ईश्वर का अस्तित्व २—ईश्वर के सम्बन्ध में ३—महासभा और ईश्वर ४—मोक्षदाता राम ५—प्रार्थना किसे कहते हैं ? ६—प्रार्थना में विश्वास ७—शब्दों का अत्याचार ८—प्रभु बड़े या गुरु ? ९—अनन्य भक्त हनुमान १०—गीता ११—गीता और रामायण १२—तुलसीदास जी १३—ज्ञान की शोध में १४—भारत की सभ्यता १५—बौद्धों का सन्देश १६—वर्णाश्रम धर्म १७—हिन्दु धर्म के तीन सूत्र १८—हिन्दू धर्म की स्थिति १९—मूर्ति पूजा २०—बुद्धि बनाम श्रद्धा २१—वृक्ष पूजा २२—मरणोत्तर भोज २३—धर्म परिवर्तन या आत्मपरिवर्तन २४—सत्य २५—अहिंसा २६—ब्रह्मचर्य २७—अस्वाद २८—अस्तेय २९—अपरिग्रह ३०—अभय ३१—अस्पृश्यतानिवारण ३२—शारीरिक धर्म ३३—सर्व धर्म-सम भाव ३४—नम्रता ३५—व्रत की आवश्यकता ३६—यज्ञ ३७—चंद धार्मिक प्रश्न ३८—कुछ धार्मिक प्रश्न आदि। २०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य केवल ॥=)

२२—स्वास्थ्य और जलचिकित्सा

जलचिकित्सा के लाभों को सब लोगों ने एक स्वर से

स्वीकार किया है। इस विषय पर जनसाधारण के लिये कोई उपयोगी पुस्तक न थी। जो दो एक पुस्तकें हैं भी उनका मूल्य इतना अधिक है और वे इतनी क्लिष्ट भाषा में लिखी गई हैं कि सर्वसाधारण का उनसे लाभ उठाना एक तरह से कठिन ही है। परन्तु प्रस्तुत पुस्तक सब के लिये बहुत उपयोगी है। हिन्दी पाठकों के चिरपरिचित—बा० केदारनाथ गुप्त ने इस पुस्तक को लिखकर स्वास्थ्य और शरीर रक्षा की इच्छुक जनता का बड़ा उपकार किया है। इसमें निम्न लिखित विषय हैं:—

१—जलचिकित्सा के प्रवर्तक लुई कूने साहब २—जल और उसके गुण ३—मिट्टी और उसके गुण ४—पाँच तत्वों का बना हुआ शरीर कैसे काम करता है? ५—रोग किस प्रकार उत्पन्न होता है? ६—मैं नीरोग हूँ या रोगी? ७—औषधियों से हानियाँ ८—बच्चों की देख रेख ९—जलचिकित्सा के स्नान १०—हम क्या खायें क्या पियें? ११—कुछ भोजन प्रकार १२—जल-चिकित्सा करने वालों के लिए कुछ विशेष बातें १३—सब प्रकार के रोग और उनके उपचार १४—दाँत के रोग जुकाम खाँसी १५—आँख और कान की बीमारियाँ १६—स्त्रियों के रोग १७—फुटकर बीमारियाँ १८—लुई कूने द्वारा अच्छे किये हुए रोगी, आरोग्यता विषयक रिपोर्ट तथा धन्यवाद के पत्र, आदि। पौनेतीन सौ पृष्ठों वाली पुस्तक का मूल्य १॥)

महिला-हितकारी पुस्तक-माला

स्त्री और सौन्दर्य

यौवन और सौन्दर्य स्त्रियों के लिये परमात्मा की अनुपम देन है। परन्तु स्त्रियाँ अपनी असावधानी तथा अज्ञान से

२०-२५ वर्ष तक पहुँचते पहुँचते इससे हाथ धो बैठती हैं और जीवन भर शारीरिक और मानसिक कष्ट भोगती रहती हैं। प्रस्तुत पुस्तक सभी स्त्रियों के लिये बड़े काम की है चाहे वह युवावस्था में प्रवेश कर रही हों अथवा अपनी असावधानी से जिन्होंने यौवन को नष्ट कर डाला हो। इस पुस्तक में सौन्दर्य और स्वास्थ्य रक्षा के लिये ऐसे सुगम साधन तथा सरल व्यायाम बतलाये गये हैं जिनके नियमित रूप से बर्तने से ५० वर्ष की अवस्था तक पहुँचने पर भी स्त्रियाँ सुन्दरी और स्वस्थ बनी रह सकती हैं। इसमें निम्न लिखित विषय हैं:—

१—सुन्दरता क्या है? २—सुन्दरता की सृष्टि ३—स्त्रियों का सौन्दर्य प्रेम ४—स्वास्थ्य ही सच्चा सौन्दर्य है ५—क्या मैं फिर सुन्दरी बन सकती हूँ? ६—चेहरे से बुढ़ापा ज़ाहिर होने पर ७—उतरती हुई जवानी में सुन्दर रहने के उपाय ८—सौन्दर्य नष्ट होने के कारण ९—श्रद्धा सौन्दर्य की वृद्धि करती है १०—सुन्दरता के भेद ११—वह फिर सुन्दरी कैसे बन सकी १२—जीवन-भर स्त्री सुन्दर कैसे रह सकती है? १३—रूप और रंग का प्रभाव १४—सौन्दर्य उत्पन्न करने वाले व्यायाम १५—अधिक मोटापा १६—अधिक दुर्बलता १७—स्त्री के भिन्न-भिन्न अंग और उनका सौन्दर्य १८—सुन्दर स्त्री और भी सुन्दर कैसे बन सकती है? १९—बालों का सौन्दर्य २०—सौन्दर्य वृद्धि के लिए गहनों का प्रयोग २१—रूप और सौन्दर्य का महासागर २२—हमारा सौन्दर्य हमारे रक्त पर निर्भर है २३—शृंगार और सौन्दर्य २४—वस्त्रों का सौन्दर्य २५—ठोढ़ी और गर्दन का सौन्दर्य आदि।

इसमें तिरंगे तथा सादे सब मिलाकर लगभग ३० चित्र हैं। मोटे एंटिक कागज़ पर छपी सवा तीन सौ पृष्ठ की सुन्दर सजिल्द आकर्षक पुस्तक का मूल्य २॥) है।